॥ ॐ तत्सत् ॥

भावप्रकाशनिघण्टुः

श्री पं० गङ्गाविष्णुशास्त्रिनैचराजप्रणीत

टिप्पणीसहितः ।

श्रीमद्विद्यारत्नपण्डितभानुदत्तसंशोधितः ।

सोऽयं

पण्डितभानुदत्त गुरुदत्तेन,

श्रीकृष्णदासात्मज खेमराजेन

मुम्बय्यां

खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटालेन,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) मुद्रणयन्त्रालये

मुद्रयित्वा प्रकाशितः ।

संवत् १९७२, शके १८३७.

यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदासने बम्बई, खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटालेन, निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेसमें छापा, और यहीं प्रकाशित किया ।

विक्रय्य पुस्तकें-वैद्यक ग्रन्थ।

नाम.	कि०	रु० आ०
चक्रदत्त-भापाटीका सहित। इसमें और चिकित्साओंके अलावा तैल साधनादि प्रकार बहुत अच्छा लिखा है ...		२-०
चरकसंहिता-टकसाल निवासी वैद्यपञ्चानन पं० रामप्रसाद वैद्योपाध्यायकृत प्रसादनी भापाटीकासहित। चरकके आठोंस्थान एकसे एक अपूर्व होनेपर भी "चिकित्सास्थान" तो आद्वितीय है वैद्यमात्रको यह ग्रन्थ अवश्य संग्रह करना चाहिये		९-०
तिब्बअकबर-हकीम अकबर अलीखाँ लिखित तथा देवीप्रसाद-कृत हिन्दी भाषामें अनुवादित। इसमें-सब्बीस अध्यायोंमें सम्पूर्ण रोगोंका लक्षण और यूनान मतसे एक २ रोगोंपर सैकडों औषधोंका उपचार वर्णित है		७-०
त्रिशती-पं० वैद्यवल्लभभट्टविरचित संस्कृतटीका-तथा भापा-टीकासहित		~~१-०~~
बृहन्निघण्टुरत्नाकर-प्रथम भाग ३) तथा द्वितीय भाग....		३-८
बृहन्निघण्टुरत्नाकर-तृतीय भाग। (विविध रोगोंकी चिकित्साका संग्रह)		३-८
बृहन्निघण्टुरत्नाकर-चौथा भाग। (चिकित्साखण्ड)		२-८
बृहन्निघण्टुरत्नाकर-पञ्चम भाग। (रोगोंका कर्मविपाक)...		५-८
बृहन्निघण्टुरत्नाकर-पष्ठभाग। (रोगोंका चिकित्साभाग)		४-८
बृहन्निघण्टुरत्नाकर-सप्तम अष्टम भाग। संस्कृत, हिन्दी, बँगला, मराठी गौर्जरी, द्राविडी, आदि भापाओंमें सर्व औषधोंके नाम और गुणोंका वर्णन औषधियोंके चित्रोंसमेत.		८-०

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस-मुंबई.

॥ श्रीः ॥

भूमिका.

कोटिशः धन्यवाद हैं, उस सर्व शक्तिमान् पूर्णब्रह्म अविनाशी श्रीकृष्णचंद्र देवकीनंदनको कि जिनकी अतुल कृपासे भावप्रकाश निघण्टु सटिप्पणी छपकर तय्यार होगया है। आज कल आयुर्वैदिक चिकित्साकी अल्पज्ञता तथा समयके प्रभावसे चिकित्साशास्त्रमें बड़ी २ कठिनाइयें प्राप्त होगई हैं, जिनका यदि पूर्ण रूपसे वर्णन किया जाय तो एक इतना ही पुस्तक और लिखा जासकता है। उन कठिनाइयोंमेंसे सबसे बड़ी और आयुर्वैदिक चिकित्सासे सर्व साधारणको घृणाजनक कारणरूप कठिनाई एक मात्र शास्त्रोक्त औषधियोंका समझमें न आना, और भ्रममें पड़जाना है, क्योंकि हर एक औषधिका पहिले तो यथार्थ रूपसे पहिचानना कठिन होगया है, दूसरा यह भिन्न २ स्थानोंमें भिन्न २ नामोंसे पुकारी जाती हैं, जिससे सर्व साधारण तो क्या सामान्य वैद्य भी चकरा जाते हैं। और कई वैद्य भी विहित औषधिके स्थानमें विपरीत औषधि वरत लेते हैं, जिससे लाभके स्थानमें परम हानि होती है, और हानि होनेसे लोगोंका विश्वास उठता जाता है। इस त्रुटिको देख, चिरंजीव पं० बखशीराम वैद्य मैनेजर आयुर्वैदिक औषधालय सूत्रमंडी लाहोरने प्रार्थना की; कि कोई ऐसा उपाय कृपा करके निकालें कि जिससे औषधियोंका विज्ञान हो जाय।

उक्त वैद्यजीकी प्रार्थनाको स्वीकार कर अतीव परिश्रमद्वारा इस पुस्तकमें प्रत्येक औषधिके भिन्न २ नाम, जो भिन्न २ देशोंमें पुकारे जाते हैं २५ वर्ष के तजुरबेके अनंतर लिखे हैं, इस पुस्तकमें टिप्पणीके रूपमें प्रत्येक पृष्ठके नीचे हर एक औषधिका अंक देकर उसका हिन्दी नाम (जो पश्चिमोत्तर प्रदेशमें पुकारा जाताहै,) पंजाबी नाम, (जो पंजाबप्रांतमें कहलाता है) फारसी नाम, (यूनानियोंने जो नाम नियत किया है) बङ्गाली नाम,

(जो वङ्गालप्रान्तमें प्रसिद्ध है) लिखा है । और यथा लाभ अंगरेजी नाम भी लिख दिये हैं । और मूलमें भी यथाशक्ति न्यूनता पूर्ति की गई है । इसके अतिरिक्त एक परिशिष्टमें उन औषधियोंकी नामावली दी है, जो निघण्टुके मूलमें नहीं आई । यह परिशिष्ट पहिले संस्कृत फिर भाषाके रूपमें है और फिर भाषा नामोंका संस्कृतमें अनुवाद किया है जिससे यह पुस्तक ३०० पृष्ठोंसे भी अधिक होगई है । और हमारी सम्मतिसे निस्संदेह अब पूर्वोक्त त्रुटियोंको पूर्ण करनेके योग्य है ।

इस पुस्तक के छापनेमें मेरे परम मित्र श्रीयुत विद्यारत्न पण्डित भानुदत्तजी बी० एम, परमोदार सर्वविद्या विभूषित पण्डितवर गवर्नमेण्टपेनशनर, संस्कृताध्यापक एचीसन चीफ़स कालिज लाहौरने परोपकार दृष्टिसे प्रकाशित करनेका भार अपने ऊपर लेकर उत्तम, मोटे, और चिकने कागज पर निजव्ययसे छपवाया है, और सर्व साधारणके सुभीतेके लिए ३०० पृष्ठसे भी बड़ी पुस्तकका मूल्य केवल १॥) रुपया रक्खा है और प्रूफ संशोधन करनेमें भी सहायता प्रदान की है जिससे मैं उनका अतीव कृतज्ञ हूँ ।

अंतमें विद्वज्जन मंडलीकी सेवामें सविनय निवेदन है, कि इसके प्रचार, और विशेष करके आयुर्वेदिक विद्यार्थियोंको इसके पढ़नेका उद्योग दिलाकर ग्रंथकर्त्ताके उत्साहको वर्धन करें ।

आपका—

पं० गंगाविष्णु शास्त्री वैद्यराज.

द्वितीयावृत्तिकी भूमिका !

अथर्ववेदमें देव ग्रहादिपूजन, प्रायश्चित्त, उपवास आदिके अनन्तर देहको आरोग्य रखनेके लिये चिकित्साका उपदेश किया है। द्रव्य, गुण, कर्मके विचार करनेसे आरोग्य लाभ होताहै। किस द्रव्यमें क्या गुण है उसकी इतिकर्तव्यता किस प्रकारसे है इतना जानलेना सभीको आवश्यक है। वात पित्त कफ अथवा इनके संयोगसे हुई प्रकृतियोंके अनुकूल पदार्थोंके सेवन करनेसे देहमें रोग नहीं होसकते कदाचित् विरुद्ध पदार्थोंके सेवनसे रोग हो भी जावें तो सुचिकित्सासे शीघ्र नष्ट होसकते हैं। यही सब विचार करके आयुर्वेदतत्त्वज्ञ भावमिश्रने अपने निर्मित भावप्रकाशमें नाना प्रकारके अन्न, शाक, फल, मूल, जल, दही, दूध, शर्करा आदि नित्यके उपयोगी प्रायः सभी पदार्थोंके गुण अवगुण कहे हैं। उसी भावप्रकाशमेंसे संग्रहकर यह **भावप्रकाशनिघण्टु** बनाया गया है। यह ऐसा उत्तम निघण्टु बना है कि वैद्य तथा अन्य आयुर्वेदप्रेमी मनुष्योंने इसको अत्यन्त आदरसे पठन पाठन आदिकार्यमें ग्रहण किया है। इसके द्वारा देशवासियोंका जो उपकार हुआ है इसके लिये उक्तवैद्यराजके लोग अत्यन्त उपकृत और ऋणी हैं। ऐसे सर्व प्रिय—सर्वमान्य निघण्टुका सर्वत्र सुलभ प्रचार हो इस इच्छासे हमने इसकी यह द्वितीयावृत्ति अपने "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेसमें मुद्रित की है पूर्वावृत्तिमें जो दोष मुद्रण होते समय होगये थे वह सब पण्डितों द्वारा शुद्ध कराकर यह द्वितीयावृत्ति प्रकाशित की है। आशा है कि आरोग्यको सबसे अधिक लाभ समझनेवाले नीतिज्ञ पुरुष तथा आयुर्वेदविद्याप्रेमी इसका संग्रह कर लाभ उठावेंगे।

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" यन्त्रालयाध्यक्ष,
बम्बई.

॥ श्रीः ॥

अथ भावप्रकाशनिघण्टुस्थ वर्गोंकी सूची ।

अथ भावप्रकाशनिघण्टुस्थ सर्व औषधियोंकी अकारादिसूची

(१६) भावप्रकाशनिघण्टुस्थ–औ० अकारादिसूची ।

इत्यकारादिसूची समाप्ता ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

भावप्रकाशनिघण्टुः ।

टिप्पणीसहितः ।

भिषजामुपकाराय निघण्टोरुपरि कृता ।
टिप्पणी वैद्यराजेन गंगापूर्वकविष्णुना ।

अथ प्रथमं हरीतक्या उत्पत्तिर्नाम लक्षणं गुणाश्च ।

दक्षं प्रजापतिं स्वस्थमश्विनौ वाक्यमूचतुः ।
कुतो हरीतकी जाता तस्यास्तु कति जातयः ॥ १ ॥
[1]रसाः कति समाख्याताः कति चो[2]परसाः स्मृताः ।
नामानि कति चोक्तानि किंवा तासां च लक्षणम् ॥ २ ॥
के च [3]वर्णा गुणाः के च का च कुत्र प्रयुज्यते ।
केन [4]द्रव्येण संयुक्ता कांश्च [5]रोगान्व्यपोहति ॥ ३ ॥
प्रश्नमेतं यथा पृष्टं भगवन्वक्तुमर्हसि ।
अश्विनोर्वचनं श्रुत्वा दक्षो वचनमब्रवीत् ॥ ४ ॥

उत्पत्तिः ।

पपात बिन्दुर्मेदिन्यां शक्रस्य पिबतोऽमृतम् ।
ततो [6]दिव्या समुत्पन्ना सप्तजातिर्हरीतकी ॥ ५ ॥

---

१ रसाः मुख्यरसाः तुवरादयः । २ उपरसाः गौणरसाः कट्वादयः
३ वर्णाः पीतादयः जीवन्ती स्वर्णवर्णिनीत्यादि । ४ लवणेन कफमित्यादि
५ अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रमित्यादि । ६ दिव्या हरीतकी ।

नाम ।

हरीतक्यभया पथ्या कायस्था पूतनामृता ।
हैमवत्यव्यथा चापि चेतकी श्रेयसी शिवा ॥
वयस्था विजया चापि जीवन्ती रोहिणीति च ॥ ६ ॥

जातयः ।

विजया रोहिणी चैव पूतना चामृताभया ।
जीवन्ती चेतकी चेति पथ्यायाः सप्त जातयः ॥ ७ ॥

लक्षणम् ।

अलाबुवृत्ता विजया वृत्ता सा रोहिणी स्मृता ।
पूतनास्थिमती सूक्ष्मा कथिता मांसलामृता ॥ ८ ॥
पंचरेखाभया प्रोक्ता जीवन्ती स्वर्णवर्णिनी ।
त्रिरेखा चेतकी ज्ञेया सप्तानामियमाकृतिः ॥ ९ ॥

गुणाः ।

विजया सर्वरोगेषु रोहिणी व्रणरोपणी ।
प्रलेपे पूतना योज्या शोधनार्थेऽमृता हिता ॥ १० ॥
अक्षिरोगेऽभया शस्ता जीवन्ती सर्वरोगहृत् ।
चूर्णार्थे चेतकी शस्ता यथायुक्तं प्रयोजयेत् ॥ ११ ॥
चेतकी द्विविधा प्रोक्ता श्वेता कृष्णा च वर्णतः ।
षडंगुलायता श्वेता कृष्णा त्वेकांगुला स्मृता ॥ १२ ॥
काचिदास्वादमात्रेण काचिद् गंधेन भेदयेत् ।
काचित्स्पर्शेन दृष्ट्यान्या चतुर्धा भेदयेच्छिवा ॥ १३ ॥
चेतकी पादपच्छायामुपसर्पन्ति ये नराः ।
भिद्यन्ते तत्क्षणादेव पशुपक्षिमृगादयः ॥ १४ ॥
चेतकी तु धृता हस्ते यावत्तिष्ठति देहिनः ।

---

१ देश भाषा हरड फारसी हलेला ज़र्द । अङ्गरेजी मिरोबेलैन्स balons ।
२ कृष्णा जङ्ग हरड ।

तावत् भिद्येत वेगैस्तु प्रभावान्नात्र संशयः ॥ १५ ॥
नृपादिसुकुमाराणां कृशानाम्भेषजद्विषाम् ।
चेतकी परमा शस्ता हिता सुखविरेचनी ॥ १६ ॥
सप्तानामपि जातीनाम्प्रधानं विजया स्मृता ।
सुखप्रयोगा सुलभा सर्वरोगेषु शस्यते ॥ १७ ॥
हरीतकी पञ्चरसाऽलवणा तुवरा परम् ।
रूक्षोष्णा दीपनी मेध्या स्वादुपाका रसायनी ॥ १८ ॥
चक्षुष्या लघुरायुष्या बृंहणी चानुलोमनी ।
श्वासकासप्रमेहार्शःकुष्ठशोथोदरक्रुमीन् ॥ १९ ॥
वैसर्प्यग्रहणीरोगविबन्धविषमज्वरान् ।
गुल्माध्मानव्रणच्छर्दिहिक्काकंठहृदामयान् ॥ २० ॥
कामलां शूलमानाहं प्लीहानं च यकृद्गदम् ।
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च मूत्राघातं च नाशयेत् ॥ २१ ॥
स्वादुतिक्तकषायत्वात् पित्तहृत्कफहृत्तु सा ।
कटुतिक्तकषायत्वादम्लत्वाद्वातहृच्छिवा ॥ २२ ॥
पित्तकृत्कटुकाम्लत्वात् वातकृन्न कथं शिवा ।
प्रभावाद्दोषहंतृत्वं सिद्धं यत्तत्प्रकाश्यते ॥ २३ ॥

---

१ उत्पत्तिस्थानं—विंध्याद्रौ विजया हिमाचलभवा स्याच्चेतकी पूतना सिंधौ स्यादथ रोहिणी तु विजया जाता प्रतिष्ठानके[1] । चंपायाममृताऽभया च जनिता देशे सुराष्ट्राह्वये जीवन्तीति हरीतकी निगदिता सप्तप्रभेदा बुधैः ॥ १ ॥ अम्लभावाज्जयेद् वातं पित्तं मधुरतिक्तता । कफरूक्षकषायत्वात्त्रिदोषघ्नी ततोऽभया ॥ २ ॥ हरीतकी मनुष्याणां मातेव हितकारिणी । कदाचित्कुप्यते माता नोदरस्था हरीतकी ॥ ३ ॥ हरस्य भवने जाता हरिता तु स्वभावतः । हरेत्तु सर्वरोगांश्च तेन प्रोक्ता हरीतकी ॥ ४ ॥ हरीतक्याः स्मृतं बीजं चक्षुष्यं गुरु वातनुत् । पित्तनाशकरं चैव मुनिभिः परिकीर्तितम् ॥ ५ ॥

---

१ प्रतिष्ठानपुरं विठूर झांसी इति प्रसिद्धम् ।

हेतुभिः शिष्यबोधार्थं पूर्वं तु क्रियतेऽधुना ।
कर्म्मान्यत्वं गुणैःसाम्यन्दृष्टमाश्रयभेदतः ॥ २४ ॥
यतस्ततो नेति चिंत्यं धात्रीलकुचयोर्यथा ।
पथ्यायां मज्ज निस्वादु स्नायावम्लो व्यवस्थितः ॥ २५ ॥
वृंते तिक्तस्त्वचि कटुरस्थिस्थः तुवरो रसः ।
नवा स्निग्धा घना वृत्ता गुर्वी क्षिता च यांभसि ॥ २६ ॥
निमज्जेत्सा सुप्रशस्ता कथितातिगुणप्रदा ।
नवादिगुणयुक्तत्वं तथैवात्र द्विकर्षता ।
हरीतक्याः फले यत्र द्वयं तच्छ्रेष्ठमुच्यते ॥ २७ ॥
चर्विता वर्द्धयत्यग्निं पेषिता मलशोधनी ॥
स्विन्ना संग्राहिणी पथ्या भृष्टा प्रोक्ता त्रिदोषनुत ॥ २८ ॥
उन्मीलिनी बुद्धिबलेन्द्रियाणां
निर्मूलिनी पित्तकफानिलानाम् ।
विस्रंसिनी मूत्रशकृन्मलानां
हरीतकी स्यात्सह भोजनेन ॥ २९ ॥
अन्नपानकृतान्दोषान्वातपित्तकफोद्भवान् ।
हरीतकी हरत्याशु भुक्तस्योपरि योजिता ॥ ३० ॥
लवणेन कफं हंति पित्तं हन्ति सशर्करा ।
घृतेन वातजान्रोगान्सर्वरोगान्गुडान्विता ॥ ३१ ॥
सिंधू*त्थशर्करा शुंठी कणा मधुगुडैः क्रमात् ।
वर्षादिष्वभया प्राश्या रसायनगुणैषिणा ॥ ३२ ॥
अध्वातिखिन्नो बलवर्जितश्च रूक्षः कृशो लंघनकर्षितश्च ।
पित्ताधिकोगर्भवतीचनारीविमुक्तरक्तस्त्वभयान्नखादेत् ३३

---

१ अधुना पूर्वं द्वित्रिपत्रेषु प्रभाववर्णनं कृतं क्रियते वर्तमानसमीपे वर्तमानवत् । २ लकुचं, बडहल बाडेऊ इति प्रसिद्धम् । ३ स्नायौ मध्यतन्तौ । ४ वृंतं प्रसवबंधनमित्यमरः । * सिंधूत्थं, सैंधवं लवणम् । वर्षादिषु षट् ऋतुषु हरीतकीप्रयोगः ।

विभीतकः ।

विभीतकस्त्रिलिङ्गः स्यादक्षः कर्षफलस्तथा ।
कलिद्रुमो भूतवासस्तथा कलियुगालयः ॥ ३४ ॥
विभीतकं स्वादुपाकं कषायं कफपित्तनुत् ।
उष्णवीर्य्यं हिमस्पर्शं भेदनं कासनाशनम् ॥ ३५ ॥
रूक्षं नेत्रहितं केश्यं कृमिवैस्वर्य्यनाशनम् ।
विभीतमज्जातृट्छर्दिकफवातहरी लघुः ॥ ३६ ॥
कषाया मदकृच्चाथ धात्रीमज्जापि तद्गुणा ।

आमलकी ।

वयस्यामलकी वृष्या जातीफलरसं शिवम् ॥ ३७ ॥
धात्रीफलं श्रीफलं च तथामृतफलं स्मृतम् ।
त्रिष्वामलकमाख्यातं धात्री तिष्यफलामृता ॥ ३८ ॥
हरीतकीसमं धात्री फलं किन्तु विशेषतः ।
रक्तपित्तप्रमेहघ्नं परं वृष्यं रसायनम् ॥ ३९ ॥
हंति वातं तदम्लत्वात्पित्तं माधुर्य्यशैत्यतः ।
कफं रूक्षकषायत्वात्फलं धात्र्याः त्रिदोषजित् ॥ ४० ॥
यस्ययस्य फलस्येह वीर्य्यं भवति यादृशम् ।
तस्यतस्यैव वीर्य्येण मज्जानामपि निर्द्दिशेत् ॥ ४१ ॥

---

१ देशभाषा वहेड़ा । फारसी बलेले । अङ्गरेजी मेरोवेलन् वेलिरिक । Myrevallan BelliriRi । २ देशभाषा आमला फारसी अम्लिज्ञ । अङ्गरेजी ऐंविलक मिरो वेलन् । Emblic Myropalan आमलस्य फलं शुष्कं तिक्तमम्लं कटु स्मृतम् । मधुरं तुवरं केश्यं भग्नसंधातकारकम् ॥ १ ॥ धातुवृद्धिकरं रोच्यं लेपनात्कांतिकारकम् । पित्तंकफं तृषां घर्म मेदोरोगं विषं तथा । त्रिदोषं नाशयत्येव पूर्वाचार्य्यैर्निरूपितम् ॥ २ ॥ तन्मज्जा प्रदरच्छर्दिवातपित्तज्वरापहा । कषायमधुरा वृष्या श्वासकासनिबर्हणा ॥ ३ ॥

त्रिफला[१] ।

पथ्या विभीतधात्रीणां फलैः स्यात्त्रिफला समैः ।
फलत्रिकं च त्रिफला सा वरा च प्रकीर्तिता ॥ ४२ ॥
त्रिफला कफपित्तघ्नी मेहकुष्ठहरा सरा ।
चक्षुष्या दीपनी रुच्या विषमज्वरनाशिनी ॥ ४३ ॥

शुंठी[२] ।

शुंठी विश्वा च विश्वं च नागरं विश्वभेषजम् ।
ऊषणं कटु भद्रं च शृंगवेरं महौषधम् ॥ ४४ ॥
शुंठी रुच्यामवातघ्नी पाचनी कटुका लघुः ।
स्निग्धोष्णा मधुरा पाककफवातविबंधनुत् ॥ ४५ ॥
वृष्या स्वर्य्या वमिश्वासशूलकासहृदामयान् ।
हंति श्लीपदशोफार्शआनाहोदरमारुतान् ॥ ४६ ॥
आग्नेयगुणभूयिष्ठं तोयांशं परिशोषयेत् ।
संगृह्णाति मलं तत्तु ग्राहि शुंठ्यादयो यथा ॥ ४७ ॥
विबंधभेदनी या तु सा कथं ग्राहिणी भवेत् ।
शक्तिर्विबंधभेदेऽस्या यतो न मलपातने ॥ ४८ ॥

आर्द्रकम्[३] ।

आर्द्रकं शृंगवेरं स्यात्कटु भद्रं तथार्द्रिका ।
आर्द्रिका भेदनी गुर्वी तीक्ष्णोष्णा दीपनी मता ॥ ४९ ॥

---

१ त्रिफला द्विविधा—लघ्वी, महती च, खजूर, फालसा, जिरिष्क, छोटी । पथ्या विभीतकं धात्री महती त्रिफला मता । स्वल्पा काश्मीरखर्जूरपरूषकफलै-र्भवेत् ॥ १ ॥ २ देशभाषा सुंड, फारसी जंजबील, अङ्गरेजी डाईजञ्जर Dygingər ३ देश भाषा अदरक । फारसी जिंजिबिलिरतबा । अङ्गरेजी जिंजरुट् Gingerroot, वातपित्तकफेभानां शरीरं वनचारिणाम् । एक एव नि-हंत्यत्र लवणार्द्रककेसरी ॥ १ ॥

कटुका मधुरा पाके रूक्षा वातकफापहा ।
ये गुणाः कथिताः शुंठ्यां तेपि संत्यार्द्रकेखिलाः ॥ ५० ॥
भोजनाग्रे सदा पथ्यं लवणार्द्रकभक्षणम् ।
अग्निसंदीपनं रुच्यं जिह्वाकंठविशोधनम् ॥ ५१ ॥
कुष्ठे पांड्वामये कृच्छ्रे रक्तपित्ते व्रणे ज्वरे ।
दाहे निदाघशरदोर्नैव पूजितमार्द्रकम् ॥ ५२ ॥

पिप्पली[1] ।

पिप्पली मागधी कृष्णा वैदेही चपला कणा ।
उपकुल्योषणा शौंडी कोला स्यात्तीक्ष्णतंडुला ॥ ५३ ॥
पिप्पली दीपनी वृष्या स्वादुपाका रसायनी ।
अनुष्णा[2] कटुका स्निग्धा वातश्लेष्महरी लघुः ॥ ५४ ॥
पिप्पली रेचनी हंति श्वासकासोदरज्वरान् ।
कुष्ठप्रमेहगुल्मार्शःप्लीहशूलाममारुतान् ॥ ५५ ॥
आर्द्रा कफप्रदा स्निग्धा शीतला मधुरा गुरुः ।
पित्तप्रशमनी सा तु शुष्का पित्तप्रकोपनी ॥ ५६ ॥
पिप्पली मधुसंयुक्ता मेदःकफविनाशिनी ।
श्वासकासज्वरहरी वृष्या मेध्याग्निवर्द्धनी ॥ ५७ ॥

—(केवदेवीये) अंकुरं शृंगवेरस्य रक्तजिच्छ्लेष्मवातहृत् । अव्यक्तरसवीर्यत्वा त्तत्परं तु कफापहम् ॥ २ ॥ कांजिकार्द्रं सलवणं दीपनं पाचनं परम् । वातश्लेष्मविबंधघ्नं विशेषादामवातनुत् ॥ ३ ॥ वातश्लेष्महरं रुच्यं दीपनं पाचनं पर लकुचस्य रसे क्षिप्तमार्द्रकं मुखशोधनम् ॥ ४ ॥

१ देशभाषा मध, फारसी पिलिपलादराज, अङ्गरेजी लांग पीप्पर Pepper Long पिप्पली त्रिविधा, १ गजपिपली, २ जलपिप्पली, ३ पिप्पली च । कटूष्णं ल तच्छुष्कमवृष्यं कफवातजित् । नात्युष्णं नातिशीतं च वीर्य्यतो मारिचं सितम् ॥ १ गुणवन्मारिचेभ्यश्च चक्षुष्यं च विशेषतः । २ अनुष्णा, ईषदुष्णा दे० भा छोटी पीपल ।

जीर्णज्वरेऽग्निमांद्ये च शस्यते गुडपिप्पली ।
कासाजीर्णारुचिश्वासहृत्पांडुक्रिमिरोगनुत् ॥ ५८ ॥
द्विगुणः पिप्पलीचूर्णाद्गुडोत्र भिषजां मतः ॥

मरिचम् ।[1]

मरिचं * वेल्लजं कृष्णमूषणं धर्मपत्तनम् । * वल्लिजमित्यपपाठः
मरिचं कटुकं तीक्ष्णं दीपनं कफवातजित् ॥ ५९ ॥
उष्णं पित्तकरं रूक्षं, श्वासशूलक्रिमीन् हरेत् ।
तदार्द्रं मधुरं पाके नात्युष्णं कटुकं गुरु ॥ ६० ॥
किंचित्तीक्ष्णगुणं श्लेष्मप्रसेकि स्यादपित्तलम्[2] ।

त्रिकटु ।

विश्वोपकुल्या मरिचं त्रयं त्रिकटु कथ्यते ॥ ६१ ॥
कटुत्रिकं तु त्रिकटु त्र्यूषणं व्योषमुच्यते ।
त्र्यूषणं दीपनं हंति श्वासकासत्वगामयान् ॥ ६२ ॥
गुल्ममेहकफस्थौल्यमेदःश्लीपदपीनसान् ।

पिप्पलीमूलम्[3] ।

ग्रंथिकं पिप्पलीमूलमूषणं चटकाशिरः ॥ ६३ ॥
दीपनं पिप्पलीमूलं कटूष्णं पाचनं लघु ।
रूक्षं पित्तकरं भेदि कफवातोदरापहम् ॥ ६४ ॥
आनाहप्लीहगुल्मघ्नं क्रिमिश्वासकफापहम् ।

---

१ दे० भा० काली मरिच फा० पिल पिले अस्वद हलपिले गिर्द इं० ब्लाक् पेपर BlacrrTpper । शोभांजनबीजं श्वेतमरिचं केचिद्वदंति । कटूष्णं श्वेतमरिचं विषघ्नं भूतनाशनम् । अवृष्यं दृष्टिरोगघ्नं युक्तं चैव रसायनम् ॥ १ ॥ राजनिघंटु । २ अपित्तलम् ईषत्पित्तलम् ईषदर्थे नञ् । ३ दे० भा० पिपलामूल फा० फिलफिल मोया इं० पाइपररूट् Piper root. ।

चतुरूषणम् ।

त्र्यूषणं सकणामूलं कथितं चतुरूषणम् ॥ ६५ ॥
व्योषस्यैव गुणाः प्रोक्ता अधिकाश्चतुरूषणे ।

चव्यम्[1] ।

भवेच्चव्यन्तु चविका कथिता सा तथोषणा ॥ ६६ ॥
कणामूलगुणं चव्यं विशेषाद्गुदजापहम् ।

गजपिप्पली[2] ।

चविकायाः फलं प्राज्ञैः कथिता गजपिप्पली ॥ ६७ ॥
कपिवल्ली कोलवल्ली श्रेयसी वशिरश्च सा ।
गजकृष्णा कटुर्वातश्लेष्महृद्वह्निवर्धिनी ॥ ६८ ॥
उष्णा निहंत्यतीसारं श्वासकण्ठामयकृमीन् ।

चित्रकः[3] ।

चित्रकोऽनलनामा च पाठी व्यालस्तथोषणः ॥ ६९ ॥

---

१ दे, भा, चवक । बंग, भा, चईगछ । चव्यपुष्पं गरश्वासकासक्षयविनाशनम् । (मदनपाल) तंत्रांतरे—चव्यं तु चविका चाथ विंबीगुंजे तु कृष्णला । चविका कटु तिक्तोष्णा दीपनी पाचनी लघुः ॥ १ ॥ कफपित्तहरी चैव किंचिद्वात प्रकोपनी । अस्य शाकं श्लेष्मपित्तजित् । लैटनभा, एक्स वर्धी आईपाइपर चव । Chavica Ezwhraiaye piper chava. २ दे० भा० गजपीपल, वड़ीपीपल । सैंहली, पिप्पली, वनपिप्पली, मरकिटपिप्पलीत्यादयः पृथग्गुणाः । वं० भा० गजपिपुल लै० भा० प्लैंटेगोएंप्लक्सिको लिससिन्डाप्सन् जोफिसिनेलिम् । Pluntago amplexcaulis scanpans officinalis. ३ दे० भा० चित्रा फा० वेखबरंदा इं० पलं विगो कौरुलेऐसो । चित्रको द्विविधः कृष्णरक्तभेदात् (रक्त चित्रक नाम) कालो व्यालः कालमूलीति दीप्यो मार्जारो ग्निर्दाहकः पावकश्च । चित्रांगोप्यारक्तचित्रो महांगाः स्याद्रुद्राह्वश्चिलकोन्यो गुणाढ्यः । तच्छाकं लघु संग्राहि कफपित्तविनाशनम् ॥ कैवदेवीये ।

चित्रकः कटुकः पाके वह्निकृत्पाचनो लघुः ।
रूक्षोष्णो ग्रहणीकुष्ठशोथार्शःकृमिकासनुत् ॥ ७० ॥
वातश्लेष्महरो ग्राही वातार्शःश्लेष्मपित्तहृत् ॥

पंचकोलम् ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः ॥ ७१ ॥
पंचभिः कोलमात्रं यत्पंचकोलं तदुच्यते ।
पंचकोलं रसे पाके कटुकं रुचिकृन्मतम् ॥ ७२ ॥
तीक्ष्णोष्णं पाचनं श्रेष्ठं दीपनं कफवातनुत् ।
गुल्मप्लीहोदरानाहशूलघ्नं पित्तकोपनम् ॥ ७३ ॥

षडूषणम् ।

पंचकोलं समरिचं षडूषणमुदाहृतम् ।
पंचकोलगुणं तत्तु रूक्षमुष्णं विषापहम् ॥ ७४ ॥

यवानिका[१] ।

यवानिकोग्रगंधा च ब्रह्मदर्भाजमोदिका ।
सैवोक्ता दीप्यका दीप्या तथा स्याद्यवसाह्वया ॥ ७५ ॥
यवानी पाचनी रुच्या तीक्ष्णोष्णा कटुका लघुः ।
दीपनी च तथा तिक्ता पित्तला शुक्रशूलहृत् ॥ ७६ ॥
वातश्लेष्मोदरानाहगुल्मप्लीहकृमिप्रणुत् ।

अजमोदा[२] ।

अजमोदा खराश्वा च मायूरो दीप्यकस्तथा ॥ ७७ ॥
तथा ब्रह्मकुशा प्रोक्ता कारवी लोचमस्तका ।

---

१ दे० भा० अजवाइन । फा० नानुखा इं० बिशप्स वीडसीड Bishop's Weed Seed. २ दे० भा० अजमोदा अजवाइन वल्लजवाइन, फा० करपस, इं० सेलेरी सीड । Clergy seed

अजमोदा कटुस्तीक्ष्णा दीपनी कफवातनुत् ॥ ७८ ॥
उष्णा विदाहिनी हृद्या वृष्या बलकरी लघुः ।
नेत्रामयकफच्छर्दिहिक्काबस्तिरुजो हरेत् ॥ ७९ ॥

[1]पारसीकयवानी ।

पारसीकयवानी तु यवानीसदृशा गुणैः ।
विशेषात्पाचनी रुच्या ग्राहिणी मादिनी गुरुः ॥ ८० ॥

शुक्ल[2]जीरकं कृष्ण[3]जीरकमुप[4]कुञ्ची ।

जीरको जरणोजाजी कणा स्याद्दीर्घजीरकः ।
कृष्णजीरः सुगंधिश्च तथैवोद्गारशोधनः ॥ ८१ ॥
कालाजाजी तु सुषवी कालिका चोपकालिका ।
पृथ्वीका कारवी पृथ्वी पृथुः कृष्णोपकुंचिका ॥ ८२ ॥
उपकुंची च कुंची च बृहज्जीरकमित्यपि ।
जीरकत्रितयं रूक्षं कटूष्णं दीपनं लघु ॥ ८३ ॥
संग्राहि पित्तलं मेध्यं गर्भाशयविशुद्धिकृत् ।

पारसीका यवानी स्याच्चौहारो जंतुनाशनः । पारसी यावनी गंधच्छारश्च खरपुष्पका । (खुरासानी) यवानी यावनी तीव्रा तुरुष्का मदकारिणी । दीप्या श्यामकुबेराख्यो मादको मदकारकः । दे० भा० खुरासानी अजवाइन फा० तुख्यइम्स । इं० आर्टिमिस्या मेरिटिमा, Artimisia maritema । २ दे० भा० सुफेद जीरा । फा० ज़ीरा । इं० कूटयमिन् सीड् CumminSeed ३ दे० भा० काला जीरा । फा० जीराश्याह । इं० ब्लाक् कारवेसीड Black Caravay Seed । ४ दे० भा० कलौंजी, मगरेला । फा० शोनिझ, श्याहदाने । इं० स्माल फेनल फलावर Small Fenel filawer । कलौंजी तु बृहज्जीरकस्य जीरीनामकस्य भेद एव नतु पलांडुबीजानि ।

ज्वरघ्नं पाचनं वृष्यं बल्यं रुच्यं कफापहम् ॥ ८४ ॥
चक्षुष्यं पवनाध्मानगुल्मच्छर्द्यतिसारहृत् ।

धान्यकम् ।

धान्यकं धानकं धान्यं धाना धानेयकं तथा ॥ ८५ ॥
कुनटी धेनुका छत्रा कुस्तुंबुरुवितुन्नकम् ।
धान्यकन्तुवरं स्निग्धमवृष्यं मूत्रलं लघु ॥ ८६ ॥
तिक्तं कटूष्णवीर्यं च दीपनं पाचनं स्मृतम् ।
ज्वरघ्नं रोचनं ग्राहि स्वादु पाकि त्रिदोषनुत् ॥ ८७ ॥
तृष्णादाहवमिश्वासकासामार्शःकृमिप्रणुत् ।
आर्द्रं तु तद्गुणं स्वादु विशेषात्पित्तनाशि तत् ॥ ८८ ॥

शतपुष्पा मिश्रेया ।

शतपुष्पा शताह्वाच मधुरा कारवी मिसिः ।
अतिलंबी सितच्छत्रा संहितच्छत्रकापि च ॥ ८९ ॥
छत्रा शालेयशालीनौ मिश्रेया मधुरा मिसिः ।
शतपुष्पा लघुस्तीक्ष्णा पित्तकृद्दीपनी कटुः ॥ ९० ॥
उष्णा ज्वरानिलश्लेष्मव्रणशूलाक्षिरोगहृत् ।
मिश्रेया तद्गुणाः प्रोक्ता विशेषाद्योनिशूलनुत् ॥ ९१ ॥
अग्निमांद्यहरी हृद्या बद्धविट्कृमिशुक्रहृत् ।
रूक्षोष्णा पाचनी कासवमिश्लेष्मानिलान् हरेत् ॥ ९२ ॥

---

१ दे०भा० धनियां, फा०तुख्मेकस्नीझई, कोरिऐंडिरसीड। Corian derSeed
२ दे०भा० सौंफ।फा०बादियान। इं० फेनिल्सीड़ । Fenalseed सिता मधुरिका चापि माधुरी तापसप्रिया। गंधाधिका घोषवती सुगंधा च तृषाहरा।
३ दे० भा० सोये, सोये के बीज । फा० शुत–तुख्मेशूता । इं० डिलसीड Dillseed । तज्जलं शीतलं रुच्यं कटुदीपनपाचनम्। मधुरं तृट् हृद्गाति पित्तदाहं च नाशयेत् ।

मेथिका वनमेथिका[1] ।

मेथिका मेथनी मेथी दीपनी बहुपत्रिका ।
बोधनी बहुबीजा च जातीगंधफला तथा ॥ ९३ ॥
वल्लरी चंद्रिका मंथा मिश्रपुष्पा च कैरवी ।
कुंचिका बहुपर्णी च पीतबीजा मुनिच्छदा ॥ ९४ ॥
मेथिका वातशमनी श्लेष्मघ्नी ज्वरनाशिनी ।
ततः स्वल्पगुणा वन्या वाजिनां सा तु पूजिता ॥ ९५ ॥

चंद्रशूरम्[2] ।

चंद्रिका चर्महंत्री च पशुमेहनकारकः ।
नंदनी कारवी भद्रा वासपुष्पा सुवासरा ॥ ९६ ॥
चंद्रशूरं हितं हिक्कावातश्लेष्मातिसारिणाम् ।
असृग्वातगदद्वेषि बलपुष्टिविवर्द्धनम् ॥ ९७ ॥

चतुर्बीजम्[3] ।

मेथिका चंद्रशूरश्च कालजाजी यवानिका ।
एतच्चतुष्टयं युक्तं चतुर्बीजमिति स्मृतम् ॥ ९८ ॥
तच्चूर्णं भक्षितं नित्यं निहंति पवनामयम् ।
अजीर्णशूलमाध्मानं पार्श्वशूलं कटिव्यथाम् ॥ ९९ ॥

हिंगु[4] ।

सहस्रवेधि जतुकं बाल्हीकं हिंगु रामठम् ।

---

१ दे० भा० मेथी । फा० तुख्मे शमपीत । इं० फेनरीक Fennyreek । २ दे० भा० हालीं, हालिम् । फा० हालम तुख्मतरातेजक । इं० कामन क्रेस, Common cress. । ३ दे० भा० चारदाना । फा० चारतुख्म । ४ दे० भा० हींग । फा० अंगुज्ञ दरवंते अगज्ञुखालीस । इं० आस्साफो टीड (हिंगु शोधनं) अंगारस्थे लोहपात्रे सघृते रामठं क्षिपेत् ॥ १ ॥ चालयेत् किंचिदारक्तवर्णं योगेषु योजयेत् ॥ २ ॥ नाडीहिंगु पलाशाख्या जंतुका रामठी च सा । वंशपत्री च पिंडाह्वा सुवीर्य्या हिंगु नाडिका ॥ ३ ॥

हिंगूष्णं पाचनं रुच्यं तीक्ष्णं वातबलासहृत् ॥ १०० ॥
शूलगुल्मोदरानाहक्रिमिघ्नं पित्तवर्धनम् ।

वचा ।

वचोग्रगंधा षड्ग्रंथा गोलोमी शतपर्विका ॥ १०१ ॥
क्षुद्रपत्री च मंगल्या जटिलोग्रा च लोमशा ।
वचोग्रगंधा कटुका तिक्तोष्णा वांतिवह्निकृत् ॥ १०२ ॥
विबंधाध्मानशूलघ्नी शकृन्मूत्रविशोधनी ।
अपस्मारकफोन्मादभूतजंत्वनिलान् हरेत् ॥ १०३ ॥

पारसी-[1]कवचा ।

पारसीकवचा शुक्ला प्रोक्ता हैमवतीति सा ।
हैमवत्युदिता तद्वद्वातं हंति विशेषतः ॥ १०४ ॥

महाभरी-[2]वचा ।

सुगंधाप्युग्रगंधा च विशेषात्कफकासनुत् ।
सुस्वरत्वकरी रुच्या हृत्कंठमुखशोधनी ॥ १०५ ॥
अपरा सुगंधा स्थूलग्रंथिः यस्या लोके महाभरीति नाम
स्थूलग्रंथिः सुगंधा स्यात्ततो हीनगुणा स्मृता ॥ १०६ ॥

द्वीपांतर[3]वचा ।

द्वीपांतरवचा किंचित तिक्तोष्णा वह्निदीप्तिकृत् ।

---

१ दे० भा० खुरासानी वच । फा० सोसन जर्द, अगरतुरकी । इं० स्वीट् फ्लारूट् Sweet Floyroot. । २ दे० भा० कुलिंजन । फा० खिरदासा इं० ग्रैटगैलंगल Greatgalungal । ३ दे० भा० चोबचीनी । फा० चूचन । इं० चका । फिरंगदेशसंभूता चीनदेशेथ विश्रुता । नामतश्चोपचीनी स्यादश्वगंधसमा भवेद् ॥ १ ॥ अश्वगंधा समं पत्रमोषधिर्ग्रंथिसंयुता ॥ वर्णतः पाटला सा च दृढा च मधुरा रसे ॥ २ ॥ शिवनिघंटुः ॥ मद्यन्त्यजेत्तथा तैलं कांजिकं शाकमेव च । क्षारमम्लरसं चैव लवणं भोजनं तथा ॥ ३ ॥

विबंधाध्मानशूलघ्नी शकृन्मूत्रविशोधनी ॥ १०७ ॥
वातव्याधीनपस्मारमुन्मादं तनुवेदनाम् ।
व्यपोहति विशेषेण फिरंगामयनाशिनी ॥ १०८ ॥

हपुषा[१] ।

तन्मध्ये प्रथमफलं मत्स्यवद्विस्रगंधकम् ।
द्वितीयमश्वत्थफलसदृशं मत्स्यगंधि च ॥ १०९ ॥
हपुषा हवुषा विस्रा पराश्वत्थफला मता ।
मत्स्यगंधा प्लीहहंत्री विषघ्नी ध्वांक्षनाशिनी ॥ ११० ॥
हपुषा दीपनी तिक्ता मृदूष्णा तुवरा गुरुः ।
पित्तोदरसमीरार्शोग्रहणीगुल्मशूलहृत् ॥ १११ ॥
पराप्येतद्गुणा प्रोक्ता रूपभेदो द्वयोरपि ॥

विडंगम्[२] ।

पुंसि क्लीबे विडंगः स्यात्कृमिघ्नो जंतुनाशनः ।
तंडुलश्च तथा वेल्लममोघा चित्रतंडुलः ॥ ११२ ॥
विडंगं कटु तीक्ष्णोष्णं रूक्षं वह्निकरं लघु ।
शूलाध्मानोदरश्लेष्मकृमिवातनिबन्धनुत् ॥ ११३ ॥

तुंबरुः[३] ।

तुंबरुः सौरभः सौरो वनजः *सोऽणुजोऽधकः ।
तुंबरु कथितं तिक्तं कटु पाकेपि तत्कटु ॥ ११४ ॥
रूक्षोष्णं दीपनं तीक्ष्णं रुच्यं लघु विदाहि च ।

---

१ दे० भा० हाऊबेर। लै० भा० थेंवेटिया नेरिफोलिआं Thevetianerifolia.
२ दे० भा० वायविडंग । फा० वरंग काबली । इ० वेब्रंग । Bubreng. तुंबकः सौरभः सौरो वनजः सानुजोनिजः । तक्षवर्णस्तीक्ष्णवर्णो वर्तुलश्च महामुनिः ॥ १ ॥ धन्वंतरिनिघंटौ । ३ दे० भा० कबावे नैपाली धनियां । *सानुज इत्यपि पाठः ।

वातश्लेष्माक्षिकर्णोष्ठशिरोरुग्गुरुताकृमीन् ॥ ११५ ॥
कुष्ठशूलारुचिश्वासप्लीहकृच्छ्राणि नाशयेत ।

वंशरोचना ।

स्याद्वंशरोचना वांशी तुगाक्षीरी तुगाशुभा ॥ ११६ ॥
त्वक्क्षीरी वंशजा शुभ्रा वंशक्षीरी च वैष्णवी ।
वंशजा बृंहणी वृष्या बल्या स्वाद्वी च शीतला ॥ ११७ ॥
तृष्णाकासज्वरश्वासक्षयपित्तास्रकामलाः ।
हरेत्कुष्ठं व्रणं पांडुं कषाया वातकृच्छ्रजित् ॥ ११८ ॥

समुद्रफेनः ।

समुद्रफेनः फेनश्च हिंडीरोऽब्धिकफस्तथा ।
समुद्रफेनश्चक्षुष्यो लेखनः शीतलश्च सः ॥ ११९ ॥
कषायो विषपित्तघ्नः कर्णरुग्घ्न कफहृल्लघुः ।

अष्टवर्गः ।

जीवकर्षभकौ मेदे काकोल्यौ ऋद्धिवृद्धिके ॥ १२०
अष्टवर्गोऽष्टभिर्द्रव्यैः कथितश्चरकादिभिः ।
अष्टवर्गो हिमः स्वादुः बृंहणः शुक्रलो गुरुः ॥ १२१ ॥
भग्नसन्धानकृत्कामबलसंबलवर्द्धनः ।
वातपित्तास्रतृड्दाहज्वरमेहक्षयापहः ॥ १२२ ॥

---

१ दे० भा० तवाशीर, वंशलोचन । फा० तवाशीर । इं० थैसिलिशन । Thesiliceons concretion. तवक्षीरं पयः क्षीरं यवजंगवयोद्भवमित्यादि (तवक्षीर नाम) दे० भा० तवाखीर, इं० आरारोट । Arrowrot.

२ दे० भा० समुद्रझग । फा– कफेदरिया । इं० कटल फीशबोन । Cattle fishbone.

जीवकर्षभयोरुत्पत्तिलक्षणं नाम गुणाः ।

जीवकर्षभकौ ज्ञेयौ हिमाद्रिशिखरोद्भवौ ।
रसोनकंदवत्कंदौ निस्सारौ सूक्ष्मपत्रकौ ॥ १२३ ॥
जीवकः कूर्चिकाकारः ऋषभो वृषशृंगवत् ।
जीवको मधुरः शृंगी ह्रस्वांगो कूर्चशीर्षिकः ॥ १२४ ॥
ऋषभो वृषभो धीरो विषाणीद्राक्ष इत्यपि ।
जीवकर्षभकौ बल्यौ शीतौ शुक्रकफप्रदौ ॥ १२५ ॥
मधुरौ पित्तदाहास्रकार्श्यवातक्षयापहौ ।

मेदामहामेदयोः ।

महामेदाभिधः कंदो मोरंगादौ प्रजायते ॥ १२६ ॥
महामेदावनीमेदा स्यादित्युक्तं मुनीश्वरैः ।
शुष्कार्द्रकनिभः कंदो लताजातः सपांडुरः ॥ १२७ ॥
महामेदाभिधो ज्ञेयो मेदालक्षणमुच्यते ।
*शुक्लकंदो नखच्छेद्यो मेदोधातुमिव स्रवेत् ॥ १२८ ॥
यः स मेदेति विज्ञेयो जिज्ञासातत्परैर्जनैः ।
स्वल्पपर्णी मणिच्छिद्रा मेदा मेदोभवाधरा ॥ १२९ ॥
महामेदा वसुच्छिद्रा त्रिदंती देवतामणिः ।
मेदायुगं गुरु स्वादु वृष्यं स्तन्यकफावहम् ॥ १३० ॥
बृंहणं शीतलं पित्तरक्तवातज्वरप्रणुत् ।

काकोल्योः ।

जायते क्षीरकाकोली महामेदोद्भवस्थले ॥ १३१ ॥
यत्र स्यात्क्षीरकाकोली काकोली तत्र जायते ।
पीवरीसदृशः कंदः क्षीरं स्रवति गंधवान् ॥ १३२ ॥

—(योगतरंगिणी)—कर्णस्रावरुजागूथहरः पाचनदीपनः । अशुद्धः स करोत्यंगभंगं तस्माद्विशोधयेत् । समुद्रफेनः संपिष्टो निम्बुतोयेन शुध्यति । समुद्रफेनस्य समुद्रजलोपरि विद्यमानत्वात् समुद्रफेन इति संज्ञा। वस्तुतः मत्स्यास्थ्येय । जीवको ह्रस्वविटपः कूर्चशीर्षश्च दक्षिणे । देशे संजायते कंदो निस्सारः सूक्ष्मपत्रकः * शुष्केति पाठांतरम् । १ सक्षीरप्रियगंधवान् इति पाठांतरम् ।

सा प्रोक्ता क्षीरकाकोली काकोलीलिंगमुच्यते ।
यथा स्यात्क्षीरकाकोली काकोल्यपि तथा भवेत् ॥१३३॥
एषा किंचिद्भवेत्कृष्णा भेदोयमुभयोरपि ।
काकोली वायसोली च वीरा कायस्थिका तथा ॥१३४॥
सा शुक्ला क्षीरकाकोली वयःस्था क्षीरवल्लिका ।
कथिता क्षीरिणी धारी क्षीरशुक्ला पयस्विनी ॥ १३५ ॥
काकोलीयुगलं शीतं शुक्रलं मधुरं गुरु ।
बृंहणं वातदाहास्रपित्तशोथज्वरापहम् ॥ १३६ ॥

ऋद्धिवृद्ध्योः ।

ऋद्धिर्वृद्धिश्च कंदौ द्वौ भवतः कोशयामले ।
श्वेतलोमान्वितौ कंदौ लताजातौ सरंध्रकौ ॥ १३७ ॥
तावेव वृद्धिर्ऋद्धिश्च भेदमप्येतयोर्ब्रुवे ।
तूलग्रंथिसमा ऋद्धिः वामावर्त्तफला च सा ॥ १३८ ॥
वृद्धिस्तु दक्षिणावर्त्तफला प्रोक्ता महर्षिभिः ।
ऋद्धियुग्मं सिद्धिलक्ष्म्यौ वृद्धेरप्याह्वया इमे ॥ १३९ ॥
ऋद्धिर्बल्या त्रिदोषघ्नी शुक्रला मधुरा गुरुः ।
प्राणैश्वर्य्यकरी मूर्च्छारक्तपित्तविनाशिनी ॥ १४० ॥
वृद्धिर्गर्भप्रदा शीता बृंहणी मधुरा स्मृता ।
वृष्या पित्तास्रशमनी क्षतकासक्षयापहा ॥ १४१ ॥
राज्ञामप्यष्टवर्गस्तु यतोऽयमतिदुर्लभः ।
तस्मादस्य प्रतिनिधिं गृह्णीयात्तद्गुणं भिषक् ॥ १४२ ॥

---

१ कई आधुनिक वैद्य ऐसे कहते हैं । जीवक, ऋषभकके अभावमें सुफेद सुरख बैहन । मेदा महामेदाके अभावमें सालब शकाकल । क्षीरकाकोली काकोलीके अभावमें सुफेद सियाह मूसली । ऋद्धिवृद्धिके अभावमें उटंकन-बीज, बीजबन्द ।

मुख्यसदृशः प्रतिनिधिः ।

मेदाजीवककाकोलीवृद्धिद्वंद्वेपि चासति ।
वरी विदार्य्यश्वगंधा वाराहीश्च क्रमात्क्षिपेत् ॥ १४३ ॥
मेदामहामेदास्थाने शतावरीमूलम् ।
जीवकर्षभकस्थाने शतावरीमूलम् ॥ १४४ ॥
काकोलीक्षीरकाकोलीस्थाने अश्वगंधामूलम् ।
ऋद्धिवृद्धिस्थाने वाराहीकंदं गुणैस्तत्तुल्यं क्षिपेत् ॥ १४५॥

यष्टीमधु[1] ।

यष्टीमधु तथा यष्टी मधुकं-क्लीतकं तथा ।
अन्यत्क्लीतनकं तत्तु भवेत्तोयमधूलिका ॥ १४६ ॥
यष्टी हिमा गुरुः स्वाद्वी चक्षुष्या बलवर्णकृत् ।
सुस्निग्धा शुक्रला केश्या स्वर्य्या पित्तानिलास्रजित्१४७॥
व्रणशोथविषच्छर्दितृष्णाग्लानिक्षयापहा ।

कांपिल्लः[2] ।

कांपिल्यः(ल्ल) कर्कशश्चन्द्रो रक्तांगो रेचनोपि च ॥ १४८ ॥
कांपिल्यः कफपित्तास्रक्रिमिगुल्मोदरव्रणान् ।
हंति रेची कटूष्णश्च मेहानाहविषाश्मजुत् ॥ १४९ ॥

आरग्वधः[3] ।

आरग्वधो राजवृक्षः शंपाकश्चतुरंगुलः ।
आरेवतो व्याधिघाती कृतमालः सुवर्णकः ॥ १५० ॥

---

१ दे० भा० मुलठी । फा०बेख मेहेकूमझू । इं०लिककारिसरूट । Liguorice Roor यष्टी द्विधा । जलजा स्थलजा । जलयष्टीगुणाः । जलयष्टी विषच्छर्दितृष्णाग्लानिक्षयापहा । २ दे० भा० कमीला । फा०कन्विलाम । इं० केमिलारोटलीरा।Kamila Rocttlera तच्छाकं शीतलं तिक्तं वातसंग्राहि दीपनम् । ३ दे० भा० अमलतास । पत्रपुष्पमज्जमूलानां गुणाः पृथगन्यत्र द्रष्टव्याः कर्णिकारोप्यस्यैव भेदः । इं० पुडिंगणईपट्री पजिङ्ग कास्या कास्यापल्प । Pudding Pipetree Puring Cassia, Cassia palp cassia fistula

कर्णकारो दीर्घफलः स्वर्णांगः स्वर्णभूषणः ।
आरग्वधो गुरुः स्वादुः शीतलः स्रंसनो मृदुः ॥ १५१ ॥
ज्वरहृद्रोगपित्तास्रवातोदावर्त्तशूलनुत् ।
तत्फलं स्रंसनं रुच्यं कोष्ठपित्तकफापहम् ॥ १५२ ॥
ज्वरे तु सततं पथ्यं कोष्ठशुद्धिकरं परम् ।

कट्वी[1] ।

कट्वी तु कटुका तिक्ता कृष्णभेदा कटंभरा ॥ १५३ ॥
अशोका मत्स्यशकला चक्रांगी शकुलादनी ।
मत्स्यपित्ता कांडरुहा रोहिणी कटुरोहिणी ॥ १५४ ॥
कटुका कटुका पाके तिक्ता रूक्षा हिमा लघुः ।
भेदनी दीपनी हृद्या कफपित्तज्वरापहा ॥ १५५ ॥
प्रमेहश्वासकासास्रदाहकुष्ठकृमिप्रणुत् ।

किरातः[2] ।

किराततिक्तः कैरातो कटुतिक्तः किरातकः ॥ १५६ ॥
कांडतिक्तोऽनार्य्यतिक्तो भूनिंबो रामसेनकः ।
किरातकोऽन्यो नैपालः सोर्द्धतिक्तो ज्वरांतकः ॥ १५७ ॥
किरातः सारको रूक्षः शीतलस्तिक्तको लघुः ।
सन्निपातज्वरश्वासकफपित्तास्रदाहनुत् ॥ १५८ ॥
कासशोथतृषाकुष्ठज्वरव्रणकृमिप्रणुत् ।

---

१ दे० भा० कौड़ । फा० खर्तकसियाह । इं० ब्लाक् हल्लोवरलीस । Black Hellbore. शुद्धिः ॥ कटुकीमुष्णदुग्धेन प्रक्षाल्य ग्राहयेदपि । २ दे० भा० चिरायता । फा० नेनिहाद । इं० चिरेटा Chirata । नैपालगुणाः—नैपालः सन्निपातारिर्ज्वरनिद्रापहस्तथा ।

इन्द्रयवम्[1]।

उक्तं कुटजबीजं तु यवमिंद्रयवं तथा ॥ १५९ ॥
कलिंगं चापि कालिंगं तथा भद्रयवं स्मृतम् ।

इति क्लीबे अमरः प्राह ।

क्वचिदिन्द्रस्य नामैव भवेत्तदाभिधायकम् ॥ १६० ॥
फलानीन्द्रयवास्तस्य तथा भद्रयवा अपि। इति धन्वंतरिः।
इंद्रयवं त्रिदोषघ्नं संग्राहि कटु शीतलम् ॥ १६१ ॥
ज्वरातीसाररक्तार्शःक्रिमिवीसर्पकुष्ठनुत् ।
दीपनं गुदकीलास्रवातास्रश्लेष्मशूलजित् ॥ १६२ ॥

मदनः[2]।

मदनश्छर्दनः पिंडीराठः पिंडीतकस्तथा ।
करहाटो मरुबकः शल्यको विषपुष्पकः ॥ १६३ ॥
मदनो मधुरस्तिक्तो वीर्य्योष्णो लेखनो लघुः ।
वांतिकृद्विद्रधिहरः प्रतिश्यायव्रणान्तकः ॥ १६४ ॥
रूक्षः कुष्ठकफानाहशोथगुल्मव्रणापहः ।

रास्ना[3]।

रास्ना युक्तरसा रस्या सुवहा रसना रसा ॥ १६५ ॥

---

१ दे० भा० इन्द्रजौ । फा० जवानकुञ्जिस्क । इं० ओवल्लिपडरोंसवे । Ovalleaved Rosebay. कुटजस्य त्वचा तिक्ता सर्वातीसारनाशिनी ॥ श्वेतकुटजपुष्पगुणाः—पुष्पं तु वत्सकस्योक्तं तुवरं चाग्निदीपकम् । तिक्तं शीतं वातलं च लघु पित्तातिसारनुत् । २ दे० भा० मैनफल राड़ा । इं० बुशीगार्डिनीया Bushy Gardenia. कृष्णः श्वेतश्च मदनः शीतलो मधुरः स्मृतः। कटुस्तिक्तश्च तुवरो वांतिकृत्कफनाशनः । पक्वामाशयशुद्धेश्च कारकः पित्तनाशकः। हृद्रोगनाशकश्चैव पूर्वस्मादुत्तमो गुणैः ॥ ३ दे० भा० जंतर । रहसनू क्षिजन फा० रासुन । रास्ना तु त्रिविधा प्रोक्ता मूलं पत्रं तृणं तथा । ज्ञेयौ मूलदलौ श्रेष्ठौ तृणरास्ना तु मध्यमा ॥

एलापर्णी च सुरसा सुगंधा श्रेयसी तथा ।
रास्नामपाचनी तिक्ता गुरूष्णा कफवातजित् ॥ १६६ ॥
शोथश्वाससमीरास्रवातशूलोदरापहा ।
कासज्वरविषाशीतिवातकामयहिध्महृत् ॥ १६७ ॥

नाकुली[1] ।

नाकुली सुरसा नागसुगंधा गंधनाकुली ।
नकुलेष्टा भुजंगाक्षी सर्पाक्षी विषनाशनी ॥ १६८ ॥
नाकुली तुवरा तिक्ता कटुकोष्णा विनाशयेत् ।
भोगिलूतावृश्चिकाखुविषज्वरकृमिव्रणान् ॥ १६९ ॥

माचिका[2] ।

माचिका प्रस्थकांबष्ठा तथांबांबालिकांबिका ।
मसूरविदला केशी सहस्रा बालमूलिका ॥ १७० ॥
माचिकाम्ला रसे पाके कषाया शीतला लघुः ।
पक्वातीसारपित्तास्रकफकंड्वामयापहा ॥ १७१ ॥

तेजवती[3] ।

तेजस्विनी तेजवती तेजोह्वा तेजनी तथा ।
तेजस्विनी कफश्वासकासास्यामयवातहृत् ॥ १७२ ॥
पाचन्युष्णा कटुस्तिक्ता रुचिवह्निप्रदीपनी ।

ज्योतिष्मती[4] ।

ज्योतिष्मती स्यात्कटभी ज्योतिष्का कंगुनीति च॥१७३॥
पारावतपदी पण्या लता प्रोक्ता ककुंदनी ।

---

१ दे० भा० नाई, हरकाई। चन्द्रा । फा० छोटा चांदा । नाकुची द्विधा, नाकुली,सुगंधनाकुली । २ पश्चिमदेशे मांई इति वृक्षविशेषे मोईया इति लोके । ३ दे० भा० तेजवल । इं० टुथएकट्री । Toothache tree, ४ दे० भा० उमजिनी । मालकंगुनी । द्विधा, ज्योतिष्मती, महाज्योतिष्मती । फा० काल । इं० स्टाफट्री । Staff tree.

ज्योतिष्मती कटुस्तिक्ता सरा कफसमीरजित् ॥ १७४ ॥
अत्युष्णा वामनी तीक्ष्णा वह्निबुद्धिस्मृतिप्रदा ।

कुष्ठम्[1] ।

कुष्ठं रोगाह्वयं वाप्यं परिभाव्यं तथोत्पलम् ॥ १७५ ॥
कुष्ठमुष्णं कटु स्वादु शुक्रलं तिक्तकं लघु ।
हंति वातास्रवीसर्पकासकुष्ठमरुत्कफान् ॥ १७६ ॥

पुष्करमूलम्[2] ।

उक्तं पुष्करमूलं तु पौष्करं पुष्करं च तत् ।
पद्मपत्रं च काश्मीरं कुष्ठभेदमिमं जगुः ॥ १७७ ॥
पौष्करं कटुकं तिक्तमुक्तं वातकफज्वरान् ।
हंति श्वासारुचिशोथान् विशेषात्पार्श्वशूलनुत् ॥ १७८ ॥

हेमाह्वा[3] ।

पटुपर्णी हैमवती हेमक्षीरी हिमावती ।
हेमाह्वा पीतदुग्धा च तन्मूलं चोकमुच्यते ॥ १७९ ॥
हेमाह्वा रेचनी तिक्ता भेदन्युत्क्लेशकारिणी ।
कृमिकंडुविषानाहकफपित्तास्रकुष्ठनुत् ॥ १८० ॥

शृंगी[4] ।

शृंगी कर्कटशृंगी च स्यात्कुलीरविषाणिका ।
अजशृंगी च वक्रा च कर्कटाख्या च कीर्तिता ॥ १८१ ॥
शृंगी कषाया तिक्तोष्णा कफवातक्षयज्वरान् ।
श्वासोर्ध्ववाततृट्कासहिक्कारुचिवमीर्हरेत् ॥ १८२ ॥

---

१ दे०भा० कुष्ठ ॥ फा० २ दे०भा० पोहकर मूल । ३ दे०भा० चोक । इं० गेंबोझथिसल् gamboje-thistle. तस्याः क्षीरं बिंदुमात्रं नेत्रक्षिप्तं घृतप्लुतम्॥शुक्रं च ह्यधिमांसं च नेत्रांध्यं चैव नाशयेत् । ४ दे० भा० ककडसिंगी ।

कट्फलः[1] ।

कट्फलः सोमवल्कश्च कैटर्य्यः कुंभिकापि च ।
श्रीपर्णिका कुमुदिका भद्रा भद्रवतीति च ॥ १८३ ॥
कट्फलस्तुवरस्तिक्तः कटुर्वातकफज्वरान् ।
हंति श्वासप्रमेहार्शःकासकंड्वामयारुचीः ॥ १८४ ॥

भार्ङ्गी[2] ।

भार्ङ्गी भृगुभवा पद्मा फंजी ब्राह्मणयष्टिका ।
ब्राह्मण्यंगारवल्ली च खरशाकश्च हंजिका ॥ १८५ ॥
भार्ङ्गी रूक्षा कटुस्तिक्ता रुच्योष्णा पाचनी लघुः ।
दीपनी तुवरा गुल्मरक्तजिन्नाशयेद्ध्रुवम् ॥ १८६ ॥
शोथकासकफश्वासपीनसज्वरमारुतान् ।

अश्मभेदः[3] ।

पाषाणभेदकोश्मघ्नो गिरभिद्भिन्नयोजनी ॥ १८७ ॥
अश्मभेदो हिमस्तिक्तः कषायो बस्तिशोधनः ।
भेदनो हंति दोषार्शोगुल्मकृच्छ्राश्महृद्रुजः ॥ १८८ ॥
योनिरोगान्प्रमेहांश्च प्लीहशूलव्रणानि च ।

धातकी[4] ।

धातकी धातुपुष्पी च वह्निज्वाला च सा स्मृता ॥ १८९ ॥
धातकी कटुका शीता मदकृत्तुवरा लघुः ।
तृष्णातीसारपित्तास्रविषकृमिविसर्पजित् ॥ १९० ॥

---

१ दे० भा० कायफल फा० उदुलबर्क । २ दे० भा० भाडंगी । बमनेटी, ब्रह्मदंडी । अस्याः पत्रगुणाः—पर्णमस्या ज्वरं हन्ति दाहं हिक्कां त्रिदोषकम् । ३ दे० भा० पाषाणभेद । फा० गोशाद । इं० आईरिसस्प । Irissp क्षुद्रपाषाणभेदश्च व्रणकृच्छ्राश्मरीहरः । ४ दे० भा० धावेके फूल । इं० ग्रीसली आटो मेन्टोजा ।

मंजिष्ठा[1] ।

मंजिष्ठा विकसा जिंगी समंगा कालमेषिका ।
मंडूकपर्णी मंडीरी भंडी योजनवल्यपि ॥ १९१ ॥
रसायन्यरुणा काला रक्तांगी रक्तयष्टिका ।
भंडीतकी च गंडीरी मंजूषा वस्त्ररंजनी ॥ १९२ ॥
मंजिष्ठा मधुरा तिक्ता कषाया स्वरवर्णकृत् ।
गुरुरुष्णा विषश्लेष्मशोथयोन्याक्षिकर्णरुक् ॥ १९३ ॥
रक्तातीसारकुष्ठास्रवीसर्पव्रणमेहनुत् ।

कुसुंभम्[2] ।

स्यात्कुसुंभं वह्निशिखं वस्त्ररंजकमित्यपि ॥ १९४ ॥
कुसुंभं वातलं कृच्छ्ररक्तपित्तकफापहम् ।

लाक्षा[3] ।

लाक्षा पलंकषालक्तो यावो वृक्षामयो जतु ॥ १९५ ॥
लाक्षा वर्ण्या हिमा बल्या स्निग्धा च तुवरा लघुः ।
अनुष्णा कफपितास्रहिक्काकासज्वरप्रणुत् ॥ १९६ ॥
व्रणोरःक्षतवीसर्पकृमिकुष्ठगदापहा ।
अलक्तको गुणैस्तद्वद्विशेषाद् व्यंगनाशनः ॥ १९७ ॥

हरिद्रा[4] ।

हरिद्रा कांचनी पीता निशाख्या वरवर्णिनी ।

---

१ दे० भा० मंजीठ । फा० रुनास् । इं० मेडररुट् । Maaaer root. ...स्याः शाकगुणाः—शाके स्यान्मधुरा लघ्वी स्निग्धा दीप्तिकरी मता। वातपित्तहरी ...ोक्ता ऋषिभिः सत्यवादिभिः ॥ फलमपि यकृद्दोषहरम् । २ दे० भा० कुसुंभा । ...ा० गुलेमारकर तुख्मकाशा । इं० आफिसिनल् कार्थेमस् । Officinal ...arthamus. ....कुसुंभपुष्पं सुस्वादु त्रिदोषघ्नं च भेदकम् । रूक्षमुष्णं पित्तलं ...त्र केशरंजककारकम् ॥ कफनाशकरं चैव लघु प्रोक्तं मनीषिभिः । ३ दे० भा० ...ाख । फा० लाक । इं० शेललाक् ॥ Shell lac. ४ दे० भा० हलदी । ...ा० जरद चोब । इं० टर्मेरिक् । Turmeric

कृमिघ्ना हलदी योषित्प्रियाहट्टविलासिनी ॥ १९८ ॥
हरिद्रा कटुका तिक्ता रूक्षोष्णा कफपित्तनुत् ।
वर्ण्या त्वग्दोषमेहास्रशोषपांडुव्रणापहा ॥ १९९ ॥

आम्रगन्धिहरिद्रा[1] ।

दार्वीभिदा सुगंधा च दार्वी दारुकदारु च ।
कर्पूरा पद्मपत्रा स्यात्सुरभी सुरनायका ॥ २०० ॥
आम्रगंधिहरिद्रा या सा शीता वातला मता ।
पित्तहन्मधुरा तिक्ता सर्वकंडूविनाशिनी ॥ २०१ ॥

अरण्यहरिद्रा[2] ।

अरण्यहलदीकंदः कुष्ठवातास्रनाशनः ।

दारुहरिद्रा[3] ।

दार्वी दारुहरिद्रा च पर्जन्या पर्जनीति च ॥ २०२ ॥
कटंकटेरी पीता च भवेत्सैव पचंपचा ।
सैव कालीयकः प्रोक्तस्तथा कालेयकोपि च ॥ २०३ ॥
पीतद्रुश्च हरिद्रुश्च पीतदारुश्च पीतकम् ।
दार्वी निशागुणा किन्तु नेत्रकर्णास्यरोगनुत ॥ २०४ ॥

रसांजनम्[4] ।

दार्वीक्वाथसमं क्षीरं पादं पक्त्वा यदा घनम् ।
तदा रसांजनं ख्यातं नेत्रयोः परमं हितम् ॥ २०५ ॥

---

१ दे० भा० चवां हलदी । अंबिया हलदी । इं० मेंगोजिंजर । Mungojinger. २ दे० भा० वनहलदी । जंगली हलदी । ३ दे० भा० दारुहलदी । फा० दारचोब । ४ दे०भा० रसौत । शोधनम्—तोयेत्युष्णे परिक्षिप्य द्रवीकुर्य्याद्रसांजनम् । वाससा स्रावयित्वा च शोधनं मार्तुरश्मिना ॥ १ ॥ एवं विशोधितं तच्च सर्वकर्मसु योजयेत् । विशुद्धं नाशयेद् व्याधीन् नाविशुद्धं कदाचन ॥ २ ॥ इंडियन बर्बरी Extract of Indian Berbery.

रसांजनं तार्क्ष्यशैलं रसगर्भं च तार्क्ष्यजम्।
रसांजनं कटुश्लेष्मविषनेत्रविकारनुत्॥ २०६॥
उष्णं रसायनं तिक्तं छेदनं व्रणदोषहृत्।

वाकुची[1]।

अवल्गुजा वाकुची स्यात्सोमराजी सुपर्णिका॥ २०७॥
शशिलेखा कृष्णफला सोमा पूतिफलीति च।
सोमवल्ली कालमेषी कुष्ठघ्नी च प्रकीर्त्तिता॥ २०८॥
वाकुची मधुरा तिक्ता कटुपाका रसायनी।
विष्टंभहृद्धिमा रुच्या सरा श्लेष्मास्रपित्तनुत्॥ २०९॥
रूक्षा हृद्या श्वासकुष्ठमेहज्वरकृमिप्रणुत्।
तत्फलं पित्तलं कुष्ठकफानिलहरं कटु॥ २१०॥
केश्यं त्वच्यं वमिश्वासकासशोथामपांडुनुत्।

चक्रमर्दः[2]।

चक्रमर्दः प्रपुन्नाटो दद्रुघ्नो मेषलोचनः॥ २११॥
पद्माटः स्यादेडगजः चक्री पुन्नाट इत्यपि।
चक्रमर्दो लघुः स्वादुरूक्षः पित्तानिलापहः॥ ११२॥
हृद्यो हिमः कफश्वासकुष्ठदद्रुकृमीन् हरेत्।
हंत्युष्मं तत्फलं कुष्ठकंडुदद्रुविषानिलान्॥ २१३॥
गुल्मकासकृमिश्वासनाशनं कटुकं स्मृतम्।

अतिविषा[3]।

विषा त्वतिविषा विश्वा शृंगी प्रतिविषारुणा॥ २१४॥
शुक्लकंदा चोपविषा भंगुरा घुणवल्लभा।

---

१ दे० भा० बावची। श्वित्रारिर्वाकुचीभेदाः इं० एसक्यूलंट्फ्लाकुर्शा॥ Esculent flacourtia. २ दे० भा० पवाड। फा० संजीस बोया। प० भा० रालों। इं० ओवललीव्ड केशिया ovalleaved cussia. ३ दे० भा० अतीस। बं० भा० आतइच। अतिविषा त्रिधा ज्ञेया शुक्ला कृष्णा तथाऽरुणा। रसवीर्य्यविपाकेषु निर्विषेव गुणान्विका॥ १॥

विषा सोष्णा कटुस्तिक्ता पाचनी दीपनी हरेत् ॥ २१५ ॥
कफपित्तातिसारामविषकासवमिकृमीन् ।

सावरलोध्रः । पटियालोध्रः ।

लोध्रस्तिल्वस्तिरीटश्च सावरो गालवस्तथा ॥ २१६ ॥
द्वितीयः पट्टिकालोध्रः क्रमुकः स्थूलवल्कलः ।
जीर्णपत्रो बृहत्पत्रः पट्टीलाक्षा प्रसादनः ॥ २१७ ॥
लोध्रो ग्राही लघुः शीतः चक्षुष्यः कफपित्तनुत् ।
कषायो रक्तपित्तासृग्ज्वरातीसारशोथहृत् ॥ २१८ ॥

रसोनः ।

लशुनस्तु रसोनः स्यादुग्रगंधो महौषधम् ।
अरिष्टो म्लेच्छकंदश्च यवनेष्टो रसोनकः ॥ २१९ ॥
यदामृतं वैनतेयो जहार सुरसत्तमात् ।
तदा ततोऽपतद्बिंदुः स रसोनोभवद्भुवि ॥ २२० ॥
पंचभिश्च रसैर्युक्तो रसेनाम्लेन वर्जितः ।
तस्माद्रसोन इत्युक्तो द्रव्याणां गुणवेदिभिः ॥ २२१ ॥
कटुकश्चापि मूलेषु तिक्तः पत्रेषु संस्थितः ॥
नाले कषाय उद्दिष्टो नालाग्रे लवणः स्मृतः ॥ २२२ ॥
बीजे तु मधुरः प्रोक्तो रसस्तद्गुणवेदिभिः ।
रसोनो बृंहणो वृष्यः स्निग्धोष्णः पाचनः सरः ॥ २२३ ॥
रसे पाके च कटुकस्तीक्ष्णो मधुरको मतः ।
बलवर्णकरो मेधाहितो नेत्र्यो रसायनः ॥ २२४ ॥
हृद्रोगजीर्णज्वरकुक्षिशूलविबंधगुल्मारुचिकासशोफान् ।
दुर्नामकुष्ठानलसादजंतुसमीरणाश्वासकफांश्च हंति॥२२५॥

---

१ दे० भा० लोध, पठानीलोध । अरबी सुगाम । २ दे० भा० थोम । मद्यं मांसं तथाम्लं च हितं लशुनसेविनाम् । व्यायाममातपं रोषमतिनीरं पयो-गुडम् ॥ १ ॥ रसोनमश्नन् पुरुषस्त्यजेदेतन्निरंतरम् ।

पलांडुः ।

पलांडुर्यवनेष्टश्च दुर्गंधो मुखदूषकः ।
पलांडुस्तु गुणैर्ज्ञेयो रसोनसदृशो बुधैः ॥ २२६ ॥
स्वादुः पाके रसेनोष्णः कफकृन्नातिपित्तलः ।
हरते केवलं वातं बलवीर्य्यकरो गुरुः ॥ २२७ ॥

भल्लातकम् ।

भल्लातकं त्रिषु प्रोक्तमरुष्कोरुष्करोऽग्निकः ।
तथैवाग्निमुखी भल्ली वीरवृक्षश्च शोफकृत ॥ २२८ ॥
भल्लातकफलं पक्कं स्वादु पाकरसं लघु ।
कषायं पाचनं स्निग्धं तीक्ष्णोष्णं छेदिभेदनम् ॥ २२९ ॥
मेध्यं वह्निकरं हंति कफवातव्रणोदरम् ।
कुष्ठार्शोग्रहणीगुल्मशोथानाहज्वरकृमीन् ॥ २३० ॥
तन्मज्जा मधुरा वृष्या बृंहणी वातपित्तहा ।
वृंतमारुष्करं स्वादुपित्तघ्नं केश्यमाग्निकृत ॥ २३१ ॥
भल्लातकः कषायोष्णः शुक्रलो मधुरो लघुः ।
वातश्लेष्मोदरानाहकुष्ठार्शोग्रहणीगदान् ॥ २३२ ॥
हंति गुल्मज्वरश्वित्रवह्निमांद्यकृमिव्रणान् ।

+ गंधाकाररसैस्तुल्यो गृंजनस्तु पलांडुना । सूक्ष्मनालाग्रपत्रत्वाद्भिद्यतेसौ पलांडुतः ॥ १ ॥ सच स्वेदनभोजने च प्रयुक्तः कफवातजान्यर्शांसि हंति पित्तवतां नराणामपथ्यः ॥ १ दे० भा० भिलावे । नदीभल्लातकः वृषांकः । अस्य वृंतगुणाः—भल्लातकवृंतं मधुरं ॥ फा० बिलादुर । कषायं वातकोपनम् ॥ इं मार्किंग्नट् ॥ Markingnut ॥ भल्लातकशुद्धिः । भल्लातकानां पवनोद्धृतानां वृंताच्च्युतानां च यदाढकं स्यात् । तच्चेष्टका चूर्णकणैर्विघृष्य प्रक्षालयित्वा विसृजेत्प्रवाते ॥ १ ॥ शुष्कं पुनस्तद्द्विदलीकृतं च ततः पचेदप्सु चतुर्गुणासु । तत्पादशेषं परिपूतशीतं क्षीरेण तुल्येन पुनः पचेत्तु ॥ २ ॥

भंगा[1]।

भंगा गंजा मातुलानी मादनी विजया जया ॥ २३३ ॥
भंगा कफहरी तिक्ता ग्राहणी पाचनी लघुः ।
तीक्ष्णोष्णा पित्तला मोहमदवाग्वह्निवर्द्धनी ॥ २३४ ॥

खसतिलः[2]।

तिलभेदः खसतिलः खाखसश्चापि संस्मृतः ।
स्यात्खाखसफलोद्भूतं वल्कलं शीतलं लघु ॥ २३५ ॥
ग्राहि तिक्तं कषायं च वातकृत्कफकासहृत् ।
धातूनां शोषकं रूक्षं मदकृद्वाग्विवर्द्धनम् ॥ २३६ ॥
मुहुर्मोहकरं रुच्यं सेवनात्पुंस्त्वनाशनम् ।

अहिफेनकम्[3]।

उक्तं खसफलं क्षीरमाफूकमहिफेनकम् ॥ २३७ ॥
आफूकं शोषणं ग्राहि श्लेष्मघ्नं वातपित्तलम् ।
तथा खसफलोद्भूतवल्कलप्रायमित्यपि ॥ २३८ ॥

---

१ दे० भा० भांग-सा चतुर्धा सितारक्तपीतनीलप्रसूनकैः । शक्राशनं तु विजया त्रैलोक्यविजया जयेति १ तंत्रांतरे । फा० किन्नाविष, वरकुलख्याल, शवनवंग । इं० इंडियनहेंप । Indian Hemp. । २ दे० भा० पोस्त । फा० कोकनार इं० पोपिकाप्स्युलस Pop. py capsules. ३ दे० भा० अफीम । फा० तिर्य्याकअफयून । इं० ओपियम् opium अहिफेनशुद्धिः । योगतरंगिण्याम्—अहिफेनं शृङ्गवेररसैर्भाव्यं त्रिसप्तधा । शुद्ध्यत्युक्तेषु योगेषु योजयेत विधानतः ॥ १ ॥ अहिफेनश्चतुर्धा १ जारणे—श्वेतवर्णः २, मारणे कृष्णवर्णः ३, धारणे-पीतवर्णः ४, सारणे—चित्रवर्णः ५, विजयाबीजचूर्णस्य भक्षणं विधिना प्रिये । सर्वोपकारकं तत्तु सर्वरोगापहारकम् ॥ १ ॥ परिपक्वानि बीजानि वृक्षादानीय यत्नतः । छायायां पातयेद्रक्षेद्भक्षयेत्कर्षमात्रकम् ॥ ॥ २ ॥ कपिलापयसा सार्द्धं मासमात्रं वरानने । धातुवृद्धिर्भवेत्तस्य चांत्रवृद्धिर्विनश्यति ॥ ३ ॥ मांसदार्ढ्यं वसादार्ढ्यं देहदार्ढ्यं भवेत् प्रिये । अग्निदीप्तिर्मनोदीप्तिः कामदीप्तिस्तथैवच ॥ प्रज्ञादीप्तिर्दृष्टिदीप्तिर्दीप्तीनां पंचकं भवेत् ॥ ४ ॥

खसबीजानि[1]।

उच्यंते खसबीजानि ते खाखसतिला अपि ।
खसबीजानि बल्यानि वृष्याणि सुगुरूणि च ॥ २३९ ॥
शमयंति कफं तानि जनयंति समीरणम् ।

सैन्धवम्[2]।

सैन्धवोऽस्त्री शीतशिवं पाणिमंथं च सिंधुजम् ॥ २४० ॥
सैंधवं लवणं स्वादु दीपनं पाचनं लघु ।
स्निग्धं रुच्यं हिमं वृष्यं सूक्ष्मं नेत्र्यं त्रिदोषहृत् ॥ २४१ ।

गडाख्यम्[3]।

शाकंभरीयं कथितं गडाख्यं रोमकं तथा ।
गडाख्यं लघु वातघ्नमत्युष्णं भेदि पित्तलम् ॥ २४२ ॥
तीक्ष्णोष्णं चापि सूक्ष्मं चाभिष्यंदि कटुपाकि च ।

सामुद्रम्[4]।

सामुद्रं यत्तु लवणमक्षीवं वशिरं च तत् ॥ २४३ ॥
सामुद्रजं सागरजं लवणोदधिसंभवम् ।
सामुद्रं मधुरं पाके सतिक्तं मधुरं गुरु ॥ २४४ ॥
नात्युष्णं दीपनं भेदि सक्षारमविदाहि च ।
श्लेष्मलं वातनुत्तिक्तमरूक्षं नातिशीतलम् ॥ २४५ ॥

विडम्[5]।

विडं पाक्यं च कतकं तथा द्राविडमासुरम् ।
विडं सक्षारमूर्द्ध्वाधः कफवातानुलोमनम् ॥ २४६ ॥

---

१ दे० भा० खसखास । फा० तुखमे कोकनार । इं० पोपीसीड्स् Poppy seeds. २ दे० भा० सैंधानमक । फा० नमके संग । बिलोरी नमके सैंध इं० क्लाराइड आफ् सोडियं । Chloride of Sodium ३ दे० भा० सांभ नमक । फा० मिलहे अवकीर । ४ दे० फा० समुद्र नमक । फा० नमक । इं० साल्ट । salt । ५ दे० भा० मनिआरी नमक । काचलक्षण-मन्यत्र दर्शनीयम् । रोमकं, द्रोणी अन्यत्र दर्शनीयम् ।

ऊर्द्ध्वं कफमधो वातं संचारयेदित्यर्थः ।

दीपनं लघु तीक्ष्णोष्णं रूक्ष्यं रुच्यं व्यवायि च ॥ २४७ ॥
विबंधानाहविष्टंभोदर्दगौरवशूलनुत् ।

सौवर्चलम् ।

सौवर्चलं स्याद्रुचकमक्षपाकं च धातुमत् ॥ २४८ ॥
रुचकं रोचनं भेदि दीपनं पाचनं परम् ।
सस्नेहं वातनुन्नातिपित्तलं विशदं लघु ॥ २४९ ॥

औद्भिदम् ।

औद्भिदं पांशु लवणं यज्जातं भूमितः स्वयम् ।
क्षारं गुरु कटु स्निग्धं शीतलं वातनाशनम् ॥ २५० ॥

चणकाम्लकम् ।

चणकाम्लकमत्युष्णं दीपनं दंतहर्षणम् ।
लवणाम्लरसं रुच्यं शूलाजीर्णविबंधनुत् ॥ २५१ ॥

यवक्षारौ स्वर्जिका सुवर्चिकाश्च ।

पाक्यः क्षारो यवक्षारो यावशूको यवाग्रजः ।
स्वर्ज्जिकापि स्मृतः क्षारः कापोतः सुखवर्च्चका ॥ २५२ ॥

---

१ दे० भा० सौंचल नमक । कालानमक । फा० नमक सियाह, इं० अनाक्या सोडिअं क्लोराइड् । Unadua Sodium Chloride. भूमिसुद्भिदोत्पन्नस्य धारोदकस्य सूर्यरश्मिभिर्वा वह्निना क्वथनाद्यल्लवणं तदौद्भिदम् । पांशु लवणं पृथक् । २ दे० भा० औपर नमक । रेहग । फा० वोरे अर्मनी । इं० कार्वोनेट ओफसोडा । Carbonate of Soda नवसादरः । नवसादरकस्तीक्ष्णः सरोत्रणविदारणः । रसजारणकारी स्यादत्युष्णश्चैव गुल्मनुत् ॥ १ ॥ मलस्तंभं चोदरं च प्लीहं शूलं च नाशयेत् । अस्य शुद्धिः । नवसारो भवेच्छुष्कश्चूर्णतोदे द्विपाचितः । दोलायन्त्रेण यन्त्रेण भिषग्भिर्योगसिद्धये ॥२॥ ३ दे० भा० सज्जी । फा० संजार कलिया । इं० कार्वोनिट ऑफसोडा । Carponate of Soda.

कथितः स्वर्जिकाभेदो विशेषज्ञैः सुवर्चिका ।
निहंति शूलवातामश्लेष्मश्वासगलामयान् ॥ २५३ ॥
पांड्वर्शोग्रहणीगुल्मानाहप्लीहहृदामयान् ।
स्वर्जिकाल्पगुणा तस्माद्विशेषाद्गुल्मशूलहृत् ॥ २५४ ॥
सुवर्चिका स्वर्जिकावद्बोद्धव्या गुणतो जनैः ।

सौभाग्यम्[1] ।

सौभाग्यं टंकणं क्षारं धातुद्रावकमुच्यते ॥ २५५ ॥
टंकणं वह्निकृद्रूक्षं कफहृद्वातपित्तकृत् ।

क्षारद्वयं क्षारत्रयं च ।

स्वर्जिका यावशूकश्च क्षारद्वयमुदाहृतम् ॥ २५६ ॥
टंकणेन युतं तत्तु क्षारत्रयमुदीरितम् ।
मिलितस्तूक्तगुणवद्विशेषाद्गुल्महृत्परम् ॥ २५७ ॥

क्षाराष्टकम् ।

पलाशवज्रिशिखरिचिंचार्कतिलनालजः ।
यवजः स्वर्जिका चेति क्षाराष्टकमुदाहृतम् ॥ २५८ ॥
क्षारा एतेऽग्निना तुल्या गुल्मशूलहरा भृशम् ।

चुक्रम्[2] ।

चुक्रं सहस्रवेधि स्याद्रसाम्लं शुक्तमित्यपि ॥ २५९ ॥
चुक्रमत्यम्लमुष्णं च दीपनं पाचनं परम् ।
शूलगुल्मविबन्धामवातश्लेष्महरं परम् ॥ २६० ॥
वमितृष्णास्यवैरस्यहृत्पीडावह्निमांद्यहृत् ।

इति हरीतक्यादिवर्गः ।

---

१ दे० भा० सुहागा । फा० तीगार । इं० बोराक्स बाबोरेट् ऑफ सोडा । Borax Baborate of Soda. २ दे० भा० चूक । आदौ टंकणमादाय कांजिकाम्ले विनिक्षिपेत् । एकरात्रात्समुद्धृत्य रौद्रयन्त्रे विभावयेत् ॥ १ ॥ नरमूत्रगतं टंकं गवां मूत्रगतं तथा। दिनांते तत्समुद्धृत्य जम्बीराम्लगतं कुरु ॥ २॥–

कर्पूरादिवर्गः ।

[1]कर्पूरः ।

पुंसि क्लीबे च कर्पूरो हिमाह्वो हिमबालकः ।
घनसारश्चन्द्रसंज्ञो हिमनामापि स स्मृतः ॥ १ ॥
कर्पूरः शीतलो वृष्यः चक्षुष्यो लेखनो लघुः ।
सुरभिर्मधुरस्तिक्तः कफपित्तविषापहः ॥ २ ॥
दाहतृष्णास्यवैरस्यमेदोदौर्गन्ध्यनाशनः ।
कर्पूरो द्विविधः प्रोक्तः पक्वापक्वप्रभेदतः ॥ ३ ॥
पक्वात्कर्पूरतः प्राहुरपक्वं गुणवत्परम् ।

चीने[2]संज्ञा ।

चीनसंज्ञस्तु कर्पूरः कफक्षयकरः स्मृतः ॥ ४ ॥
कुष्ठकंडूवमिहरस्तथा तिक्तरसश्च सः ।

क[3]स्तूरी ।

मृगनाभिर्मृगमदः कथितस्तु सहस्रभित ॥ ५ ॥
कस्तूरिका च कस्तूरी वेधमुख्या च सा स्मृता ।

–जम्बीराम्लात्समुद्धृत्य नारिकेलस्य पात्रके । मरीचं चूर्णसंयुक्तं क्षालयेच्छीतलाम्बुना ॥ ३ ॥ एवं टंकणमादाय सर्वयोगेषु योजयेत् । टंकणं वह्नियोगेन स्फुटितं शुद्धतां व्रजेत् ॥ ४ ॥ (श्वेतटंकणगुणाः) सुश्वेतं टंकणं स्निग्धं कटूष्णं कफवातनुत् । आमक्षयापहच्छ्वासविषकासमलापहम् ॥ १ ॥

१ कपूर भीमसेनी । मिसरी बीकानेरी १ तो० इलायची छोटी १ तो० कापूर १ तो० खरल करना १ पहिर । शिरोमध्यं तलं चेति कर्पूरस्त्रिविधः स्मृतः । फा० काफ़ूर । इं० केम्फर । Camphor. २ चीनिया कफ़ूर आरती । ३ कस्तूरी, फा० मुष्क इं० मस्क Musk. (दुष्टपरीक्षा)–करतलजलमध्ये स्थापनीया महद्भिः पुनरपि तदवस्थां चिंतनीयं मुहूर्तम् । यदि भवति च रक्तं तज्जलं पीतवर्णं न भवति मृगनाभिः कृत्रिमोऽयं विकारः ॥ १ ॥ कस्तूरीपंचभेदा अन्यत्र द्रष्टव्याः ।

कामरूपोद्भवा कृष्णा नैपाली नीलवर्णयुक् ॥ ६ ॥
काश्मीरे कपिलच्छाया कस्तूरी त्रिविधा स्मृता ।
कामरूपोद्भवा श्रेष्ठा नैपाली मध्यमा भवेत् ॥ ७ ॥
काश्मीरदेशसंभूता कस्तूरी ह्यधमा स्मृता ।
कस्तूरिका कटुस्तिक्ता क्षारोष्णा शुक्रला गुरुः ॥ ८ ॥
कफवातविषच्छर्दिशीतदौर्गन्ध्यदोषहृत् ।

लता कस्तूरिका ।

लता कस्तूरिका तिक्ता स्वाद्वी वृष्या हिमा लघुः ॥ ९ ॥
चक्षुष्या छेदनी श्लेष्मतृष्णावस्त्यास्यरोगहृत् ।

गन्धमार्जारवीर्यम् ।[2]

गन्धमार्जारवीर्य्यन्तु वीर्य्यकृत्कफवातहृत् ॥ १० ॥
कण्डुकुष्ठहरं नेत्र्यं सुगन्धं स्वेदगन्धनुत् ।

चन्दनम् ।[3]

श्रीखण्डं चन्दनं न स्त्री भद्रश्रीस्तैलपर्णिका ॥ ११ ॥
गन्धसारो मलयजस्तथा चन्द्रद्युतिश्च सः ।
स्वादे तिक्तं कषे पीतं छेदे रक्तं तनौ सितम् ॥ १२ ॥
ग्रन्थिकोटरसंयुक्तं चन्दनं श्रेष्ठमुच्यते ।
चन्दनं शीतलं रूक्षं तिक्तमाह्लादनं लघु ॥ १३ ॥
श्रमशोषविषश्लेष्मतृष्णापित्तास्रदाहनुत् ।

हरिचन्दनम् ।[4]

कलंबकं तु कालीयं पीताभं हरिचन्दनम् ॥ १४ ॥

---

१ परीक्षा—स्वादे तिक्ता पिंजरा केतकीनां गन्धं धत्ते लाघवं तोलकेन । याप्सु न्यस्ता नैव वैवर्ण्यमीयात् कस्तूरी सा राजभोग्या प्रशस्ता ॥ १ ॥ मुसक-दाना । २ गौरासार, वेद अंजीर । मुष्कबिलाई । खट्टाशी घोडा करंज । ३ सुपेद चन्दन—चन्दनं द्विविधमन्यत्र द्रष्टव्यम् । कैरातं शंबरं च । फा० सुपेद सन्दल इं० सैंडलवुड Sandal wood. ४ पीतचन्दन ।

हरिप्रियं कालसारं तथा कालानुसार्य्यकम् ।
कालीयकं रक्तगुणं विशेषाद्व्यंगनाशनम् ॥ १५ ॥

रक्त[1]चन्दनम् ।

रक्तचन्दनमाख्यातं रक्तांगं क्षुद्रचन्दनम् ।
तिलपर्णी रक्तसारं तत्प्रवालफलं स्मृतम् ॥ १६ ॥
रक्तं शीतं गुरु स्वादु च्छर्दितृष्णास्रपित्तहृत् ।
तिक्तं नेत्रहितं वृष्यं ज्वरव्रणविषापहम् ॥ १७ ॥

[2]पतंगम् ।

पतंगं रक्तसारं च सुरंगं रंजनं तथा ।
पटरंजकमाख्यातं पत्तूरं च कुचन्दनम् ॥ १८ ॥
पतंगं मधुरं शीतं पित्तश्लेष्मव्रणास्रजित् ।
हरिचन्दनवद्वेद्यं विशेषाद्दाहनाशनम् ॥ १९ ॥
चन्दनानि तु सर्वाणि सदृशानि रसादिभिः ।
गन्धेन तु विशेषोऽस्ति पूर्वं श्रेष्ठतमं गुणैः ॥ २० ॥

अगुरु[3] । कृष्णागुरु । अगुरु सत्त्वं च ।

अगुरु प्रवरं लोहं राजार्हं योगजं तथा ।
वशिकं कृमिजं चापि कृमिजग्धमनार्य्यकम् ॥ २१ ॥
अगुरूष्णं कटुत्वच्यं तिक्तं तीक्ष्णं च पित्तलम् ।
लघुकर्णाक्षिरोगघ्नं शीतवातकफप्रणुत् ॥ २२ ॥
कृष्णं गुणाधिकं तत्तु लोहवद्वारि मज्जति ।
अगुरुप्रभवः स्नेहः कृष्णागुरुसमः स्मृतः ॥ २३ ॥

---

१ लालचन्दन फा० सन्दले सुरख इं० रेड सांडल वुड् Red Sendal wood. २ वकम, फा० वकम् इं० सेपन वुड् Sappan wood, वर्बरोत्थं वर्बरकं श्वेतवर्बरकं तथा । शीतं सुगन्धि पित्तारिः सुरभिश्चेति सप्तधा ॥ १ ॥ वर्बरं शीतलं तिक्तं कफमारुतपित्तजित् । कुष्ठकंडुव्रणान् हन्ति विशेषाद्रक्तदोषजित् ॥ ॥ २ ॥ ३ अगुरु । काला अगुर । अगुरसत । काष्ठागुरु । दाहागुरु । मंगलागुरु । भेदाः इं० इगलवुड् Eagle wood.

देवदारु[1] ।

देवदारु स्मृतं दारु भद्रदार्विंद्रदारु च ।
मस्तदारु द्रुकिलिमं किलिमं सुरभूरुहः ॥ २४ ॥
देवदारु लघु स्निग्धं तिक्तोष्णं कटुपाकि च ।
विबन्धाध्मानशोथामतंद्राहिक्काज्वरास्रजित् ॥ २५ ॥
प्रमेहपीनसश्लेष्मकासकंडुसमीरनुत् ।

सरलः[2] ।

सरलः पीतवृक्षःस्यात्तथा सुरभिदारुकः ॥ २६ ॥
सरलो मधुरस्तिक्तः कटुपाकरसो लघुः ।
स्निग्धोष्णः कर्णकण्ठाक्षिरोगरक्षोहरः स्मृतः ॥ २७ ॥
कफानिलस्वेददाहकासमूर्च्छाव्रणापहः ।

तगरम्[3] ।

कालानुसार्य्यं तगरं कुटिलं नहुषं नतम् ॥ २८ ॥
अपरं पिण्डतगरं दण्डहस्तं च बर्हिणम् ।
तगरद्वयमुष्णं स्यात् स्वादु स्निग्धं लघु स्मृतम् ॥ २९ ॥
विषापस्मारशूलाक्षिरोगदोषत्रयापहम् ।

पद्मकम्[4] ।

पद्मकं पद्मगन्धि स्यात्तथा पद्माह्वयं स्मृतम् ॥ ३० ॥
पद्मकं तुवरं तिक्तं शीतलं वातलं लघु ।
विसर्पदाहविस्फोटकुष्ठश्लेष्मास्रपित्तनुत् ॥ ३१ ॥
गर्भसंस्थापनं वृष्यं वमिव्रणतृषाभ्रमनुत् ।

---

१ दि.आर फा० देवदार । इं० पाइन् सडीपोदर । स्निग्धदारु काष्ठदारु । चीडा । दङ्भेदाः । २ :धूप वृक्ष । इं० लौंग लिंवु पाईन ३ तगर बं० तगर पादुका अर० अशारुन । ४ पद्मकाष्ठ ।

गुग्गुलः ।

गुग्गुलुर्देवधूपश्च जटायुः कौशिकः पुरः ॥ ३२ ॥
कुम्भोलूखलकं क्लीबे महिषाक्षः पलंकषः ।
महिषाक्षो महानीलः कुमुदः पद्म इत्यपि ॥ ३३ ॥
हिरण्यः पंचमो ज्ञेयो गुग्गुलोः पंचजातयः ।
मृगांजनसवर्णस्तु महिषाक्ष इति स्मृतः ॥ ३४ ॥
महानीलस्तु विज्ञेयः स्वनामसमलक्षणः ।
कुमुदः कुमुदाभः स्यात् पद्मो माणिक्यसन्निभः ॥ ३५ ॥
हिरण्याख्यस्तु हेमाभः पंचानां लिङ्गमीरितम् ।
महिषाक्षो महानीलो गजेंद्राणां हितावुभौ ॥ ३६ ॥
हयानां कुमुदः पद्मः स्वस्त्यारोग्यकरौ परौ ।
विशेषेण मनुष्याणां कनकः परिकीर्त्तितः ॥ ३७ ॥
कदाचिन्महिषाक्षश्च मतः कैश्चिन्नृणामपि ।
गुग्गुलुर्विशदस्तिक्तो वीर्य्योष्णः पित्तलः सरः ॥ ३८ ॥
कषायः कटुकः पाके कटुरूक्षो लघुः परः ।
भग्नसन्धानकृद्वृष्यः सूक्ष्मस्तर्प्यो रसायनः ॥ ३९ ॥
दीपनः पिच्छिलो बल्यः कफवातव्रणापचीः ।
मेदोमेहाश्मवातांश्च क्लेदकुष्ठाममारुतान् ॥ ४० ॥
पिण्डकाग्रंथिशोफार्शो गण्डमालाकृमीञ्जयेत् ।
माधुर्य्याच्छमयेद्वातं कषायत्वाच्च पित्तहा ॥ ४१ ॥
तिक्तत्वात्कफजित्तेन गुग्गुलः सर्वदोषहा ।
स नवो बृंहणो वृष्यः पुराणस्त्वतिलेखनः ॥ ४२ ॥

---

१ गुग्गुल, गन्धराज गुग्गुल, भूमिजगुग्गुल । फा०बोराजहूदान इं० इण्डियन् डेलियम् । शुद्धिः—दुग्धेन त्रिफलाक्वाथे दोलायंत्रे विपाचितः । वाससा गालितो ग्राह्यःसर्वकर्मसु गुग्गुलः ॥ १ ॥

स्निग्धः कांचनसंकाशः पक्वजंबूफलोपमः।
नूतनो गुग्गुलुः प्रोक्तः सुगंधिर्यस्तु पिच्छिलः॥ ४३॥
शुष्को दुर्गंधकश्चैव त्यक्तप्रकृतिवर्णकः।
पुराणः स तु विज्ञेयो गुग्गुलुर्वीर्य्यवर्ज्जितः॥ ४४॥
अम्लं तीक्ष्णमजीर्णं च व्यवायं भ्रममातपम्।
मद्यं रोषं त्यजेत्सम्यक् गुणार्थी पुरसेवकः॥ ४५॥

श्रीवासः।

श्रीवासः सरलस्रावः श्रीवेष्टो यक्षधूपकः।
श्रीवासो मधुरस्तिक्तः स्निग्धोष्णस्तुवरः सरः॥ ४६॥
पित्तलो वातमूर्धाक्षिस्वररोगक्षयापहः।
रक्षोघ्नः स्वेददौर्गंध्ययूकाकंडूव्रणप्रणुत॥ ४७॥

रालः।

रालस्तु शालनिर्य्यासः तथा सर्जरसः स्मृतः।
देवधूपो यक्षधूपस्तथा सर्वरसश्च सः॥ ४८॥
रालो हिमो गुरुस्तिक्तः कषायो ग्राहको हरेत्।
दोषास्रस्वेदवीसर्पज्वरव्रणविपादिकाः॥ ४९॥
ग्रहभग्नास्थिदग्धामशूलातीसारनाशनः।

—अस्योत्पत्तिः--जायंते पुरपादपा मरुभुवि ग्रीष्मेर्कसंतापिताः शीतर्तौ शिशिरेपि गुग्गुलुरसं मुंचंति ते पंचधा। हेमाभं महिषाक्षितुल्यमपरं सत्पद्मरागोपमं भृंगाभं कुमुदद्युतिं च विधिना ग्राह्या परीक्षा ततः॥ १॥—परीक्षा:॥ वह्नौ ज्वलंति तपने विलयं प्रयांति क्लिद्यंति कोष्णसलिले पयसः समानाः। ग्राह्याः शुभाः परिहरेच्चिरकालजातान्सक्षारवर्णसमपूयविगन्धवर्णान्॥ २॥
१ गन्धबिरोजा फा० संदरुस-काईरुवा वं० नवनीतखोटी इं० गमओपल सण्डरेक। (सतविरोजा) Gomeopal Sandaryack श्रीवाससारः कफनुन्मूत्रलो ज्वरसंहरः। शोफविम्लापनो लेपात्क्रमिहृद्वेदनापहः॥ १॥ २ राल फा० रालमगरेवी इं० नारुसम् Vellow Risin तैलं-तैलं सर्जरसोद्भूतं विस्फोटव्रणनाशनम्। कुष्ठपामाक्रमिहरं वातश्लेष्मामयापहम्॥ १॥

कुंदरुः[1] ।

कुंदरुस्तु मुकुन्दः स्यात् सुगन्धः कुन्द इत्यपि ॥ ५० ॥
कुन्दरुर्मधुरस्तिक्तस्तीक्ष्णस्त्वच्यः कटुर्हरेत् ।
ज्वरस्वेदग्रहालक्ष्मीमुखरोगकफानलान् ॥ ५१ ॥

सिह्लकः[2] ।

सिह्लकस्तु तुरुष्कः स्याद्यतो यवनदेशजः ।
कपितैलं स चाख्यातं तथा च कपिनामकः ॥ ५२ ॥
सिह्लकः कटुकः स्वादुः स्निग्धोष्णः शुक्रकांतिकृत् ।
वृष्यः कण्ठ्यः स्वेदकुष्ठज्वरदाहग्रहापहः ॥ ५३ ॥

जातीफलम्[3] ।

जातीफलं जातिकोषं मालतीफलमित्यपि ।
जातीफलं रसे तिक्तं तिक्तोष्णं रोचनं लघु ॥ ५४ ॥
कटुकं दीपनं ग्राहि स्वर्य्यं श्लेष्मानिलापहम् ।
निहंति मुखवैरस्यं मद्यदौर्गंध्यकृष्णताः ॥ ५५ ॥
कृमिकासे वमिश्वासशोषपीनसहृद्रुजः ।

जातिपत्री[4] ।

जातीफलस्य त्वक् प्रोक्ता जातीपत्री भिषग्वरैः ॥ ५६ ॥
जातिपत्री लघुः स्वादुः कटूष्णा रुचिवर्णकृत् ।
कफकासवमिश्वासतृष्णाकृमिविषापहा ॥ ५७ ॥

---

१ गुन्दवरोसा । फा० रूमीखोटी मस्तकी । इं० ओलिबेनम् Olibanum. २ मीआसाइला फा० सिलारस इं० लिक्विडएम्बर Lipuid amber. ३ जायफल--जातीफलं सशब्दं च स्निग्धं गुरु च शस्यते । तैलं जातिफलोद्भूतं समुत्तेजनमग्निदम् ॥ १ ॥ जीर्णातिसारशमनमाध्मानाक्षेपशूलहृत् । आमवातहरं बल्यं दंतवेष्टव्रणार्तिनुत् ॥२॥ फा० जोभोवुवा इं० नट्मेग Nutmeg. ४ जावित्री । फा० बजबार इं० मेस Mace.

[1]लवंगम् ।

लवंगं देवकुसुमं श्रीसंज्ञं श्रीप्रसूनकम् ।
लवंगं कटुकं तिक्तं लघु नेत्रहितं हिमम् ॥ ५८ ॥
दीपनं पाचनं रुच्यं कफपित्तास्रनाशनम् ।
तृष्णां छर्दिं तथाध्मानं शूलमाशु विनाशयेत् ॥ ५९ ॥
कासं श्वासं च हिक्कां च क्षयं क्षपयति ध्रुवम् ।

[2]बहुला ।

एला स्थूला च बहुला पृथ्वीका त्रिपुटापि च ॥ ६० ॥
भद्रैला बृहदेला च चन्द्रबाला च निष्कुटिः ।
स्थूला च कटुका पाके रसे चानिलकृल्लघुः ॥ ६१ ॥
रूक्षोष्णा श्लेष्मपित्तास्रकण्डुश्वासतृषापहा ।
हल्लासविषवस्त्यास्यशिरोरुग्वमिकासनुत् ॥ ६२ ॥

[3]उपकुंचिका ।

सूक्ष्मोपकुञ्चिका तुत्था कोरंगी द्राविड़ी त्रुटिः ।
एला सूक्ष्मा कफश्वासकासार्शोमूत्रकृच्छ्रहृत् ॥ ६३ ॥
रसे तु कटुका शीता लघ्वी वातहरी मता ।

[4]त्वक् ।

त्वक्पत्रं च वरांगं स्याद् भृंगं चोचं तथोत्कटम् ॥ ६४ ॥
त्वचं लघूष्णं कटुकं स्वादु तिक्तं च रूक्षकम् ।
पित्तलं कफवातघ्नं कण्डूमारुचिनाशनम् ॥ ६५ ॥
हृद्बस्तिरोगवातार्शःकृमिपीनसशुक्रहृत् ।

---

१ लौंग फा० मेहक् । इं० क्लोव Cloves. २ इलायची बड़ी फा० हैलं-कलां । इं० लार्ज कोर्डामोम् । Large Cardamum. देवपुष्पोद्भवं तैलमग्निकृद्वातनाशनम् । दन्तवेष्टकफार्त्तिघ्नं गर्भिण्या वमनापहम् ॥ १ ॥ ३ इलायची छोटी फा० हैल० हिल इं० शिलिसर कार्डमोम Sheleser Cardamum. ४ तज इं० सिन्नामन्बार्क Cinnamon Bark.

दारुसिता[1] ।

त्वक्स्वाद्वी तनुत्वक् सा स्यात्तथा दारुसिता मता ॥६६॥
उक्ता दारुसिता स्वाद्वी तिक्ता चानिलपित्तहृत् ।
सुरभिः शुक्रला वर्ण्या मुखशोषतृषापहा ॥ ६७ ॥

तमालपत्रम्[2] ।

पत्रं तमालपत्रं च तथा स्यात्पत्रनामकम् ।
पत्रकं मधुरं किंचित्तीक्ष्णोष्णं पिच्छिलं लघु ॥ ६८ ॥
निहंति कफवातार्शोहृल्लासारुचिपीनसान् ।

नागपुष्पः[3] ।

नागपुष्पः स्मृतो नागः केसरो नागकेसरः ॥ ६९ ॥
चांपेयो नागकिंजल्कः कथितः कांचनाह्वयः ।
नागपुष्पं कषायोष्णं रूक्षं लघ्वामपाचनम् ॥ ७० ॥
खुड़कंडू तृषास्वेदच्छर्दिहृल्लासनाशनम् ।
दौर्गन्ध्यकुष्ठवीसर्पकफपित्तविषापहम् ॥ ७१ ॥

त्रिजातं चतुर्जातम् ।

त्वगेलापत्रकैस्तुल्यैः त्रिसुगन्धि त्रिजातकम् ।
नागकेसरसंयुक्तं चतुर्जातकमुच्यते ॥ ७२ ॥
तद्द्वयं रोचनं रूक्षं तीक्ष्णोष्णं मुखगन्धहृत् ।
लघुपित्ताग्निकृद्वर्ण्यं कफवातविषापहम् ॥ ७३ ॥

कुंकुमम्[4] ।

कुंकुमं घुसृणं रक्तं काश्मीरं पीतकंवरम् ।
संकोचं पिशुनं धीरं वाह्लीकं शोणिताभिधम् ॥ ७४ ॥

---

१ देश० दालचीनी फा० दार्चीनी । २ तेजपात फा० सादरम्ह इं० फोलियामालावार्थी Folia Malabathy. तैल । वह्निमांद्यानिलहराध्मानाक्षेपविनाशनम् । वांत्युत्क्लेशप्रशमनं संग्राहि दशनार्तिहृत् ॥ १ ॥ त्वाचं तैलं रजःस्रावि तोये क्षिप्तं निमज्जति । ३ नागकेसर वं० नागेश्वर अर० नागरमुश्क केसर फा० लरकीमास इं० सैफन् Saffron. ४ तृणाकुंकुम । ईरानी कुंकुम ।

काश्मीरदेशजे क्षेत्रे कुंकुमं यद्भवेद्धितम् ।
सूक्ष्मकेसरमारक्तं पद्मगन्धि तदुत्तमम् ॥ ७५ ॥
बाह्लीकदेशसंजातं कुंकुमं पांडुरं मतम् ।
केतकीगन्धयुक्तं तन्मध्यमं सूक्ष्मकेसरम् ॥ ७६ ॥
कुंकुमं पारसीकं यन्मधुगन्धि तदीरितम् ।
ईषत्पांडुरवर्णं तत् ह्यधमं स्थूलकेसरम् ॥ ७७ ॥
कुंकुमं कटुकं स्निग्धं शिरोरुग्व्रणजन्तुजित् ।
तिक्तं वमिहरं वर्ण्यं व्यंगदोषत्रयापहम् ॥ ७८ ॥

गोरोचना[1] ।

गोरोचना तु मांगल्या बन्द्या गौरी च रोचना ।
गोरोचना हिमा तिक्ता वश्या मंगलकांतिदा ॥ ७९ ॥
विषालक्ष्मीग्रहोन्मादगर्भस्रावक्षतास्रजित् ।

नखम्[2] ।

नखं व्याघ्रनखं व्याघ्रायुधं तच्चक्रकारकम् ॥ ८० ॥
नखं स्वल्पं नखी प्रोक्ता हनुर्हट्टविलासिनी ।
नखद्वयं ग्रहश्लेष्मवातास्रज्वरकुष्ठनुत् ॥ ८१ ॥
लघूष्णं शुक्रलं वर्ण्यं स्वादुव्रणविषापहम् ।
अलक्ष्मीमुखदौर्गन्ध्यहृत्पाकरसयोः कटु ॥ ८२ ॥

ह्रीबेरम्[3] ।

बालं ह्रीबेरबर्हिष्ठोदीच्यं केशांबुनाम च ।

---

१ गोलोचन फा० गायरोहन इं० गोलस्टोन बिजोरGollstone Bijoor,

२ नखू । नख । नखी । फा० नाखुन पर्य्या ग्राहकसर इं० शेल Shall नखशुद्धिः—(चण्डी) खण्डागोमयतोयेन यदि वा तिंतिणीजलैः । नखं संकाथयेदेभिः भांडे तु मृण्मये तथा ॥ १ ॥ पुनरुद्धृत्य प्रक्षाल्य भर्जयित्वा निषेचयेत् । गुडपथ्यांबुना ह्येवं शुद्ध्यति नात्र संशयः ॥ २ ॥ पंचपल्लवतोयेन गन्धानां क्षालनं तथा ॥ ३ सुरनाली । खाम्र सुगंधवाला फा० असारुं मुष्क-वाला, नेत्रवाला । अस्य प्रतिनिधिः कसेरु जटा इं० म्यूरिकेटस् Muricatus

वालकं शीतलं रूक्षं लघुर्दीपनपाचनम् ॥ ८३ ॥
हृल्लासारुचिवीसर्पहृद्रोगामातिसारजित् ।

वीरणम् ।[1]

स्याद्वीरणं वीरतरं वीरं च बहुमूलकम् ॥ ८४ ॥
वीरणं पाचनं शीतं स्तंभनं लघु तिक्तकम् ।
मधुरं ज्वरहृद्वांतिमदजित्कफपित्तहृत् ॥ ८५ ॥
तृष्णास्रविषवीसर्पकृच्छ्रदाहव्रणापहम् ।

उशीरम् ।[2]

वीरणस्य तु मूलं स्यादुशीरं नलदं च तत् ॥ ८६ ॥
अमृणालं च सेव्यं च समगन्धकमित्यपि ।
उशीरं पाचनं शीतं स्तंभनं लघु तिक्तकम् ॥ ८७ ॥
मधुरं ज्वरहृद्वांतिमदहृत्कफपित्तहृत् ।
तृष्णास्रविषवीसर्पदाहकृच्छ्रव्रणापहम् ॥ ८८ ॥

जटामांसी ।[3]

जटामांसी भूतजटा जटिला च तपस्विनी ।
मांसी तिक्ता कषाया च मेध्या कांतिबलप्रदा ॥ ८९ ॥
स्वाद्वी हिमा त्रिदोषास्रदाहवीसर्पकुष्ठनुत् ।

शिलापुष्पम् ।[4]

शैलेयं तु शिलापुष्पं वृद्धं कालानुसार्यकम् ॥ ९० ॥
शैलेयं शीतलं हृद्यं कफपित्तहरं लघु ।
कण्डुकुष्ठाश्मरीदाहविषहृल्लासरक्तजित् ॥ ९१ ॥

---

१ वेरन् पन्हो । २ खस्स व० व्याणार मूल अस्य प्रतिनिधिः कालावाडा । ३ वालछड, बिल्लीलोटन । फा० सुंबूल । गंधमांसी अश्रमासी इं० स्पिकनार्ड Spikenard ४ छैल चलारा, पत्थरफूल फा० दहाल ।

मुस्तकं (नागरमुस्तकम्)।
मुस्तकं न स्त्रिया मुस्तं त्रिषु वारिदनामकम् ॥
कुरुविन्दो परो भद्रमुस्तो नागरमुस्तकः ॥ ९२ ॥
मुस्तं हिमं कटु ग्राहि तिक्तं दीपनपाचनम् ।
कषायकफपित्तास्रतृड्ज्वरारुचिजंतुजित् ॥ ९३ ॥
अनूपदेशे यज्जातं मुस्तकं तत् प्रशस्यते ।
तत्रापि मुनिभिः प्रोक्तं वरं नागरमुस्तकम् ॥ ९४ ॥

कर्चूरः ।
कर्चूरो वेधमुख्यश्च द्राविडः काल्पिकः शटी ।
कर्चूरो दीपनो रुच्यः कटुकस्तिक्त एव च ॥ ९५ ॥
सुगन्धिः कटुपाकः स्यात्कुष्ठार्शोव्रणकासनुत् ।
उष्णो लघुर्हरेच्छ्वासगुल्मवातकफक्रिमीन् ॥ ९६ ॥

मुरा
मुरा गन्धकुटी दैत्या सुरभिस्तालपर्णिका ।
मुरा तिक्ता हिमा स्वाद्वी लघ्वी पित्तानिलापहा ॥ ९७ ॥
ज्वरासृग्भूतरक्षोघ्नी कुष्ठकासविनाशिनी ।

पलाशी ।
शटी पलाशी षट्ग्रन्था सुव्रता गन्धमूलका ॥ ९८ ॥

---

१ मोथा । नागरमोथा । फा० शादकफी । भद्रमुस्तक । कैवर्त्तीमुस्तक । वामुस्तक । डोलेकी जड़ । तन्त्रान्तरे--जटामांसी जटी पेषी लोमशा जटिला मिसिः । मांसी तपस्विनी हिंसा मिषिका चक्रवर्त्तिनी ॥ १ ॥ अनुलेपनं ज्वरहृत् रूक्षतां चैव नाशयेत् । मुस्तकशुद्धिः--मुस्तकं तु मनाक् क्षुण्णकांजिके त्रिदिनोषितम् । पंचपल्लवतोयेन स्विन्नमातपशोषितम् ॥ १ ॥ गुण्डांबुना सिच्यमानं भर्जयेच्चूर्णयेत्ततः ॥ आजशोभांजनजलैर्भावयेच्चेति शुद्ध्यति ॥ २ ॥
२ नरकचूर । फा० जरंबाद, इं० लौंगझेडआरी ३ कचूरभेदः एकाङ्गी ।
४ कपूर कचरी बं० आदा, गन्धशटी ।

गन्धारिका गन्धवपुर्वधूः पृथुपलाशिका ।
भवेद् गन्धपलाशी तु कषाया ग्राहणी लघुः ॥ ९९ ॥
तिक्ता तीक्ष्णा च कटुका उष्णास्यमलनाशिनी ।
शोथकासव्रणश्वासशूलहिध्मग्रहापहा ॥ १०० ॥

प्रियंगुः ।

प्रियंगुः फालनी कांता लता च महिलाह्वया ।
गुन्द्रा गन्धफली श्यामा विष्वक्सेनांगनाप्रिया ॥ १ ॥
प्रियंगुः शीतला तिक्ता तुवरानिलपित्तहृत् ।
रक्तातीसारदौर्गन्ध्यस्वेददाहज्वरापहा ॥ २ ॥
गुल्मतृड्विषमेहघ्नी तद्वद्गन्धप्रियंगुका ।
तत्फलं मधुरं रूक्षं कषायं शीतलं गुरु ॥ ३ ॥
विबन्धाध्मानबलकृत् संग्राहि कफपित्तजित् ।

रेणुका[2] ।

रेणुका राजपुत्री च नन्दनी कपिला द्विजा ॥ ४ ॥
भस्मगन्धा पाण्डुपुत्री स्मृता कौंती हरेणुका ।
रेणुका कटुका पाके तिक्तानुष्णा कटुर्लघुः ॥ ५ ॥
पित्तला दीपनी मेध्या पाचनी गर्भपातिनी ।
बलासवातकृच्चैव तृट्कण्डुविषदाहनुत् ॥ ६ ॥

ग्रन्थिपर्णम्[3] ।

ग्रन्थिपर्णं ग्रन्थिकं च काकपुच्छं च गुत्थकम् ।
नीलपुष्पं सुगन्धश्च कथितं तैलपर्णिकम् ॥ ७ ॥
ग्रंथिपर्णं तिक्ततीक्ष्णं कटूष्णं दीपनं लघु ।
कफवातविषश्वासकण्डुदौर्गंध्यनाशनम् ॥ ८ ॥

---

१ फुल फिरंग, गुलफिरंग, वं० गन्धप्रियंगु हरिद्वारे, गून्दनी इसके अभाव में मैंहदी । २ वं० रेणुक इसके अभाव में संभालु बीज । ३ चौर नाम गन्ध-द्रव्य गठीवन, गण्डीवल, टेकन ।

स्थौणेयकम्।

स्थौणेयकं बर्हिबर्हं शुकबर्हं च कुक्कुरम्।
शीर्णं रोम शुकं चापि शुकपुष्पं शुकच्छदम्॥ ९॥
स्थौणेयकं कटु स्वादु तिक्तं स्निग्धं त्रिदोषनुत्।
मेधाशुक्रकरं रुच्यं रक्षोऽश्रीज्वरजंतुजित्॥ १०॥
हंति कुष्ठास्रतृड्दाहदौर्गंध्यतिलकालकान्।

निशाचरः।

निशाचरो धनहरः कितवो गणहासकः॥ ११॥
रोचकः शंकितश्चण्डो दुष्पत्रः क्षेमको रिपुः।
रोचको मधुरस्तिक्तो कटुः पाके कटुर्लघुः॥ १२॥
तीक्ष्णो हृद्यो हिमो हंति कुष्ठकंडूकफानिलान्।
रक्षोऽश्रीस्वेदमेदोस्रज्वरगन्धाविषव्रणान्॥ १३॥

तालीसपत्रम्।

तालीसमुक्तं पत्राढ्यं धात्रीपत्रं च तत्स्मृतम्।
तालीसं लघु तीक्ष्णोष्णं श्वासकासकफानिलान्॥ १४॥
निहन्त्यरुचिगुल्मामवह्निमांद्यक्षयामयान्।

कंकोलम्।

कक्कोलं कोलकं प्रोक्तं तथा कोशफलं स्मृतम्॥ १५॥
कक्कोलं लघु तीक्ष्णोष्णं तिक्तं हृद्यं रुचिप्रदम्।
आस्यदौर्गंध्यहृद्रोगकफवातामयांध्यहृत्॥ १६॥

गन्धकोकिला गन्धमालती।

स्निग्धोष्णा कफहृत्तिक्ता सुगन्धा गन्धकोकिला।
गन्धकोकिलया तुल्या विज्ञेया गन्धमालती॥ १७॥

---

१ ग्रन्थिपर्ण भेद थुनेर। २ ग्रंथिपर्ण भेद भटीटर। भटोरा। ३ तालीसपत्र। भूम्यामलकी। फा० जरनवा। ४ कंकोल मिरच वं० कांकला। फलझूर। गढ़ला इं० क्यूबेब पेपर Cubeb Pepper

लामज्जकम्[1]।

लामज्जकं सुनालं स्यादमृणालं लयं लघु।
इष्टकावथकं सेव्यं नलदं चावदातकम् ॥ १८ ॥
लामज्जकं हिमं तिक्तं लघु दोषत्रयास्रजित्।
त्वगामयस्वेदकृच्छ्रदाहपित्तास्ररोगनुत् ॥ १९ ॥

एलावालुकम्[2]।

एलावालुकमैलेयं सुगन्धि हरिवालुकम्।
ऐलवालुकमैलालुकपित्थफलमीरितम् ॥ २० ॥
एलवालु कटुकं पाके कषायं शीतलं लघु।
हंति कंडुव्रणच्छर्दितृट्कासारुचिहृद्रुजः ॥ २१ ॥
बलासविषपित्तास्रकुष्ठमूत्रगदाक्रिमीन्।

कुटन्नटम्[3]।

कुटन्नटं दासपुरं वानेयं परिपेलवम् ॥ २२ ॥
प्लवगोपुरगोनर्दं कैवर्त्तीं मुस्तकानि च।
मुस्तावत्पेलवपुटं शुकाहं स्याद्वितुन्नकम् ॥ २३ ॥
वितुन्नकं हिमं तिक्तं कषायं कटुकांतिदम्।
कफपित्तास्रवीसर्पकुष्ठकंडूविषप्रणुत् ॥ २४ ॥

स्पृक्का[4]।

स्पृक्कासृक् ब्राह्मणी देवी मरुन्माला लता लघुः।
समुद्रांता वधूकोटिवर्षालं कोंपकेत्यपि ॥ २५ ॥
स्पृक्का स्वाद्वी हिमा वृष्या तिक्ता निखिलदोषनुत्।
कुष्ठकण्डूविषस्वेददाहाठ्यज्वररक्तहृत् ॥ २६ ॥

---

१ उशीरवत् पीतच्छवितृणविशेषः वं० गन्धवेण। २ लालुका। पक्व कपित्थफल वं० राल वालुका। ३ केवटी मोथा। गुडतज्जी। इयंतितन्नकवृक्षस्य त्वक् मस्ताकृतिः। ४ असवरग, आसारक। वं० पिडिशाक।

पर्पटी[1] ।

पर्पटी रंजनी कृष्णा जतुका जननी जनिः ।
जतुकृष्णाग्निसंस्पर्शा जतुकृच्चक्रवर्त्तनी ॥ २७ ॥
पर्पटी तुवरा तिक्ता शिशिरा वर्णकृल्लघुः ।
विषव्रणहरी कण्डुकफपित्तास्रकुष्ठनुत् ॥ २८ ॥

नलिका[2] ।

नलिका विद्रुमलता कपोतचरणा नटी ।
धमन्यंजनकेशी च निर्मथ्या सुषिरा नली ॥ २९ ॥
नलिका शीतला लघ्वी चक्षुष्या कफपित्तहृत् ।
कृच्छ्राश्मवाततृष्णास्रकुष्ठकण्डुज्वरापहा ॥ ३० ॥

प्रपौण्डरीकम्[3] ।

प्रपौण्डरीकं पौंडर्य्यं चक्षुष्यं पौण्डरीयकम् ।
पौंडर्य्यं मधुरं तिक्तं कषायं शुक्रलं हिमम् ॥ ३१ ॥
चक्षुष्यं मधुरं पाके वर्ण्यं पित्तकफप्रणुत् ।
व्यंजनो वांतिहारी च रुचिश्यः शोकशोभनः ।

इति कर्पूरादिवर्गः ।

गुडूच्यादि वर्गः ।

पुदीना[4] ।

तत्रादौ गुडूच्या उत्पत्तिर्नाम गुणाश्च ।
अथ लंकेश्वरो मानी रावणो राक्षसाधिपः ।
रामपत्नीं वनात्सीतां जहार मदनातुरः ॥ १ ॥

---

१ चकवत् पद्मावती पापडी । २ सुगन्धा,प्रवालाकृति । पंठारी । ३ पुण्डेरिआ बं० पुण्डरिआ अस्य प्रतिनिधिः स्थल-कमलम् । ४ फा० नोअना इं० टोलरेड मिंट Tallredment पुदीना प्राचीन नहीं है, और किसी ग्रन्थ में नहीं देखा जाता ।

ततस्तं बलवान् रामो रिपुञ्जायापहारिणम् ।
वृतो वानरसैन्येन जघान रणमूर्द्धनि ॥ २ ॥
हते तस्मिन् सुराराती रावणे बलगर्विते ।
देवराजः सहस्राक्षः परितुष्टो हि राघवे ॥ ३ ॥
तत्र ये वानराः केचित् राक्षसैर्निहता रणे ।
तानिंद्रो जीवयामास संसिच्यामृतवृष्टिभिः ॥ ४ ॥
ततो येषु प्रदेशेषु कपिगात्रात्परिच्युताः ।
पीयूषबिन्दवः पेतुस्तेभ्यो जाता गुडूचिका ॥ ५ ॥

गुडूची[1] ।

गुडूची मधुपर्णी स्यादमृतामृतवल्लरी ।
छिन्ना छिन्नरुहा छिन्नोद्भवा वत्सादिनीति च ॥ ६ ॥
जीवंती तंत्रिका सोमा सोमवल्ली च कुण्डली ।
चक्रलक्षणिका धारा विशल्या च रसायनी ॥ ७ ॥
चन्द्रहासा वयस्या च मंडली देवनिर्मिता ।
गुडूची कटुका तिक्ता स्वादुपाका रसायनी ॥ ८ ॥
संग्राहणी कषायोष्णा लध्वी बल्याग्निदीपनी ।
दोषत्रयामतृट्दाहमेहकासांश्च पांडुताम् ॥ ९ ॥
कामलाकुष्ठवातास्रज्वरकृमिवमीर्हरेत् ॥

तांबूलम्[2] ।

तांबूलवल्ली तांबूली नागिनी नागवल्लरी ॥ १० ॥
तांबूलं विशदं रुच्यं तीक्ष्णोष्णं तुवरं सरम् ।
वश्यं तिक्तं कटु क्षारं रक्तपित्तकरं लघु ॥ ११ ॥
बल्यं श्लेष्मास्यदौर्गंध्यमलवातश्रमापहम् ।

---

१ दे० भा० गिलो । फा० गिलाई । इं० गुलांचा । गुडूचिसत्त्वं सुस्वादु पथ्यं लघु च दीपनम् । चक्षुष्यं धातुकृन्मेध्यं वयःस्थापनकारकम् ॥ (मदनविनोदे) घृतेन वातं सगुडा विबन्धं पित्तं सिताढया मधुना कफं च । वातास्रमुग्रं रुबुतैलमिश्रं शुंठ्यामवातं शमयेद्गुडूची ॥ २ दे० भा० पान नागर वेल फा०-

बिल्वः[1] ।

बिल्वः शांडिल्यशैलूषो मालूरश्रीफलावपि ॥ १२ ॥
गंधगर्भः शलाटुश्च कंटकी च सदाफलः ।
श्रीफलस्तु वरास्तिक्तो ग्राही रूक्षोऽग्निपित्तकृत् ॥ १३ ॥
वातश्लेष्महरो बल्यो लघुरुष्णश्च पाचनः ।

गंभारी[2] ।

गंभारी भद्रपर्णी च श्रीपर्णी मधुपर्णिका ॥ १४ ॥
काश्मरी काश्मरी हीरा काश्मर्यः पीतरोहिणी ।
कृष्णवृन्ता मधुरसा महाकुसुमकापि च ॥ १५ ॥
काश्मरी तुवरा तिक्ता वीर्य्योष्णा मधुरा गुरुः ।
दीपनी पाचनी मेध्या भेदनी भ्रमशोथजित् ॥ १६ ॥
दोषतृष्णामशूलार्शोविषदाहज्वरापहा ।
तत्फलं बृंहणं वृष्यं गुरु केश्यं रसायनम् ॥ १७ ॥

—वर्ग तंबोल । इं० बिटल लीफ Betel Leaf. श्रीवाटी, अम्लवाटी, सातसीपर्ण, इत्यादि नाना भेदाः नागवल्लीफलं—हृद्यं सुगन्धि कफवातजित् । आयुरग्रे यशो मूले लक्ष्मीर्मध्ये व्यवस्थिता। तस्मादग्रं तथा मूलं मध्यं पर्णस्य वर्जयेत् ॥ १ ॥ तांबूलं न हितं दन्तदुर्बलेक्षणरोगिणाम् । विषमूर्छामदार्तानां क्षतिनां रक्तपित्तिनाम् ॥ २ ॥ कुळंजनम् । तांबूलवल्लीमूलं तु रूक्षोष्णं कफनाशनम् । तीक्ष्णं बल्यं च वातघ्नं पौष्टिकं दीपनं सरम् ॥ ३ ॥ श्लेष्मघ्नं पित्तजनकं वृद्धानां चापि शस्यते ॥

१ दे० भा० बिल, बेल । इं० बेगालंकिन्स ॥ तत्पत्रं कफवातामशूलघ्नं ग्राहि रोचनम् । हन्याद्बिल्वजं पुष्पमतीसारं तृषां वमिम् ॥ १ ॥ बिल्वका सूखा गूदा ॥ कफवातामशूलघ्नी ग्राहिणी बिल्वपेशिका । २ दे० भा० खंभारी, कुम्भेरेन । घुमार । बं० भा० गामार । अस्य फलं जिरिंफ० तत्पुष्पं मधुरं शीतं तिक्तं संग्राहि वातलम् । कषायं मधुरं पाके पित्तास्रासृग्गदापहम् ॥ गंभारीमूलमत्युष्णमहितं मानुषेषु तत् ।

वातपित्ततृषारक्तक्षयमूत्रविबंधनुत् ।
स्वादु पाके हिमं स्निग्धं तुवराम्लं विशुद्धिकृत् ॥ १८ ॥
हन्याद्दाहतृषावातरक्तपित्तक्षतक्षयान् ।

पाटला[1] ।

पाटली पाटला मोघा मधुदूती फलेरुहा ॥ १९ ॥
कृष्णवृन्ता कुबेराक्षी काचस्थाल्यलिवल्लभा ।
ताम्रपुष्पी च कथिता परा स्यात्पाटला सिता ॥ २० ॥
मुष्कको मोक्षको घंटा पाटलिः काष्ठपाटला ।
पाटला तुवरा तिक्तानुष्णा दोषत्रयापहा ॥ २१ ॥
अरुचिश्वासशोथार्शश्छर्दिहिक्कातृषाहरी ।
पुष्पं कषायं मधुरं हिमं हृद्यं कफास्रनुत् ॥ २२ ॥
पित्तातीसारहृत्कंठ्यं फलं हिक्कास्रपित्तहृत् ।

अग्निमंथः[2] ।

अग्निमंथो जया स स्यात् श्रीपर्णी गणकारिका ॥ २३ ॥
जया जयंती तर्कारी नादेयी वैजयंतिका ।
अग्निमंथः श्वयथुनुद्वीर्योष्णः कफवातहृत् ॥ २४ ॥
पांडुनुत् कटुकस्तिक्तस्तुवरो मधुरोऽग्निदः ।

स्योनाकः[3] ।

स्योनाकः शोषणश्च स्यान्नटकट्वंगटुंटुकः ॥ २५ ॥

---

१ दे० भा० पाढल, वं० भा० घंटा पारुल । गौ० भा० पारुलगाछश्वेत, रक्त, भूमिपाटला । क्षुद्रपाटला । वल्लीपाटला । २ दे० भा० अगेथु गनियार । वं० भा० आगगंत । लघ्वग्निमंथस्य गुणाः प्रोक्ता वृद्धाग्निमंथवत् । विशेषाल्लेपने चोपनाहे शोफे च कीर्तिताः ॥ १ ॥ तेजोमंथगुणाः प्रोक्ताश्चाग्निमंथसमा बुधैः । विशेषाद्वातशोफे च प्रोक्तः पूर्वैश्च सूरिभिः ॥ ३ दे०भा० अरलु, टेंटु । युगलं । वं० भा० सोनालु । स्योनाकयुगलं तिक्तं शीतलं च त्रिदोषजित् । पित्तश्लेष्मातिसारघ्नं सन्निपातज्वरापहम् ॥

मंडूकपर्णपत्रोर्णशुकनाशकटुंनटाः ।
दीर्घवृन्तोऽरलुश्चापि पृथुशिंबः कटंभरः ॥ २६ ॥
स्योनाको दीपनः पाके कटुकस्तुवरो हिमः ।
ग्राही तिक्तोऽनिलश्लेष्मपित्तकासामनाशनः ॥ २७ ॥
टुंटुकस्य फलं बालं रूक्षं वातकफापहम् ।
हृद्यं कषायं मधुरं रोचनं लघुदीपनम् ॥ २८ ॥
गुल्मार्शःकृमिहृत्प्रौढं गुरुवातप्रकोपनम् ।

वृहत्पञ्चमूलम् ।

श्रीफलः सर्वतोभद्रा पाटला गणिकारिका ।
स्योनाकः पञ्चभिश्चैतैः पञ्चमूलं महन्मतम् ॥ २९ ॥
पंचमूलं महत्तिक्तं कषायं कफवातनुत् ।
मधुरं श्वासकासघ्नमुष्णं लघ्वग्निदीपनम् ॥ ३० ॥

शालपर्णी ।

शालपर्णी स्थिरा सौम्या त्रिपर्णी पीवरी गुहा ।
विदारिगंधा दीर्घांघ्रिर्दीर्घपत्रांशुमत्यपि ॥ ३१ ॥
शालपर्णी गुरुश्छर्दिज्वरश्वासातिसारजित् ।
शोषदोषत्रयहरी बृंहण्युक्ता रसायनी ॥ ३२ ॥
तिक्ता विषहरी स्वादुः क्षतकासकृमिप्रणुत् ।

पृश्निपर्णी ।

पृश्निपर्णी पृथक्पर्णी चित्रपर्ण्यंघ्रिपर्णिका ॥ ३३ ॥
क्रोष्टुविन्ना सिंहपुच्छी कलशी धावनी गुहा ।
पृश्निपर्णी त्रिदोषघ्नी वृष्योष्णा मधुरा सरा ॥ ३४ ॥
हंति दाहज्वरश्वासरक्तातीसारतृट्वमीः ।

---

१ दे० भा० सरिवन, कवरी, नौली । बं० भा० शालपान । २ दे० भा० पिठौनी, कवरा । बं० भा० चाकुलिया ।

बृहती ।

वार्ताकी क्षुद्रभंटाकी महती बृहती कुली ॥ ३५ ॥
हिंगुली राष्ट्रिका सिंही महोटी दुःप्रधर्षणी ।
बृहती ग्राहणी हृद्या पाचनी कफवातहृत् ॥ ३६ ॥
कटुतिक्तास्यवैरस्यमलारोचकनाशनी ।
उष्णा कुष्ठज्वरश्वासशूलकासाग्निमांद्यजित् ॥ ३७ ॥

कंटकारी ।

कंटकारी तु दुःस्पर्शा क्षुद्रा व्याघ्री निदिग्धिका ।
कंटारिका कंटकिनी धावनी बृहती तथा ॥ ३८ ॥
उभे च बृहत्यौ यत आह सुश्रुतः ।
क्षुद्रायां क्षुद्रघंटाक्यां बृहतीति निगद्यते ।
श्वेता क्षुद्रा चंद्रहासा लक्ष्मणा क्षुद्रदूतिका ॥ ३९ ॥
गर्भदा चंद्रभा चंद्रा चंद्रपुष्पा प्रियंकरी ।
कंटकारी सरा तिक्ता कटुका दीपनी लघुः ॥ ४० ॥
रूक्षोष्णा पाचनी कासश्वासज्वरकफानिलान् ।
निहंति पीनसं पार्श्वपीडाकृमिहृदामयान् ॥ ४१ ॥
तयोः फलं कटु रसे पाके च कटुकं भवेत् ।
शुक्रस्य रेचनं भेदि तिक्तं पित्ताग्निकृल्लघु ॥ ४२ ॥

---

१ दे० भा० बरहंटा, ममोली बड़ी । बं० व्याकुड । फा० उस्तरगार, बादं जान जंगली । (फल) फलानि बृहतीनां च कटुतिक्तलघूनि च । कंडुकुष्टकृमिघ्नानि कफवातहराणि च ॥ १ ॥ श्वेत । श्वेता बृहतिका रुच्या कफवातविनाशनी । अंजनान्नेत्ररोगघ्नी गुणास्त्वन्ये तु पूर्ववत् ॥ २ ॥ २ दे०भा० ममोली, कटेरी, बं भा० कंटकारी । प० भा० मोकडी । फलं तस्याः कटु पाके रसे च कटुकं भवेत् । शुक्रस्यं रेचनं भेदि तिक्तं पित्ताग्निकृल्लघु ॥ लक्ष्मणा कटुका चोष्णा चक्षुष्या चाग्निदीपनी । गर्भस्थापनकर्त्री च पारदस्य नियामिका ॥ रुचिकृत्कफवातानां नाशिनी परमा मता । शेषाश्चास्या गुणाः प्रोक्ताः फलस्यापि च पूर्ववत् ॥

हन्यात्कफमरुत्कंडूकासमेदःकृमिज्वरान् ।
तद्वत्प्रोक्ता सिता क्षुद्रा विशेषाद्गर्भकारिणी ॥ ४३ ॥

गोक्षुरः ।

गोक्षुरः क्षुरकोऽपि स्यात् त्रिकंटःस्वादुकंटकः ।
गोकंटको भक्षटंको वनशृंगाट इत्यपि ॥ ४४ ॥
पलंकषाश्वदंष्ट्रा च तथा स्यादिक्षुगंधिकः ।
गोक्षुरः शीतलः स्वादुर्बलकृद्बस्तिशोधनः ॥ ४५ ॥
मधुरो दीपनो वृष्यः पुष्टिदश्चाश्मरीहरः ।
प्रमेहश्वासकासार्शःकृच्छ्रहृद्रोगवातनुत् ॥ ४६ ॥

लघुपंचमूलम् ।

शालपर्णी पृश्निपर्णी वार्ताकी कंटकारिका ।
गोक्षुरः पंचभिश्चैतैः कनिष्ठं पंचमूलकम् ॥ ४७ ॥
पंचमूलं लघु स्वादु बल्यं पित्तानिलापहम् ।
नात्युष्णं बृंहणं ग्राहि ज्वरश्वासाश्मरीप्रणुत् ॥ ४८ ॥

दशमूलम् ।

उभाभ्यां पंचमूलाभ्यां दशमूलमुदाहृतम् ।
दशमूलं त्रिदोषघ्नं श्वासकासशिरोरुजः ॥ ४९ ॥
तंद्राशोथज्वरानाहपार्श्वपीडारुचीर्हरेत् ।

जीवन्ती ।

जीवंती जीवनी जीवा जीवनीया मधुस्रवा ॥ ५० ॥

---

१ दे० भा० भखडा, गोखरु । बं०भा० गोखरि । फा० तुखमे खारखस्क क्षुद्रबृहत् । (वीज) बीजं गोक्षुरकं शीतं मूत्रलं शोथवारणम् । वृष्यमायुष्करं शुक्रमेहनुत्कृच्छ्रनाशनम् ॥ १ ॥ (क्षार) क्षारस्तु गोक्षुराणां तु मधुरः शीतलो मतः । स्रोतोविशोधनश्चैव वातघ्नो वृष्य एव च ॥ २ ॥ (शाक) तिक्तं गोक्षुरकं शाकं वृष्यं स्रोतोविशोधनम्॥ २ दे० भा० डोडी । बं० भा० जीवई इं० शाशा प्रेरला । बृहती क्षुद्रा तिक्तजीवंती स्वर्णजीवंती । अर्कवत् मधुरपुष्पा व्रततिः । हिरणवेला स्वर्णवर्णपत्रमूलनालादिका ।

मांगल्यनामधेया च शाकश्रेष्ठा पयस्विनी ।
जीवंती शीतला स्वादुः स्निग्धा दोषत्रयापहा ॥ ५१ ॥
रसायनी बलकरी चक्षुष्या ग्राहणी लघुः ।

मुद्गपर्णी ।

क्षुद्रपर्णी काकपर्णी शूर्पपर्ण्यल्पिका सहा ॥ ५२ ॥
काकमुद्गा च सा प्रोक्ता तथा मार्जारगंधिका ।
मुद्गपर्णी हिमा रूक्षा तिक्ता स्वाद्वी च शुक्रला ॥ ५३ ॥
चक्षुष्या क्षतशोथघ्नी ग्राहणीज्वरदाहनुत् ।
दोषत्रयहरी लघ्वी ग्रहण्यर्शोतिसारजित् ॥ ५४ ॥

माषपर्णी ।

माषपर्णी सूर्यपर्णी कांबोजी हयपुच्छिका ।
पांडुलोमशपर्णी च कृष्णवृन्ता महासहा ॥ ५५ ॥
माषपर्णी हिमा तिक्ता रूक्षा शुक्रबलासकृत् ।
मधुरा ग्राहणी शोथवातपित्तज्वरास्रजित् ॥ ५६ ॥

जीवनीयगणः ।

अष्टवर्गः सयष्टीको जीवंती मुद्गपर्णिका ।
माषपर्णीगणोऽयं तु जीवनीय इति स्मृतः ॥ ५७ ॥
जीवनो मधुरश्चापि नाम्ना स परिकीर्तितः ।
जीवनीयगणः प्रोक्तः शुक्रकृत् बृंहणो हिमः ॥ ५८ ॥
गुरुर्गर्भप्रदः स्तन्यकफकृत्पित्तरक्तहृत् ।
तृष्णां शोषं ज्वरं दाहं रक्तपित्तं व्यपोहति ॥ ५९ ॥

शुक्लरक्तैरंडौ ।

शुक्ल एरंड आमंडश्चित्रो गंधर्वहस्तकः ।

---

१ दे० भा० मुंगवन । बं० भा० मुगानि । २ दे० भा० जंगली मांह । माष । बं० भा० पमाणी । ३ दे० भ० हंडोला, अरंड । फा० वेदंजीर, तुखमे बेदंजीर । इं० कास्टर ओइल प्लांट कास्टरसीड Castoroil Plant castor—

पंचांगुलो वर्धमानो दीर्घदंडो व्यडंबकः ॥ ६० ॥
रक्तोऽपरोरुबूकः स्यादुरुबूको रुबुस्तथा ।
व्याघ्रपुच्छश्च वातारिश्चंचुरुत्तानपत्रकः ॥ ६१ ॥
एरण्डयुग्मं मधुरमुष्णं गुरु विनाशयेत् ।
शूलशोथकटीवस्तिशिरःपीडोदरज्वरान् ॥ ६२ ॥
ब्रध्नश्वासकफानाहकासकुष्ठाममारुतान् ।
एरंडपत्रं वातघ्नं कफक्रिमिविनाशनम् ॥ ६३ ॥
मूत्रकृच्छ्रहरं चापि पित्तरक्तप्रकोपनम् ।
वातार्य्यग्रदलं गुल्मवस्तिशूलहरं परम् ॥ ६४ ॥
कफवातक्रिमीन् हंति वृद्धिं सप्तविधामपि ।
एरंडफलमत्युष्णं गुल्मशूलानिलापहम् ॥ ६५ ॥
यकृत्प्लीहोदरार्शोघ्नं कटुकं दीपनं परम् ।
तद्वन्मज्जा च विड्भेदी वातश्लेष्मोदरापहा ॥ ६६ ॥

आकारकरभः[1] ।

आकारकरभश्चैवाकल्लकोथ ह्यकल्लकः ।
अकल्लकोष्णो वीर्य्येण बलकृत्कटुको मतः ॥ ६७ ॥
प्रतिश्यायं च शोथं च वातं चैव विनाशयेत् ।

शुक्लरक्तार्कौ[2] ।

श्वेतार्को गणरूपः स्यान्मंदारो वसुकोऽपि च ॥ ६८ ॥
श्वेतपुष्पः सदापुष्पः स बालार्कः प्रतापसः ।
रक्तोऽपरोर्कनामा स्यादर्कपर्णो विकीरणः ॥ ६९ ॥

—seed. एरंडतैलं मधुरं गुरु श्लेष्माभिवर्द्धनम् । वातासृग्गुल्महृद्रोगजीर्णज्वरहरं परम् ॥ रक्तोऽपरो हस्तिकर्णो व्याघ्रो व्याघ्रकरो रुबुः । त्रिबीजश्च रुबूकश्च चारुरुत्तानपत्रकः (तंत्रांतरम्) ।

१ दे० भा० अकरकरा । बं० भा० अकोरकोश । इं० पेलेटररूट ।
२ दे० भा० लाल आक, सुफेद आक, मंदार फा० खुर्क, दूध बं० भा० आकंद । इं० जाइगोंटिक्स्वोलोवर्ट । Giguntic sivallowwart.

रक्तपुष्पः शुक्लफलस्तथा स्फोटः प्रकीर्तितः ।
अर्कद्वयं सरं वातकुष्ठकंडुविषव्रणान् ॥ ७० ॥
निहंति प्लीहगुल्मार्शःश्लेष्मोदरशकृत्कृमीन् ।
अलर्ककुसुमं वृष्यं लघुदीपनपाचनम् ॥ ७१ ॥
अरोचकप्रसेकार्शः कासश्वासनिवारणम् ।
रक्तार्कपुष्पं मधुरं सतिक्तं कुष्ठकृमिघ्नं कफनाशनं च ॥७२॥
अर्शोविषं हंति च रक्तपित्तं ।
संग्राहि गुल्मे श्वयथौ हितं तत् ॥ ७३ ॥
क्षीरमर्कस्य तिक्तोष्णं स्निग्धं सलवणं लघु ।
कुष्ठगुल्मोदरहरं श्रेष्ठमेतद्विरेचनम् ॥ ७४ ॥

सेहुंडः ।

सेहुंडः सिंहतुंडः स्याद्वज्री वज्रद्रुमोऽपि च ।
सुधासमंतदुग्धा च स्नुक्स्त्रियां स्यात्स्नुही गुडा ॥ ७५ ॥
सेहुंडो रेचनस्तीक्ष्णो दीपनः कटुको गुरुः ।
शूलामष्ठीलिकाध्मानकफगुल्मोदरानिलान् ॥ ७६ ॥
उन्मादमेहकुष्ठार्शःशोथमेदोश्मपांडुताः ।
व्रणशोथज्वरप्लीहविषदूषीविषं हरेत् ॥ ७७ ॥
उष्णवीर्य्यं स्नुहीक्षीरं स्निग्धं च कटुकं लघु ।
गुल्मिनां कुष्ठिनां चापि तथैवोदररोगिणाम् ॥ ७८ ॥
हितमेतद्विरेकार्थे ये चान्ये दीर्घरोगिणः ।

सेहुंडभेदशातला ।

शातला सप्तला सारविमला विदला च सा ॥ ७९ ॥
तथा निगदिता भूरिफेना कर्मकषेत्यपि ।
शातला कटुका पाके वातला शीतला लघुः ॥ ८० ॥

१-२ दे० भा० सेहुण्ड, थोहर । फा० लादनाम । ई० मिल्कसहेजप्रिक्लीपीयर Milks hedge Prickly pear.

तिक्ता शोथकफानाहपित्तोदावर्तरक्तजित्।

कलिहारी[1]।

कलिहारी तु हलिनी लांगली शुक्रपुष्प्यपि ॥ ८१ ॥
विशल्याग्निशिखानंता वह्निवक्त्रा च गर्भनुत्।
कलिहारी सरा कुष्ठशोफार्शोव्रणशूलजित् ॥ ८२ ॥
सक्षारा श्लेष्मजित्तिक्ता कटुका तुवरापि च।
तीक्ष्णोष्णकृमिहल्लध्वी पित्तला गर्भपातिनी ॥ ८३ ॥

श्वेतरक्तकरवीरौ[2]।

करवीरःश्वेतपुष्पः शतकुम्भोश्वमारकः।
द्वितीयो रक्तपुष्पश्च चंडातो लगुडस्तथा ॥ ८४ ॥
करवीरद्वयं तिक्तं कषायं कटुकं च तत्।
व्रणलाघवकृन्नेत्रकोपकुष्ठव्रणापहम् ॥ ८५ ॥
वीर्योष्णं कृमिकंडुघ्नं भक्षितं विषवन्मतम्।

धत्तूरः[3]।

धत्तूरधूर्तधुस्तूरा उन्मत्तः कनकाह्वयः ॥ ८६ ॥
देवताकितवस्तूरी महामोही शिवप्रियः।

---

१ दे० भा० कलिहारी, कलेसर, बं० भा० विषलांगला, ईशलांगला, प० भा० मराडी, महासती। अस्याः कंदं वत्सनाभविषम्। इं० बुल्फसवेन। Walfsbaue. (तंत्रांतरे) कलिकारी लांगलिकी दीप्ता च गर्भघातिनी। अग्निजिह्वा वह्निशिखा वह्निवक्त्रा च लांगली ॥ वृद्धयोगतरंगिण्याम्—लांगली शुद्धिमायाति दिनं गोमूत्रसंस्थिता। २ दे० भा० कनेर। बं० भा० करवी। फा० खरजेहरा। सफेद कनेर, लाल पीली नीली इं०स्वीटसैंटे, डऔलियंडर। Sweet scruted oleander. ३ दे० भा०धत्तूरा। सित, नील, कृष्ण। बं० भा० धुतुरा। लोहित पीतपुष्पः। इं० थोर्न आपलम्टामोनियं। Thorna pplesmraonium. कृष्णधत्तूरकः सिद्धः कनकः सचिवः शिवः। कृष्णपुष्पो विषारातिः क्रूरधूर्तश्च कीर्तितः। (वृद्धयोगतरंगिणी)धत्तूरबीजं गोमूत्रे चतुर्थाप्रोषितं पुनः। कडितं निस्तुषं कृत्वा योगेषु विनियोजयेत्।

मातुलो मदनश्चास्य फले मातुलपुत्रकः ॥ ८७ ॥
धत्तूरो मदवर्णाग्निवातकृज्ज्वरकुष्ठनुत् ।
कषायो मधुरस्तिक्तो यूकालिक्षाविनाशनः ॥ ८८ ॥
उष्णो गुरुर्व्रणश्लेष्मकंडुकृमिविषापहः ।

वासक[1]ः ।

वासको वासिका वासा भिषङ्माता च सिंहिका ॥८९॥
सिंहास्यो वाजिदंतः स्यादाटरूषक इत्यपि ।
अटरूषो वृषनामा सिंहपर्णश्च स स्मृतः ॥ ९० ॥
वासको वातकृत्स्वर्यः कफपित्तास्रनाशनः ।
तिक्तस्तुवरको हृद्यो लघुः शीतस्तृडर्तिहृत् ॥ ९१ ॥
श्वासकासज्वरच्छर्दिमेहकुष्ठक्षयापहः ।

पर्पट[2]ः ।

पर्पटो वरतिक्तश्च स्मृतः पर्पटकश्च सः ॥ ९२ ॥
कथितः पांशुपर्यायः तथा कवचनामकः ।
पर्पटो हंति पित्तास्रभ्रमतृष्णाकफज्वरान् ॥ ९३ ॥
संग्राही शीतलस्तिक्तो दाहनुद्वातलो लघुः ।

निंब[3]ः ।

निंबः स्यात्पिचुमर्दश्च पिचुमंदश्च तिक्तकः ॥ ९४ ॥
अरिष्टः पारिभद्रश्च हिंगुनिर्यास इत्यपि ।
निंबः शीतो लघुर्ग्राही कटुपाकोग्निवातनुत् ॥ ९५ ॥

---

१ दे० भा० वांसा । प० भा० विहकड, विसूटी । इं० वाकस । २ दे० भा० पापड़ा, दवन । वं० भा० खेत पारड़ा । फा० शाहतरा । इं० जस्टिसयाप्रोकरबेन्स । Justici Procarabens. ३ दे० भा० निम, नीम, वं० भा० निमगाच्छ । फा० नेनब । इं० निंबट्री । Nunbtree. निंबतैलं तु कुष्ठघ्नं तिक्तं कृमिहरं परम् । (तंत्रांतरे) कैटर्यो महानिंबो रामणो रमणस्तथा । गिरिनिंबो महारिष्टः शुक्लसारोऽलकाह्वयः ॥ इं० सजंद्करखीकुनाह । दे० भा० मीठानीम । वं० भा० घोडानिमघ्रिशंत्र ।

अहृद्यः श्रमतृट्कासज्वरारुचिकृमिप्रणुत् ।
व्रणपित्तकफच्छर्दिकुष्ठहृल्लासमेहनुत् ॥ ९६ ॥
निंबपत्रं स्मृतं नेत्र्यं कृमिपित्तविषप्रणुत् ।
वातलं कटुपाकं च सर्वारोचककुष्ठनुत् ॥ ९७ ॥
नैंबं फलं रसे तिक्तं पाके तु कटुभेदनम् ।
स्निग्धं लघूष्णं कुष्ठघ्नं गुल्मार्शःकृमिमेहनुत ॥ ९८ ॥

महानिंबः ।

महानिंबः स्मृतोद्रेको[1] रम्यको विषमुष्टिकः ।
केशमुष्टिर्निबरकः कार्मुको क्षीव इत्यपि ॥ ९९ ॥
महानिंबो हिमो रूक्षः तिक्तो ग्राही कषायकः ।
कफपित्तभ्रमच्छर्दिकुष्ठहृल्लासरक्तजित् ॥ १०० ॥
प्रमेहश्वासगुल्मार्शोमूषिकाविषनाशनः ।

पारिभद्रः[2] ।

पारिभद्रो निंबतरुर्मंदारः पारिजातकः ॥ १०१ ॥
पारिभद्रोनिलश्लेष्मशोथमेदःकृमिप्रणुत् ।
तत्पुष्पं पित्तरोगघ्नं कर्णव्याधिविनाशनम् ॥ १०२ ॥

कांचनारः[3] कोविदारश्च ।

कांचनारः कांचनको गंडारिः शोणपुष्पकः ।
कोविदारश्चमरिकः कुद्दालो युगपत्रकः ॥ १०३ ॥
कुण्डली ताम्रपुष्पश्चाश्मंतकः स्वल्पकेसरी ।
कांचनारो हिमो ग्राही तुवरः श्लेष्मपित्तहृत् ॥ १०४ ॥
कृमिकुष्ठगुदभ्रंशगंडमालाव्रणापहा ।
कोविदारोपि तद्वत्स्यात्तयोः पुष्पं लघु स्मृतम् ॥ १०५ ॥
रूक्षं संग्राहि पित्तास्रप्रदरक्षयकासनुत् ।

---

१ दे० भा० ध्रेक; बं० भा० बोडानिम, महानिम । फा० आजाद दरखत । २ दे० भा० वकायनट्रेक् । बं० भा० पालते मांदार । द्रा० भा० पंजीर ३ दे० भा० कचनार, कुलाड । बं० भा० कांचन ।

श्याम[1], श्वेत, रक्त शिग्रुः ।

शोभांजनः शिग्रुस्तीक्ष्णगंधकाऽक्षीवमोचकाः ॥ १०६ ॥
तद्बीजं श्वेतमरिचं मधुशिग्रुस्तु लोहितः ।
शिग्रुः सरः कटुः पाके तीक्ष्णोष्णो मधुरो लघुः ॥ १०७ ॥
दीपनो रोचनो रूक्षः क्षारस्तिक्तो विदाहकृत् ।
संग्राही शुक्रलो हृद्यो पित्तरक्तप्रकोपनः ॥ १०८ ॥
चक्षुष्यः कफवातघ्नो विद्रधिश्वयथुकृमीन् ।
मेदोपचीविषप्लीहगुल्मगंडव्रणान् हरेत ॥ १०९ ॥
श्वेतः प्रोक्तगुणो ज्ञेयो विशेषाद्दीपनः सरः ।
प्लीहानं विद्रधिं हंति व्रणघ्नः पित्तरक्तकृत् ॥ ११० ॥
मधुशिग्रुः प्रोक्तगुणो विशेषाद्दीपनः सरः ।
शिग्रुवल्कलपत्राणां स्वरसः परमार्तिहृत् ॥ १११ ॥
चक्षुष्यं शिग्रुजं बीजं तीक्ष्णोष्णं विषनाशनम् ।
अवृष्यं कफवातघ्नं तन्नस्येन शिरोर्तिहृत् ॥ ११२ ॥

श्वेतनीलपुष्पा[2] अपराजिता ।

आस्फोता गिरिकर्णी स्यात् विष्णुक्रांतापराजिता ।
अपराजिते कटुमेध्ये शीते कंठ्ये सुदृष्टिदे ॥ ११३ ॥
कुष्ठमूत्रत्रिदोषामशोथव्रणविषापहे ।
कषाये कटुके पाके तिक्ते च स्मृतिबुद्धिदे ॥ ११४ ॥

सिंदुवार[3]ः ।

सिंदुवारः श्वेतपुष्पः सिंदुकः सिंदुवारकः ।

---

१ दे०भा०सुहांजना । वं० भा० सजिनेहना । इं० होर्सरेडीशट्री Horse Rudishtree. पीतस्तु कांचनो ग्राही दीपनो व्रणरोपणः । तुवरो मूत्रकृच्छ्रस्य कफवाय्वोर्विनाशनः॥कांचन्युक्ता शीर्षरुजं त्रिदोषं च विनाशयेत्।स्तन्यस्य वर्द्धनकरी कथिता सूक्ष्मदर्शिभिः । २ दे० भा० सुफेदनीलकोयल । वं०भा०अपराजिता । इं० मजीरयुतराहिंदी । ३ दे०भा०संभाल्रू, मेउडी, मंडूआ, माह्ला, वं० भा० निर्शिंदा । फा०परंगुश्तुखमेपञ्जंगुश्त मिसवान कर्तरीवन्या । इं०फाईवलीव्डचेस्टट्री Five leaved chastetree (तंत्रांतरे) इंद्राणिकेंद्रसुरसा निर्गुण्डी सिंधुवारकः ।

नीलपुष्पी तु निर्गुंडी शेफाली सुवहा च सा ॥ ११५ ॥
सिंदुकः स्मृतिदस्तिक्तः कषायः कटुको लघुः ।
केश्यो नेत्रहितो हंति शूलशोथाममारुतान् ॥ ११६ ॥
कृमिकुष्ठारुचिश्लेष्मव्रणान्नीला हि तद्विधा ।
सिंदुवारदलं जंतुवातश्लेष्महरं लघु ॥ ११७ ॥

कुटजः[1] ।

कुटजः कुटिजः कौटो वत्सको गिरिमल्लिका ।
कालिंगश्चक्रशाखी च मल्लिकापुष्प इत्यपि ॥ ११८ ॥
इंद्रयवफलः प्रोक्तो वृष्यकः पांडुरद्रुमः ।
कुटजः कटुको रूक्षो दीपनस्तुवरो हिमः ॥ ११९ ॥
अर्शोतिसारपित्तास्रकफतृष्णामकुष्ठजित् ।

करंजो[2] ह्रस्वकरंजः ।

करंजो नक्तमालश्च करजश्चिरबिल्वकः ॥ १२० ॥
घृतपूर्णः करंजोऽन्यः प्रकीर्यः पूतिकोऽपि च ।
स चोक्तः पूतिकारंजः सोमवल्कश्च स स्मृतः ॥ १२१ ॥
करंजः कटुकस्तीक्ष्णो वीर्य्योष्णो योनिदोषहृत् ।
कुष्ठोदावर्तगुल्मार्शोव्रणक्रिमिकफापहा ॥ १२२ ॥
तत्पत्रं कफवातार्शःकृमिशोथहरं परम् ।
भेदनं कटुकं पाके वीर्योष्णं पित्तलं लघु ॥ १२३ ॥
तत्फलं कफवातघ्नं मेहार्शःकृमिकुष्ठजित् ।
घृतपूर्णकरंजोऽपि करंजसदृशो गुणैः ॥ १२४ ॥

---

१ दे० भा० कुडासक, बं० भा० कुरचि । इं० ओवल्लिव्ड्रोझवे, Ovalleaved rose bay. २ दे० भा० करंजुआ । बं० भा० डहरकरंज । इं० स्मूथलीव्ड पोन गेमिया। Smooth leaved pongamra, फा० इबलीस, रवाय, ई० बोडनढकट्। Banducut. करंजतैलं तीक्ष्णोष्णं कृमिहृद्रक्तपित्तकृत्। नयनामयवातार्तिकुष्ठकंडुव्रणप्रणुत् । वातनुत् पित्तकृत्किंचिल्लेपनाच्चर्मदोषनुत् ॥

तृतीयः करंजः ।

उदकीर्य्यस्तृतीयोन्यः षड्ग्रंथो हस्तिवारुणी ।
कर्कटी वायसी चापि करंजी करभंजिका ॥ १२५ ॥
करंजी स्तंभनी तिक्ता तुवरा कटुपाकिनी ।
वीर्य्योष्णा वमिपित्तार्शःकृमिकुष्ठप्रमेहजित् ॥ १२६ ॥

श्वेतरक्तगुंजे[1] ।

श्वेता गुंजोच्चटा प्रोक्ता कृष्णला चापि सा स्मृता ।
रक्ता सा काकचिंची स्यात्काकणंती च रक्तिका ॥१२७॥
काकादनी काकपीलुः सा स्मृतांगारवल्लरी ।
गुंजाद्वयं तु केश्यं स्यात् वातपित्तज्वरापहम् ॥ १२८ ॥
मुखशोषभ्रमश्वासतृष्णामदविनाशिनी ।
नेत्रामयहरं वृष्यं बल्यं कंडुव्रणापहम् ॥ १२९ ॥
कृमींद्रलुप्तकुष्ठानि रक्ताबद्धबलापि च ।

कपिकच्छुः[2] ।

कपिकच्छुरात्मगुप्ता रिष्यप्रोक्ता च मर्कटी ॥ १३० ॥
अजहा कंडुराध्यंडा दुःस्पर्शा प्रावृषायणी ।
लांगूली शूकशिंबी च सैव प्रोक्ता महर्षिभिः ॥ १३१ ॥
कपिकच्छुर्भृशं वृष्या मधुरा बृंहणी गुरुः ।
तिक्ता वातहरी बल्या कफपित्तास्रनाशिनी ॥ १३२ ॥
तद्बीजं वातशमनं स्मृतं वाजीकरं परम् ।

---

१ दे० भा० रत्ती सुफेद, वा लाल, चिर्मटी, घुंघुची । वं० भा० कुंच । श्वेतगुंजा, तृणज्योतिः । फा० चश्मेखरूस । इं० वीड्ट्री । Beadtree. (वृद्धयोगतरंगिणी) गुंजा च कांजिके स्विन्ना प्रहरं शुद्धयति ध्रुवम् ॥
२ दे०भा० कौंचबीज, कौंछकिवांच, बृहती लघ्वी । वं० भा० आलकुशी । इं० कौहेज् । Cowhage.

रोहिणी[1]।

मांसरोहिण्यतिविषा वृत्ता चर्मकषा कृशा ॥ १३३ ॥
प्रहारवल्ली विकसा वीरवत्यपि कथ्यते।
स्यान्मांसरोहिणी वृष्या सरा दोषत्रयापहा ॥ १३४ ॥

चिल्लकः।

चिल्लको वातनिर्हारी श्लेष्मघ्नो धातुपुष्टिकृत्।
आग्नेयो विषवृक्षस्य फलं मत्स्यनिषूदनम् ॥ १३५ ॥

टंकारी।

टंकारी वातजित्तिक्ता श्लेष्मघ्नी दीपनी लघुः।
शोथोदरव्यथाहंत्री हिता पीठविसर्पिणाम् ॥ १३६ ॥

वेतसः[2]।

वेतसो नम्रकः प्रोक्तो वानीरो वंजुलस्तथा।
अभ्रपुष्पश्च विदुलो रथः शीतश्च कीर्तितः ॥ १३७ ॥
वेतसः शीतलो दाहशोथार्शोयोनिरुक्प्रणुत्।
हंति वीसर्पकृच्छ्रास्रपित्ताश्मरिकफानिलान् ॥ १३८ ॥

जलवेतसः।

नकुंचकः परिव्याधो नादेयी जलवेतसः।
जलजो वेतसः शीतः संग्राही वातकोपनः ॥ १३९ ॥

इज्जलः।

इज्जलो हिज्जलश्चापि निचुलश्चांबुजस्तथा।
जलवेतसवद्वेद्यो हिज्जलोऽयं विषापहा ॥ १४० ॥

---

१ दे० भा० रोहिणी, दो प्रकार, इं० रेडवुडट्री। Redwoodtree. यह वृक्ष जंगल में अधिक होता है। पत्ते खिरनीके सदृश। सात सात, फल अत्यन्त सूक्ष्म। २ दे० भा० बैंत, वं० भा० वयसा, फा० बेत, इं० रोटा केन Cane. जलवेतस, मजनू, पंजाबी स्थलवेतस।

अंकोटः ।

अंकोटो दीर्घकीलः स्यादंकोलश्च निकोचकः ।
अंकोटकः कटुस्तीक्ष्णः स्निग्धोष्णस्तुवरो लघुः ॥ १४१ ॥
रेचनः कृमिशूलामशोफग्रहविषापहा ।
विसर्पकफपित्तास्रमूषिकाहिविषापहा ॥ १४२ ॥
तत्फलं शीतलं स्वादु श्लेष्मघ्नं बृंहणं गुरु ।
बल्यं विरेचनं वातपित्तदाहक्षयास्रजित् ॥ १४३ ॥

बला, महाबला, अतिबला, नागबला ।

बला वाट्यालिका वाट्या सैव वाट्यालकापि च ।
महाबला पीतपुष्पा सहदेवी च सा स्मृता ॥ १४४ ॥
ततोऽन्यातिबला रिष्यप्रोक्ता कंकतिका सहा ।
गांगेरुकी नागबला झषा ह्रस्वा गवेधुका ॥ १४५ ॥
बलाचतुष्टयं शीतं मधुरं बलकांतिकृत् ।
स्निग्धं ग्राहि समीरास्रपित्तास्रक्षतनाशनम् ॥ १४६ ॥

लक्ष्मणा ।

पुत्रकाकाररक्ताल्पबिंदुभिर्लाञ्छिता सदा ।
लक्ष्मणा पुत्रजननी वस्तगंधाकृतिर्भवेत् ॥ १४७ ॥
कथिता पुत्रदा वश्या लक्ष्मणा मुनिपुंगवैः ।

---

१ दे० भा० ढेरा, ठेरा, वं० भा० आंकड । इं० ठोलीव्रडसल्युरिटीस् । यह वृक्ष वन में अधिक होता है । पत्ता एक अंगुल चौडा ५ वा ६ अंगुल लंबा कच्चा फल नीला, पक्का लाल । २ दे० भा० खरैटी । वं० भा० वेडेला, प० भा० द्रडिआ । इं० हार्टलीव्रडसिडा । Heart leaved sida. महाबला=सहदेई । अतिबल=कंघी, इं० इंडयनमेलो । Indian Malow. नागबला=गंगेरन, वं० भा० गोरखाचाकुले । गांगेरुकीफलं रूक्षं कषायं स्वादुवातलम् । लेखनं स्तंभनं शीतं विबंधाध्मानकृद्गुरु ॥ बलामूलत्वचश्चूर्णं सक्षीरं च सशर्करम् । मूत्रातिसारं हरति दृष्टमेतन्न संशयः ।

स्वर्णवल्ली[1]।

स्वर्णवल्ली रक्तफला काकायुः काकवल्लरी ॥ १४८ ॥
स्वर्णवल्ली शिरःपीडां त्रिदोषं हंति दुग्धदा।

कार्पासी[2]।

कार्पासी तुंडकेशी च समुद्रांता च कथ्यते ॥ १४९ ॥
कर्पासको लघुः कोष्णो मधुरो वातनाशनः।
तत्पलाशं समीरघ्नं रक्तकृन्मूत्रवर्द्धनम् ॥ १५० ॥
तत्कर्णपिडकानादपूयास्रावविनाशनम्।
तद्बीजं स्तन्यदं वृष्यं स्निग्धं कफकरं गुरु ॥ १५१ ॥

वंशः[3]।

वंशस्त्वक्सारकर्मारत्वचिसारतृणध्वजाः।
शतपर्वायवफलोवेणुमस्करतेजनाः ॥ १५२ ॥
वंशः सरो हिमः स्वादुः कषायो वस्तिशोधनः।
छेदनःकफपित्तघ्नः कुष्ठास्रव्रणशोथजित् ॥ १५३ ॥
तत्करीरः कटुः पाके रसे रूक्षो गुरुः सरः।
कषायः कफकृत्स्वादुर्विदाही वातपित्तलः ॥ १५४ ॥
तद्यवास्तु सरा रूक्षाः कषायाः कटुपाकिनः।
वातपित्तकरा उष्णा बद्धमूत्राः कफापहाः ॥ १५५ ॥

नलः[4]।

नलः पोटगलः शून्यमध्यश्च धमनस्तथा।
नलस्तु मधुरस्तिक्तः कषायः कफरक्तजित् ॥ १५६ ॥

---

१ स्वर्णवल्ली=सोनली जीवंती भेद। २ दे० भा० कपास, रूई, बं०भा० कार्पास। फा० कुतन, पुंबेदाना। इं० काटन् Cotton. ३ दे० भा० बांस, सरंध्रबांस। बं० भा० बांश। फा०कसब। इं०बेंबूकेन। Bamboo cane. ४ दे० भा० नरसल, नल, महानल, देवनल, बं० भा० नल। इं० इंडियन टोबेको॥ Indian tobacco.

मुंज[1]ः ।

भद्रमुंजः शरो बाणस्तेजनश्चेक्षुमंडनः ।
मुंजो मुंजातको बाणः स्थूलदर्भः सुमेखलः ॥ १५७ ॥
मुंजद्वयं तु मधुरं तुवरं शिशिरं तथा ।
दाहतृष्णाविसर्पास्रमूत्रकृच्छ्राक्षिरोगहृत् ॥ १५८ ॥
दोषत्रयहरं वृष्यं मेखलासूपयुज्यते ।

का[2]सः ।

कासः कासेक्षुरुद्दिष्टः स स्यादिक्षुरकस्तथा ॥ १५९ ॥
इक्ष्वालिकेक्षुगंधा च तथा पोटगलः स्मृतः ।
कासः स्यान्मधुरस्तिक्तः स्वादुपाको हिमः सरः ॥ १६० ॥
मूत्रकृच्छ्राश्मदाहास्रक्षयपित्ताक्षिरोगजित् ।

गुं[3]द्रः ।

गुंद्रः पटेरको गुत्थः शृंगवेराभमूलकः ॥ १६१ ॥
गुंद्रः कषायो मधुरः शिशिरः पित्तरक्तजित् ।
स्तन्यः शुक्ररजोमूत्रशोधनो मूत्रकृच्छ्रहृत् ॥ १६२ ॥

एरका ।

एरका गुंद्रमूला च शिवगुंद्रा शरीति च ।
एरका शिशिरा वृष्या चक्षुष्या वातकोपिनी ॥ १६३ ॥
मूत्रकृच्छ्राश्मरीदाहपित्तशोणितनाशिनी ।

कु[4]शः ।

कुशो दर्भस्तथा बर्हिः सूच्यग्रो यज्ञभूषणः ॥ १६४ ॥
ततोऽन्यो दीर्घपत्रः स्यात्क्षुरपत्रस्तथैव च ।

---

१ दे० भा० मुंज, सरकंडा, बं० भा० सरपत । २ दे० भा० काही, कास । बं भा० केशेघास । ३ दे० भा० डिभ, एरका, गोसपटेर । इं० एलिफेंट्ग्रास । Elephant grass, ४ दे० भा० दाभ, डाभ, कुशा । बं० भा० कुश ।

दर्भद्वयं त्रिदोषघ्नं मधुरं तुवरं हिमम् ॥ १६५ ॥
मूत्रकृच्छ्राश्मरीतृष्णा वस्तिरुक्प्रदरास्रजित् ।

कत्तृणं[1] ।

कत्तृणं रोहिषं देवजग्धं सौगंधिकं तथा ॥ १६६ ॥
भूतीकं ध्याम पौरं च श्यामकं धूपगंधिकम् ।
रोहिषं तुवरं तिक्तं कटुपाकं व्यपोहति ॥ १६७ ॥
हृत्कंठव्याधिपित्तास्रशूलकासकफज्वरान् ।

भूस्तृणम्[2] ।

भूतीकं गुह्यबीजं च सुगंधं गोमयप्रियम् ॥ १६८ ॥
भूस्तृणं तु भवेच्छत्रा मालातृणकमित्यपि ।
भूस्तृणं कटुकं तिक्तं तीक्ष्णौष्णं रेचनं लघु ॥ १६९ ॥
विदाहि दीपनं रूक्षमनेत्र्यं मुखशोधनम् ।
अवृष्यं बहुविट्कं च पित्तरक्तप्रदूषणम् ॥ १७० ॥

नीलदूर्वा[3] ।

नीलदूर्वारुहानंता भार्गवी शतपर्विका ।
शष्पा सहस्रवीर्य्या च शतवल्ली च कीर्तिता ॥ १७१ ॥
नीलदूर्वा हिमा तिक्ता मधुरा तुवरा हरेत् ।
कफपित्तास्रवीसर्पतृष्णादाहत्वगामयान् ॥ १७२ ॥

श्वेतदूर्वा ।

दूर्वा शुक्ला तु गोलोमी शतवीर्य्या च कथ्यते ।
श्वेतदूर्वा कषाया स्यात्स्वाद्वी व्रण्या च दीपनी ॥ १७३ ॥
तिक्ता हिमा विसर्पास्रतृट्पित्तकफदाहहृत् ।

---

१ दे० भा० खवीघास, असखर, मिरचियागंध, रोहिष, दीर्घ रोहिष । बं० भा० रामकर्पूर । फा० खवाल० मामून । २ दे० भा० खुंब, ढाल, सांप की छत्री । ३ दे० भा० दूब नीलदूब, सुफेददूब । वं० भा० गेंटेदूर्वा । इं० क्रांपिंग् साईनोडन् ।

*गंडदूर्वा ।

गंडदूर्वा तु गंडीरी मत्स्याक्षी शकुलादनी ॥ १७४ ॥
गंडदूर्वा हिमा लोहद्रावणी ग्राहणी लघुः ।
तिक्ता कषाया मधुरा वातकृत्कटुपाकिनी ॥ १७५ ॥
दाहतृष्णाबलासास्रकुष्ठपित्तज्वरापहा ।

विदारीकंद[1] । वाराहीकंद[2] ।

वाराहीकंदएवान्यश्चर्मकारालुको मतः ॥ १७६ ॥
अनूपे स भवेद्देशे वाराह इव लोमवान् ।
विदारी स्वादुकंदा च सा तु क्रोष्ट्री सिता मता ॥ १७७ ॥
इक्षुगंधा क्षीरवल्ली क्षीरशुक्ला पयस्विनी ।
वाराही वरदा घृष्टिर्वदरेत्यभिधीयते ॥ १७८ ॥
विदारी मधुरा स्निग्धा बृंहणी स्तन्यशुक्रदा ।
शीता स्वर्य्या मूत्रला च जीवनी बलवर्णदा ॥ १७९ ॥
गुरुः पित्तास्रपवनदाहान्हंति रसायनी ।

मूषली[3] ।

तालमूली तु विद्वद्भिर्मूषली परिकीर्तिता ॥ १८० ॥
मूषली मधुरा वृष्या वीर्य्योष्णा बृंहणी गुरुः ।
तिक्ता रसायनी हंति गुदजान्यनिलं तथा ॥ १८१ ॥

शतावरी[4] ।

शतावरी बहुसुता भीरुरिंदीवरी वरी ।
नारायणी शतपदी शतवीर्य्या च पीवरी ॥ १८२ ॥

---

* गंडदूर्वा=पंजाबमें प्रसिद्ध है । १ दे० भा० विलैयाकंद । प० भा० सियाली । वं० भा० भूईकुमडा २ दे०भा० चमार, आलू । प० भा०कित्था । पश्चिम भा०गेठी । ३ दे० भा०मूसलीसुफेद,स्याहमूसली । वं०भा०तालमूली । ४ दे० भा० सहंसपाओं वं० भा० शतमूली । फा० गुर्जदस्ति । इं० रामये-रेगम् रेसिन्योसम् । क्रोष्टिका तु रसे स्वाद्वी पाकेऽपि मधुरैवसा । पित्तघ्नी शीतवीर्य्या च वातश्लेष्मकरी गुरुः । वाराही तु रसे स्वाद्वी तिक्ता पाके पुनः कटुः । शुक्रायुःस्वरवर्णाग्निबलपित्तविवर्द्धिनी । कफकुष्ठमरुन्मेहकृमिहृच्च रसायनी ।

महाशतावरी चान्या शतमूल्यूर्द्ध्वकंटिका ।
सहस्रवीर्य्या हेतुश्च रिष्यप्रोक्ता महोदरी ॥ १८३ ॥
शतावरी गुरुः शीता तिक्ता स्वाद्वी रसायनी ।
मेधाग्निपुष्टिदा स्निग्धा नेत्र्या गुल्मातिसारजित् ॥१८४॥
शुक्रस्तन्यकरी बल्या वातपित्तास्रशोथजित् ।
महाशतावरी मेध्या हृद्या वृष्या रसायनी ॥ १८५ ॥
शीतवीर्य्या निहंत्यर्शोग्रहणीनयनामयान् ।

अंकुरः ।

तदंकुरस्त्रिदोषघ्नो लघुरर्शःक्षयापहा ॥ १८६ ॥

अश्वगंधा[1] ।

गंधांता वाजिनामादिरश्वगंधा हयाह्वया ।
वाराहकर्णी वरदा वदरा कुष्ठगंधिनी ॥ १८७ ॥
अश्वगंधानिलश्लेष्मश्वित्रशोथक्षयापहा ।
बल्या रसायनी तिक्ता कषायोष्णातिशुक्रला ॥ १८८ ॥

पाठा[2] ।

पाठांबष्ठांबष्ठकी च प्राचीना पापचेलिका ।
एकाष्ठीला रसा प्रोक्ता पाठिका वरतिक्तिका ॥ १८९ ॥
पाठोष्णा कटुका तीक्ष्णा वातश्लेष्महरी लघुः ।
हंति शूलज्वरच्छर्दिकुष्ठातीसारहृद्रुजः ॥ १९० ॥
दाहकंडुविषश्वासकृमिगुल्मगरव्रणान् ।

श्वेता[3] निशोथा ।

श्वेता त्रिवृत् त्रिभंडी स्यात् त्रिवृता त्रिपुटापि च ॥ १९१ ॥

---

१ दे० भा० असगंध । बं० भा० अश्वगंधा । फा० मेहेमनूवररी इं० विंटरचेरी Winter eherry, अश्वगंधा पत्रलेपो ग्रंथिगंडापचीर्हरेत् । २ दे० भा० घोडसूंबी । प० भा० वटांडु । बं० भा० अकनादि, निमुक । इं० पुरेराव्ट् । फा० दनुजअकबरी । पलाहजडी, जलजमनीलघ्वीबृहती । ३ दे० भा० निसोत, पनिलर, त्रिवी, श्याम, श्वेत, रक्त । बं०भा० तेडडी । फा० निसोथ । इं० टरवीथरुट् । Turbith root

सर्वानुभूतिः सरलो निशोथो रेचनीति च ।
श्वेता त्रिवृद्रेचनी स्यात् स्वादुरुष्णा समीरहृत ॥ १९२ ॥
रूक्षा पित्तज्वरश्लेष्मपित्तशोथोदरापहा ।

श्यामात्रिवृत् ।

त्रिवृच्छ्यामार्द्धचंद्रा च पालिंदी च सुषेणिका ॥ १९३ ॥
श्यामा त्रिवृत्ततो हीनगुणा तीव्रविरेचनी ।
मूर्च्छादाहमदभ्रांतिकंठोत्कर्षणकारिणी ॥ १९४ ॥

लघ्वीदंती ।

लघ्वी दंती विशल्या च स्यादुदुंबरपर्ण्यपि ।
तथैरंडफला शीघ्रा श्येनघंटा घुणप्रिया ॥ १९५ ॥
वाराहांगी च कथिता निकुंभश्च मुकूलकः ।

बृहद्दंती ।

द्रवंती शंबरी चित्रा प्रत्यक्पर्ण्याखुपर्ण्यपि ॥ १९६ ॥
चित्रोपचित्रा न्यग्रोधी सुतश्रेणी तथा वृषा ।
दंतीद्वयं सरं पाके रसे च कटुदीपनम् ॥ १९७ ॥
गुदांकुराश्मशूलार्शःकंडुकुष्ठविदाहनुत् ।
तीक्ष्णोष्णं हंति पित्तास्रकफशोथोदराक्रिमीन् ॥ १९८ ॥

लघुदंतीफलम् ।

क्षुद्रदंतीफलं तु स्यान्मधुरं रसपाकयोः ।
शीतलं सृष्टविण्मूत्रं गरशोथकफापहम् ॥ १९९ ॥

बृहद्दंतीफलम् ।

जयपालो दंतिबीजं विख्यातं तिंतणीफलम् ।
जयपालो गुरुः स्निग्धो रेचनः पित्तकफापहा ॥ २०० ॥

---

१ दे० भा० दंदनदाना, तिरिफल । बं० भा० दंती छाल । फा० दंद । इं० क्रोटन्सीडस । Croten seeds. २ दे० भा० मुगलाई अंड । फा० शकारहुज़ुव । इं० दीफिझिकनट् The physicient. ३ दे० भा० जमालगोटा, जप्पोलोटा, बं० भा० जैपाल फा० तुखमेबेदंजीरखताई । इं०: पार्जिगक्रोटन् । Parging Broton

ऐंद्रीवारुणी[1] ।

ऐंद्रींद्रवारुणी चित्रा गवाक्षी च गवादनी ।
वारुणी च परा शुक्ला सा विशाला महाफला ॥ २०१ ॥
श्वेतपुष्पा मृगाक्षी च मृगैर्वारुर्मृगादनी ॥
गवादनीद्वयं तिक्तं पाके कटुसरं लघु ॥ २०२ ॥
वीर्य्योष्णं कामलापित्तकफप्लीहोदरापहम् ।
श्वासकासापहं कुष्ठगुल्मग्रंथिव्रणप्रणुत ॥ २०३ ॥
प्रमेहमूढगर्भामगंडामयविषापहम् ।

नीली[2] ।

नीली तु नीलिनी तूणी काला दोला च नीलिका॥२०४॥
रंजनी श्रीफली तुत्था ग्रामीणा मधुपर्णिका ।
क्लीतिका कालकेशी च नीलपुष्पा च सा स्मृता ॥ २०५ ॥
नीलनी रेचनी तिक्ता केश्या मोहभ्रमापहा ।
उष्णा हंत्युदरप्लीहवातरक्तकफानिलान् ॥ २०६ ॥
आमवातमुदावर्त मदं च विषमुद्धतम् ।

शरपुंखा[3] ।

शरपुंखा प्लीहशत्रुर्नीलवृक्षाकृतिश्च सा ॥ २०७ ॥

---

१ दे० भा० तुम्मा, फरफेंदु, बृहती, लध्वी, बं० भा० कुंदुरुकी, फा० खुर्य्या जातलख, इं० कोलोसिंथ, Colocynth. (शुद्धि) स्विन्नं गोमयतोये वा दुग्धे वा जयपालकम् । खर्परे मृदुघृष्टं तन्निस्नेहं शुद्धिमृच्छति ॥ २ दे०भा० नील, नीलबुन्हा, बृहती, लध्वी, कालादाना । बं० भा० नीलगुछी, इं० इंडिगो । Indigo. ३ दे० भा० झाणा, झोजरु । बं० भा० बननील, इं० परपलटेप्रोझिया । PurPletephrosia. श्वेतशरपुंख,सितसायका, सितपुंखा, श्वेतपुंखा, शुभ्रपुंखा, कंठपुंखा ।

शरपुंखो यकृत्प्लीहगुल्मव्रणविषापहा ।
तिक्तः कषायः कासास्रश्वासज्वरहरो लघुः ॥ २०८ ॥

वृद्धदारकः[1] ।

वृद्धदारक आवेगी छागांत्री रिष्यगंधिका ।
वृद्धदारकः कषायोष्णः कटुस्तिक्तो रसायनः ॥ २०९ ॥
वृष्यो वातामवातार्शःशोथमेहकफप्रणुत् ।
शुक्रायुर्बलमेधाग्निस्वरकांतिकरः सरः ॥ २१० ॥

यवासा[2] दुरालभा[3] ।

यासो यवासो दुःस्पर्शः धन्वयासः कुनाशकः ।
दुरालभा दुरालंभा समुद्रांता च रोदनी ॥ २११ ॥
गांधारी कच्छुरानंता कषाया दुरभा ग्रहा ।
यासः स्वादुःसरस्तिक्तस्तुवरः शीतलो लघुः ॥ २१२ ॥
कफमेदोमदभ्रांतिपित्तास्रकुष्ठकासजित् ।
तृष्णाविसर्पवातास्रवमिज्वरहरः स्मृतः ॥ २१३ ॥
यवासस्य गुणैस्तुल्या बुधैरुक्ता दुरालभा ।

मुंडी[4] ।

मुंडी भिक्षुरपि प्रोक्ता श्रावणी च तपोधना ॥ २१४ ॥
श्रावणाह्वा मुंडितिका तथा श्रवणशीर्षिका ।
महाश्रावणिका त्वन्या सा स्मृता भूकदंबिका ॥ २१५ ॥
कदंबपुष्पिका च स्यादव्यथातिलपस्विनी ।
मुंडितिका कटुः पाके वीर्य्योष्णा मधुरा लघुः ॥ २१६ ॥
मेध्या गंडापचीकुष्ठकृमियोन्यर्तिपांडुलुत् ।

---

१ दे० भा० भिधरा । श्वेत कृष्ण, वं० भा० वितारक । २ दे० भा० जवांह । जवांसा । वं० भा० यवासा । फा० फराकुनुन ३ दे० भा० धमांह । रक्तपुष्प होता है । वं० भा० दुरालभा । फा० वादावर्द । ४ दे० भा० मुंडी, गोरखमुंडी । वं० भा० मुंडीरी, थुलकुडी ।

श्लीपदारुच्यपस्मारप्लीहमेदोगुदार्तिहृत् ॥ २१७ ॥
महामुंडी च तुल्या हि गुणैरुक्ता महर्षिभिः ।

अपामार्गः[1] ।

अपामार्गस्तु शिखरी ह्यधःशल्यो मयूरकः ॥ २१८ ॥
मर्कटी दुर्ग्रहा चापि किणही खरमंजरी ॥ २१९ ॥
अपामार्गः सरस्तीक्ष्णः दीपनस्तिक्तकः कटुः ।
पाचनो नावनश्छर्दिकफमेदोनिलापहा ॥ २२० ॥
निहंति हृद्रुजाध्मानार्शःकंडुशूलोदरापचीः ।

रक्तापामार्गः[2] ।

रक्तोऽन्यो वशिरो वृन्तफलो धामार्गवोपि च ॥ २२१ ॥
प्रत्यक्पर्णी केशपर्णी कथिता कपिपिप्पला ।
अपामार्गोरुणो वातविष्टंभी कफहृद्धिमः ॥ २२२ ॥
रूक्षः पूर्वगुणैर्न्यूनः कथितो गुणवेदिभिः ।
अपामार्गफलं स्वादु रसे पाके च दुर्जरम् ॥ २२३ ॥
विष्टंभि वातलं रूक्षं रक्तपित्तप्रसादनम् ।

कोकिलाक्षः[3] ।

कोकिलाक्षस्तु काकेक्षुरिक्षुरः क्षुरिकः क्षुरः ॥ २२४ ॥
भिक्षुः कांडेक्षुरप्युक्तः इक्षगंधेक्षुवालिका ।
क्षुरकः शीतलो वृष्यः स्वाद्वम्लः पिच्छलस्तथा ॥ २२५ ॥
तिक्तो वातामशोथाश्मतृष्णादृष्ट्यनिलास्रजित् ।

अस्थिसंहारी[4] ।

ग्रंथिमानस्थिसंहारी वज्रांगी चास्थिशृंखला ॥ २२६ ॥

---

१ दे०भा० अपुठकंडा, लटजीरा। ओंगा । वं० भा०आपांडग । फा०खारवासगोता। इं०रफ्चेफ्टी। तंत्रांतरे। मयूरचूलिका चेति नततंडुकश्च सः। २ दे० भा० लालपुठकंडा । लालचिरचिटा । वं०भा० रांगाआपांग ३ दे०भा०तालमखाना । कैलया । वृद्ध, ह्रस्वा । वं० भा०कुलेकांटा । इं० लांगलिवुवार्लेरिया । Longiliwowarleiria. ४ दे० भा०हाडजोड । कुही वं०भा०-हाडभांगा ।

अस्थिसंहारिकः प्रोक्तो वातश्लेष्महरोऽस्थियुक् ।
उष्णः सरः कृमिघ्नश्च दुर्नामा चाक्षिरोगहृत् ॥ २२७ ॥
रूक्षः स्वादुर्लघुर्वृष्यः पाचनः पित्तलः स्मृतः ।
भिषग्वरैर्यथानाम फलञ्चापि प्रकीर्तितम् ॥ २२८ ॥
कांडं त्वग्विरहितमस्थिशृंखलाया
माषार्द्धं द्विदलमकंचुकं तदर्द्धम् ।
संपिष्टं तदनु ततस्तिलस्य तैले
संपकं वटकमतीव वातहारि ॥ २२९ ॥

महाजालनी[1] ।

महाजालनिका चर्मरंगः स्यान्नीलपुष्पिका ।
आवर्तकी तिंदुकिनी त्रिभांडी रक्तपुष्पिका ॥ २३० ॥
महाजालनिका तिक्ता रेचनी कफपित्तजित् ।
हंति दाहोदरानाहशोफकुष्ठकफज्वरान् ॥ २३१ ॥

कुमारी[2] ।

कुमारी गृहकन्या च कन्या घृतकुमारिका ।
कुमारी भेदनी शीता तिक्ता नेत्र्या रसायनी ॥ २३२ ॥
मधुरा बृंहणी बल्या वृष्या वातविषप्रणुत् ।
गुल्मप्लीहयकृद्वृद्धिकफज्वरहरी भवेत् ॥ २३३ ॥
ग्रंथ्यग्निदग्धविस्फोटपीतरक्तत्वगामयान् ।

श्वेतपुनर्नवा[3] ।

पुनर्नवा श्वेतमूला शोथघ्नी दीर्घपत्रिका ॥ २३४ ॥

---

१ दे० भा० सरना, सरनामक्की । बं० भा० सोनामुखी । इं० टिनेवेलीसिना । २ दे० भा० कुआरगंदल, ग्वारपाठा । बं० भा० घृतकुमारी । फा० दरखतेसिब्र । इं० वार्वेडोज् आलोज्ञ । Barbadoesaloes. ३ दे० भा० इटसिट, बिसखपरा, श्वेत, रक्त, नील । बं० भा० गादापुण्या, इं० स्प्रेडिंग्-होगविड् । Spreading Hond?.

कटुः कषायानुरसा पांडुघ्नी दीपनी सरा।
शोफानिलगरश्लेष्महरी व्रण्योदरप्रणुत् ॥ २३५ ॥

रक्तपुनर्नवा।

पुनर्नवापरा रक्ता रक्तपुष्पा शिवाटिका।
शोथघ्नी क्षुद्रवर्षाभूर्वृषकेतुः कठिल्लिका ॥ २३६ ॥
पुनर्नवारुणा तिक्ता कटुपाका हिमा लघुः।
वातला ग्राहिणी श्लेष्मपित्तरक्तविनाशिनी ॥ २३७ ॥

एलायकः[1]।

एलायकः कृष्णबोलः कुमारी सारतोद्भवः।

प्रसारणी[2]।

प्रसारणी राजबला भद्रपर्णी प्रतानिनी ॥ २३८ ॥
सरणी सारणी भद्रबला चापि कटंभरा।
प्रसारणी गुरुर्वृष्या बलसंधानकृत्सरा ॥ २३९ ॥
वीर्य्योष्णा वातहृत्तिक्ता वातरक्तकफापहा।

* कृष्णसारिवा।

कृष्णा तु सारिवा श्यामा गोपी गोपवधूश्च सा ॥ २४० ॥
धवला सारिवा गोपी गोपकन्या च शारदी।
स्फोटा श्यामा गोपवल्ली लता स्फोता च चंदना ॥ २४१ ॥

सारिवा[3]।

सारिवायुगलं स्वादु स्निग्धं शुक्रकरं गुरु।

---

१ दे० भा० एलुवा। फा० मुसवीर। इं० सैकोट्नआलाझ। secotrne aloes. २ दे० भा० खींप, पसरन, सरहटी, चांदवेल वं० गंधमादुलिया। तंत्रांतरे—कल्याणी हेमपत्री च रेचनी स्वर्णपत्रिका। * हेमेडिसरुट जामुन खुंब। प० भा० टेरनी। ३ दे भा० सांई, करिप्यासिसांऊ। वं० भा० अनंतमूल, इं० इंडिअन्सार्सापरिला। Indian sarsaparilla, इसकी जटा, सालसापरेला। इयमपि जंबुवत्पत्रा दुग्धगर्भाव्रततिः।

अग्निमांद्यारुचिश्वासकासामविषनाशनम् ॥ २४२ ॥
त्रिदोषत्रयास्रप्रदरज्वरातीसारनाशनम् ।

भृंगराजः[1] ।

भृंगराजो भृंगरजो मार्कवो भृंग एव च ॥ २४३ ॥
अंगारकः केशराजो भृंगारः केशरंजनः ।
भृंगारः कटुकस्तिक्तो रूक्षोष्णः कफवातनुत् ॥ २४४ ॥
केश्यस्त्वच्यः कृमिश्वासकासशोथामपांडुनुत् ।
दंत्यो रसायनो बल्यः कुष्ठनेत्रशिरोर्त्तिनुत् ॥ २४५ ॥

शणपुष्पी[2] ।

शणपुष्पी स्मृता घंटारवा शणसमाकृतिः ।
शणपुष्पी कटुस्तिक्ता वामनी कफपित्तजित् ॥ २४६ ॥

त्रायमाणा[3] ।

बलभद्रा त्रायमाणा त्रायंती गिरिसानुजा ।
त्रायंती तुवरा तिक्ता सरा पित्तकफापहा ॥ २४७ ॥
ज्वरहृद्रोगगुल्मार्शोभ्रमशूलविषप्रणुत् ।

मूर्वा[4] ।

मूर्वा मधुरसा देवी मोरटा तेजनी स्रुवा ॥ २४८ ॥
मधूलिका मधुश्रेणी गोकर्णी पीलुपर्ण्यपि ।
मूर्वा सरा गुरुः स्वादुस्तिक्ता पित्तास्रमेहनुत् ॥ २४९ ॥
त्रिदोषतृष्णाहृद्रोगकंडुकुष्ठज्वरापहा ।

---

१ दे० भा० भंगरा श्वेत, पीत, कृष्ण, वं० भा० भीमराज, फा० जमर्दर, इं० ट्रेलिंग इक्लिपटा । Traling Eclipta. २ दे० भा० झनझनिया, वनशण, छोटीशण, श्वेतण । वं० भा० झनझने । फा० लादनां । इं० फलाक्सहेंप । Flax Hemp. ३ दे० भा० देवबला, वं० भा० बहुला, फा० असप्रक । ४ दे० भा० चूरनहार, मोड, वं० भा० मुर्गा,

काकमाची[1] ।

काकमाची ध्वांक्षमाची काकाह्वा चैव वायसी ॥ २५० ॥
काकमाची त्रिदोषघ्नी स्निग्धोष्णा स्वरशुक्रदा ।
तिक्ता रसायनी शोथकुष्ठार्शोज्वरमेहजित् ॥ २५१ ॥
कटुर्नेत्रहिता हिक्काछर्दिहृद्रोगनाशनी ।

काकनासा[2] ।

काकनासा तु काकांगी काकतुंडफला च सा ॥ २५२ ॥
काकनासा कषायोष्णा कटुका रसपाकयोः ।
कफघ्नी वामनी तिक्ता शोथार्शःश्वित्रकुष्ठहृत् ॥ २५३ ॥

काकजंघा[3] ।

काकजंघा नदीकांता काकतिक्ता सुलोमशा ।
पारावतपदी दासी काका चापि प्रकीर्तिता ॥ २५४ ॥
काकजंघा हिमा तिक्ता कषाया कफपित्तजित् ।
निहंति ज्वरकुष्ठास्रक्रिमिकंडुविषव्रणुत् ॥ २५५ ॥

नागपुष्पी ।

नागपुष्पी श्वेतपुष्पा नागरी रासदूतिका ।
नागरी रोचनी तिक्ता तीक्ष्णोष्णा कफपित्तनुत् ॥ २५६ ॥
विनिहंति विषं शूलं योनिदोषवमिक्रिमीन् ।

मेषशृंगी[4] ।

मेषशृंगी विषाणी स्यान्मेषवल्ल्याजशृंगिका ॥ २५७ ॥
मेषशृंगी रसे तिक्ता वातला श्वासकासहृत् ।
रूक्षा पाके कटुस्तिक्ता व्रणश्लेष्माक्षिशूलनुत् ॥ २५८ ॥

---

१ दे० भा० कैंचमैंच, मकोय । फा० रोवातरीखा इं० नाइट् सेड त्राय-माण, बं० वलाडुसुर । सिलहड आदिग्राम हिमालय प्रांतमें असफाकनाभ इसके फूलोंसे वस्त्र रंजन किये जाते हैं । २ दे० भा०कोआडोडी । बं० भा० केड-पाटंटी । ३ दे० भा० मसी । बं० भा० कांटा गुडकाडली । ४ दे० भा० मेढासिंही, ककडसिंगी । बं० भा० छागलबेंटे । फा०किस्त, इं० स्कुट्री ।

मेषशृंगीफलं तिक्तं कुष्ठमेहकफप्रणुत् ।
दीपनं स्रंसनं कासकृमिव्रणविषापहम् ॥ २५९ ॥

हंसपदी[1] ।

हंसपादी हंसपदी कीटमाता त्रिपादिका ।
हंसपादी गुरुः शीता हंति रक्तविषव्रणान् ॥ २६० ॥
विसर्पदाहातीसारलूताभूतादिरोगनुत् ।

सोमलता[2] ।

सोमवल्ली सोमलता सोमक्षीरी द्विजप्रिया ॥ २६१ ॥
सोमवल्ली त्रिदोषघ्नी कटुस्तिक्ता रसायनी ।

आकाशवल्ली[3] ।

आकाशवल्ली तु बुधैः कथितामरवल्लरी ॥ २६२ ॥
खवल्ली ग्राहणी तिक्ता पिच्छिलाक्ष्यामयापहा ।
तुवराग्निकरी हृद्या पित्तश्लेष्मामनाशिनी ॥ २६३ ॥

पातालगरुडी[4] ।

छिलहिंडो महामूलः पातालगरुडाह्वयः ।
छिलहिंडः परं वृष्यः कफघ्नः पवनापहा ॥ २६४ ॥

वंदा[5] ।

वंदा वृक्षादनी वृक्षभक्ष्या वृक्षरुहापि च ।
वंदाकः स्याद्धिमस्तिक्तः कषायो मधुरो रसे ॥ २६५ ॥
मांगल्यः कफवातास्रक्षोव्रणविषापहा ।

---

१ दे० भा० कीटमारिका, वं० भा० गोपालेलता फा० परस्या उशान इं० मेडन्‌हेर । २ दे० भा०सोमलता । वं० भा० सोमलता । ३ दे० भा० निराधार, आकाशवेल । वं० भा० आलोकलता । ४ दे० भा० छिरेटा प० भा० तरड । वं० भा० शिलिंदा । ५ दे० भा० वांदा । वं० भा० मांदडा ।

वटपत्री[1] ।

वटपत्री तु कथिता मोहनी रेवती बुधैः ॥ २६६ ॥
वटपत्री कषायोष्णा योनिमूत्रगदापहा ।

हिंगुपत्री[2] ।

हिंगुपत्री तु कवरी पृथ्वीका पृथुका पृथुः ॥ २६७ ॥
हिंगुपत्री भवेद्रुच्या तीक्ष्णोष्णा पाचनी कटुः ।
हृद्वस्तिरुग्विबंधार्शःश्लेष्मगुल्मानिलापहा ॥ २६८ ॥

वंशपत्री ।

वंशपत्री वेणुपत्री पिंगा हिंगुशिवाटिका ।
हिंगुपत्रीगुणा विज्ञैर्वंशपत्रीव कीर्तिता ॥ २६९ ॥

मत्स्याक्षी[3] ।

मत्स्याक्षी बाह्लिकी मत्स्यगंधा मत्स्यादनीति च ।
मत्स्याक्षी ग्राहणी सीता कुष्ठपित्तकफास्रजित् ॥ २७० ॥
लघुस्तिक्ता कषाया च स्वाद्वी कटुविपाकिनी ।

सर्पाक्षी[4] ।

सर्पाक्षी स्यात्तु गंडाली तथा नाडीकलायका ॥ २७१ ॥
सर्पाक्षी कटुका तिक्ता सोष्णा कृमिनिकृन्तनी ।
वृश्चिकोंदुरुसर्पाणां विषघ्नी व्रणरोपणी ॥ २७२ ॥

शंखपुष्पी[5] ।

शंखपुष्पी तु शंखाह्वा मांगल्यकुसुमापि च ।
शंखपुष्पी सरा मेध्या वृष्या मानसरोगहृत् ॥ २७३ ॥
रसायनी कषायोष्णा स्मृतिकांतिबलाग्निदा ।
दोषापस्मारभूतादिकुष्ठक्रिमिविषव्रणुत् ॥ २७४ ॥

---

१ दे० भा० बटपत्री । बं० भा० वडपाथरकुचि । इं० लेकोपेडियम् । २ मरहटी बाफली । ३ दे० भा० मछेली, गोरखापान, गोरखतंबोल, तरकलासाग । बं० भा० शालिंचवाशमठ । ४ मरहटी, गिन्नी, जैजैवंती, नेडरीबेल, सहचरी । ५ दे० भा० शंखाहुली, कौडिपाली, भोयभुडक । बं० भा० डानकुनी । दुपहरियाफूल, सुफैदफूल ।

अर्कपुष्पी[1]।

अर्कपुष्पी क्रूरकर्मा पयस्या जलकामुका।
अर्कपुष्पी कृमिश्लेष्ममेहपित्तविकारजित् ॥ २७५ ॥

लज्जालुः[2]।

लज्जालुर्हि शमीपत्रा समंगा जलकर्णिका।
रक्तपादी नमस्कारी नाम्ना खदिरकेत्यपि ॥ २७६ ॥
लज्जालुः शीतला तिक्ता कषाया कफपित्तजित्।
रक्तपित्तमतीसारं योनिरोगान्विनाशयेत् ॥ २७७ ॥

तद्भेदः अलंबुषा।

अलंबुषा खरत्वक् च तथा मेदो गला स्मृता।
अलंबुषा लघुः स्वादुः कृमिपित्तकफापहा ॥ २७८ ॥

दुग्धिका[3]।

दुग्धिका स्वादुपर्णी स्यात्क्षीरावी क्षीरिवी तथा।
दुग्धिकोष्णा गुरू रूक्षा वातला गर्भकारिणी ॥ २७९ ॥
स्वादुक्षीरा कटुस्तिक्ता सृष्टमूत्रमलापहा।
स्वादुर्विष्टंभनी वृष्या कफकोष्ठकृमिप्रणुत् ॥ २८० ॥

भूम्यामलकी[4]।

भूम्यामलकिका प्रोक्ता शिवा तामलकीति च।
बहुपत्रा बहुफला बहुवीर्य्या जटापि च ॥ २८१ ॥
भूधात्री वातकृत्तिक्ता कषाया मधुरा हिमा।
पिपासाकासपित्तास्रकफपांडुक्षतापहा ॥ २८२ ॥

---

१ दे० भा० अंधाहुली। २ दे० भा० लाजवंती, छुईमुई। वं० भा० लाजुक। लज्जालु विपरीतलज्जालु अलंबुषा। ३ दे० भा० दूधी, दोधक। तंत्रांतरे। नागार्जुनी पयोवर्षा योगिनी लघुदुग्धिका। वं० भा० दुदूले। फा० निशाशत। ४ दे० भा० पाताल आंवला। वं० भा० भूई आमला।

ब्राह्मी[1] ।

ब्राह्मी कपोतवंका च सोमवल्ली सरस्वती ।

*ब्रह्ममंडूकी ।

मंडूकपर्णी मांडूकी त्वाष्ट्री दिव्या महौषधी ॥ २८३ ॥
ब्राह्मी हिमा सरा तिक्ता लघुर्मेध्या च शीतला ।
कषाया मधुरा स्वादुपाका पुष्पा रसायनी ॥ २८४ ॥
स्वर्य्या स्मृतिप्रदा कुष्ठपांडुमेहास्रकासजित् ।
विषशोथज्वरहरी तद्वन्मंडूकपर्णिका ॥ २८५ ॥

द्रोणपुष्पी[2] ।

द्रोणा च द्रोणपुष्पी च फलपुष्पा च कीर्तिता ।
द्रोणपुष्पी गुरुः स्वादुः रूक्षोष्णा वातपित्तकृत् ॥ २८६ ॥
सतीक्ष्णा लवणा स्वादुपाका कट्वी च भेदनी ।
कफामकामलाशोथतमकश्वासजंतुजित् ॥ २८७ ॥

सुवर्चला[3] ।

सुवर्चला सूर्य्यभक्ता वरदा वदरापि च ।
सूर्य्यावर्ता रविप्रीता परा ब्रह्मसुवर्चला ॥ २८८ ॥
सुवर्चला हिमा रूक्षा स्वादुपाका सरा गुरुः ।
अपित्तला कटुः क्षारा विष्टंभकफवातजित् ॥ २८९ ॥
अन्या तिक्ता कषायोष्णा सरा रूक्षा लघुः कटुः ।
निहंति कफपित्तास्रश्वासकासारुचिज्वरान् ॥ २९० ॥
विस्फोटकुष्ठमेहास्रयोनिरुक्कृमिपांडुताः ।

---

१ दे० भा० ब्रह्मी । अस्या भेदः ब्रह्ममंडूकी । बं० भा० थुलकुडि । फा० जरनब । इं० इंडियन् पेनीवर्ट । * प० भा० मींडकी । २ दे० भा० गुमा, मल्लडोडा । बं० भा० घलघसे। पत्र । द्रोणपुष्पीदलं स्वादु रूक्षं गुरु च पित्तकृत् । भेदनं कामलाशोथमेहज्वरहरं कटु । ३ दे० भा० हुलहुल बं० भा० वशनलते । फा०गुले आफताब परस्त । इं०संपूलावर । Sumplawar.

वंध्याकर्कोटका[1] ।

वंध्याकर्कोटकी देवी कन्या योगेश्वरीति च ॥ २९१ ॥
नागारिर्नागदमनी विषकंटकिनी तथा ।
वंध्या कर्कोटकी लघ्वी कफनुद्व्रणशोधनी ॥ २९२ ॥
सर्पदर्पहरी तीक्ष्णा विसर्पविषहारिणी ।

मार्कंडिका[2] ।

मार्कंडिका भूमिचरी मार्कंडी मृदुरेचनी ॥ २९३ ॥
मार्कंडिका कुष्ठहरी ऊर्ध्वाधःकायशोधनी ।
विषदुर्गंधकासघ्नी गुल्मोदरविनाशनी ॥ २९४ ॥

देवदाली[3] ।

देवदाली तु वेणी स्यात्कर्कोटी च गरागरी ।
देवताडो वृत्तकोषस्तथा जीमूत इत्यपि ॥ २९५ ॥
पीतापरा खरस्पर्शा विषघ्नी गरनाशनी ।
देवदाली रसे तिक्ता कफार्शःशोफपांडुताः ॥ २९६ ॥
नाशयेद्वामनी तिक्ता क्षयहिक्काकृमिज्वरान् ।
देवदालीफलं तिक्तं कृमिश्लेष्मविनाशनम् ॥ २९७ ॥
स्रंसनं गुल्मशूलघ्नमर्शोघ्नं वातजित्परम् ।

जलपिप्पली[4] ।

जलपिप्पल्यभिहिता शारदी शकुलादनी ॥ २९८ ॥
मत्स्यादनी मत्स्यगंधा लांगलीत्यपि कीर्तिता ।

---

१ दे० भा० वांझखाखसा । अकलकौडा । वं० भा० तित्कांकडी । (कंद) वंध्याकर्कोटकीकंदो हंति श्लेष्मविषद्वयम् । २ दे० भा० वहुगुणी, भूईखाखसा । वं० भा० कांकरोलभेद । इं० आलेक्झांडियन् । ३ दे० भा० सौनैया । घवरवेल, वंदालडोडा । ३ भेदवं० भा० देयाताडा । इं० त्रिस्टाल्युफा । देवदालीकषायेन शौचमाचरतां नृणाम् । किंवा तद्धूमसेकाद्भिः कुतः स्युर्गुदजांकुराः । ४ दे० भा० जलपीपल, वुकन । वं० भा० पनसिगा । फा० पनसिगा । इं० परपलल्लिप्पा ।

जलपिप्पलिका हृद्या चक्षुष्या शुक्रला लघुः ॥ २९९ ॥
संग्राहणी हिमा रूक्षा रक्तदाहव्रणापहा ।
कटुपाकरसा रुच्या कषाया वह्निवर्द्धनी ॥ ३०० ॥

गोजिह्वा ।

गोजिह्वा गोजिका गोजी दार्विका खरपर्णिनी ।
गोजिह्वा वातला शीता ग्राहणी कफपित्तनुत् ॥ ३०१ ॥
हृद्या प्रमेहकासास्रव्रणज्वरहरी लघुः ।
कोमला तुवरा तिक्ता स्वादुपाकरसा स्मृता ॥ ३०२ ॥

नागदमनी ।

विज्ञेया नागदमनी बला मोटा विषापहा ।
नागपुष्पी नागपत्री महायोगेश्वरीति च ॥ ३०३ ॥
बला मोटा कटुस्तिक्ता लघुः पित्तकफापहा ।
मूत्रकृच्छ्रव्रणान् रक्षो नाशयेज्जालगर्द्दभम् ॥ ३०४ ॥
सर्वग्रहप्रशमनी विशेषविषनाशनी ।
जयं सर्वत्र कुरुते धनदा सुमतिप्रदा ॥ ३०५ ॥

वेल्लंतरी ।

वेल्लंतरो जगति वीरतरुः प्रसिद्धः
श्वेतासितारुण विलोहितनीलपुष्पः ।
स्याज्जातितुल्यकुसुमः शमिसूक्ष्मपत्रः
स्यात्कंटकी सजलदेशज एष वृक्षः ॥ ३०६ ॥
वेल्लंतरो रसे पाके तिक्तस्तृष्णाकफापहा ।
मूत्राघाताश्मजिद्ग्राही योनिमूत्रानिलार्तिजित् ॥ ३०७ ॥

छिक्नी ।

छिक्नी क्षवकृत्तीक्ष्णा च्छिक्किका घ्राणदुःखदा ।

---

१ दे० भा० गाजुबान, गोभी, वं० भा० दाडियाशाक । फा० कमलमरूमी ।
२ दे० भा० नागदौन । वं० भा० नागदना । विजलदेशज इत्यपि पाठः ।
३ दे० भा० नकछिक्नी । वं० भा० हांचुटी । फा० वेरगाउजवां ।

छिक्कनी कटुका रुच्या तीक्ष्णोष्णा वह्निपित्तकृत् ॥ ३०८॥
वातरक्तहरीकुष्ठकृमिवातकफापहा ॥ ३०९ ॥

वर्वरी[1] ।

वर्वरी कवरी तुंगी खरपुष्पाजगंधिका ।
वर्वरी तु लघू रुच्या हृद्या च कफवातहृत् ॥ ३१० ॥

ककुंदरः[2] ।

ककुंदरस्ताम्रचूडः सूक्ष्मपत्रो मृदुच्छदः ।
ककुंदरः कटुस्तिक्तो ज्वररक्तकफापहा ॥ ३११ ॥
तन्मूलमार्द्रं निक्षिप्तं वदने मुखशोषहृत् ।

सुदर्शना[3] ।

सुदर्शना सोमवल्ली चक्राह्वा मधुपर्णिका ॥ ३१२ ॥
सुदर्शना स्वादुरुष्णा कफशोफास्रवातजित् ।

आखुकर्णी[4] ।

आखुकर्णी त्वाखुकर्णपर्णिका भूदरीभवा ॥ ३१३ ॥
आखुकर्णी कटुस्तिक्ता कषाया शीतला लघुः ।
विपाके कटुका मूत्रकफामयकृमिप्रणुत् ॥ ३१४ ॥

मयूरशिखा[5] ।

मयूराह्वशिखा प्रोक्ता सहस्रांघ्रिर्मधुच्छदा ।
नीलकंठशिखा लघ्वी पित्तश्लेष्मातिसारजित् ॥ ३१५ ॥

इति गुडूच्यादिवर्गः ।

---

१ बबूई—तुलसी । देशांतरभाषा । निगंधबावरी । कान फोडी । इसका बीज तुखमरेंहा । २ दे० भा० कुकुरोंदा । बं० भा० कुकुरशींका । फा० कमाकिसस । कुकुडछिर्डी । कूकरभंगरा । ३ सुदर्शन दे०भा०बं० भा० सुदर्शनगुलंच । पद्मगुलंच । ४ दे० भा० मूसाकन्नी । बृहती, लघ्वी च । बं० भा० इंदुरकानी । फा० गोरोमुखसतर । ५ दे० भा० मोरवेल । लालमुर्गा, मोरशिखा । बं० भा० मयूरशिखा । फा० ससनाने, असलान ।

पुष्पवर्गः ।

तत्रादौ कमलस्य नामानि गुणाश्च ।

वा पुंसि पद्मं नलिनमरविंदं महोत्पलम् ।
सहस्रपत्रं कमलं शतपत्रं कुशेशयम् ॥ १ ॥
पंकेरुहं तामरसं सारसं सरसीरुहम् ।
बिसप्रसूनराजीवपुष्कराम्भोरुहाणि च ॥ २ ॥
कमलं शीतलं वर्ण्यं मधुरं कफपित्तजित् ।
तृष्णादाहास्रविस्फोटविषवीसर्पनाशनम् ॥ ३ ॥
विशेषतः सितं पद्मं पुंडरीकमिति स्मृतम् ।
रक्तं कोकनदं ज्ञेयं नीलमिंदीवरं स्मृतम् ॥ ४ ॥
धवलं कमलं शीतं मधुरं कफपित्तजित् ।
तस्मादल्पगुणं किंचिदन्यद्रक्तोत्पलादिकम् ॥ ५—६ ॥

पद्मिनी ।

मूलनालदलोत्फुल्लफलैः समुदिता पुनः ।
पद्मिनी प्रोच्यते प्राज्ञैर्बिसिन्यादिश्च सा स्मृता ॥ ७ ॥

आदिशब्दात् नलिनीकमालिनीत्यादिः ।

पद्मिनी शीतला गुर्वी मधुरा लवणा च सा ।
पित्तसृक्कफनुद्रूक्षा वातविष्टंभकारिणी ॥ ८ ॥

नवपत्रादि ।

संवर्तिका नवदलं बीजकोशोऽब्जकर्णिका ।
किञ्जल्कः केसरः प्रोक्तः मकरंदो[2] रसः स्मृतः ॥ ९ ॥

---

१ बं०भा० नीलशुंदि । फा० नीलोफर । इं० लोटस । Lotus. (कमलगट्टा) पद्मबीजं तु पद्माक्षं कलोपं पद्मकर्कटी । २ अरविंदहृतः शीतो मकरंदोतिबृंहणः । त्रिदोषशमनः सर्वनेत्रामयनिषूदनः ॥१॥ (पद्मकंदः) पद्मादिकंदः शालूकं करहाटश्च कथ्यते । मृणालमूलं भिस्साडं लाजल्लकं च कथ्यते ॥ २ ॥ दे० भा० भसींडा । बं० भा० पद्मेरगेंडे ।

पद्मनालं मृणालं स्यात् तथा बिसमिति स्मृतम् ।
संवर्तिका हिमा तिक्ता कषाया दाहतृट्प्रणुत् ॥ १० ॥
मूत्रकृच्छ्रगद्व्याधिरक्तपित्तविनाशिनी ।
पद्मस्य कर्णिका तिक्ता कषाया मधुरा हिमा ॥ ११ ॥
मुखवैशद्यकृल्लध्वी तृष्णास्रकफपित्तनुत् ।
किंजल्कः शीतलो वृष्यः कषायो ग्राहकोऽपि सः ॥ १२ ॥
कफपित्ततृषादाहरक्तार्शोविषशोथजित् ।
मृणालं शीतलं वृष्यं पित्तदाहास्रजिद्गुरुः ॥ १३ ॥
दुर्जरं स्वादुपाकं च स्तन्यानिलकफप्रदम् ।
संग्राहि मधुरं रूक्षं शालूकमपि तद्गुणम् ॥ १४ ॥

स्थलकमलिनी ।

पद्मचारिण्यतिचराऽव्यथा पद्मा च शारदी ।
पद्मा तुष्णा कटुस्तिक्ता कषाया कफवातजित् ॥ १५ ॥
मूत्रकृच्छ्राश्मशूलघ्नी श्वासकासविषापहा ।

कुमुदम् ।

श्वेतं कुवलयं प्रोक्तं कुमुदं कैरवन्तथा ॥ १६ ॥
कुमुदं पिच्छिलं स्निग्धं मधुरं ह्लादि शीतलम् ।

कुमुदिनी ।

कुमुद्वती कैरविका तथा कुमुदिनीति च ॥ १७ ॥
सा तु मूलादिसर्वांगैरुदिता समुदिता बुधैः ।
पद्मिन्या ये गुणाः प्रोक्ताः कुमुदिन्यामपि ते स्मृताः ॥ १८ ॥

---

१ दे० भा० कमलकी डंडी । सूक्ष्म, मृणाल । बं० भा० स्थूलाबिस । (राजनिघंटु) शालूकं कटु विष्टंभि रूक्षं रुच्यं कफापहम् । कषायं कासपित्तघ्नं तृष्णादाहनिवारणम् ॥ १ ॥ २ दे० भा० सुफेदकमल । ३ दे० भा० भभूल । कोईवात्रवूला । भवेत्कुमुद्वतीबीजं स्वादु रूक्षं हिमं गुरु । बं० भा० श्वेतशुंदी ।

जलकुंभी सेवालम् ।

वारिपर्णी कुंभिका स्याच्छेवालं शैवलं च तत् ।
वारिपर्णी हिमा तिक्ता लघ्वी स्वाद्वी सरा कटुः ॥ १९॥
दोषत्रयहरी रूक्षा शोणितज्वरशोषकृत् ।
शैवालं तुवरं तिक्तं मधुरं शीतलं लघु ॥ २० ॥
स्निग्धं दाहतृषापित्तरक्तज्वरहरं परम् ।

[1]शतपत्री ।

शतपत्री तरुण्युक्ता कर्णिका चारुकेसरा ॥ २१ ॥
सहाकुमारी गंधाढ्या लाक्षापुष्पातिमंजुला ।
शतपत्री हिमा हृद्या ग्राहिणी शुक्रला लघुः ॥ २२ ॥
दोषत्रयास्रजिद्वर्ण्या तिक्ता कट्वी च पाचनी ।

[2]वासंती ।

नैपाली कथिता तज्ज्ञैः सतला नवमालिका ॥ २३ ॥
वासंती शीतला लघ्वी तिक्ता दोषत्रयास्रजित् ।

[3]वार्षिकी ।

श्रीपदी षट्पदा नंदा वार्षिकी मुक्तबंधना ॥ २४ ॥
वार्षिकी शीतला लघ्वी तिक्ता दोषत्रयापहा ।
कर्णाक्षिमुखरोगघ्नी तत्तैलं तद्गुणं स्मृतम् ॥ २५ ॥

[4]स्वर्णजातिका ।

जातिर्जाती च सुमना मालती राजपुत्रिका ।
चेतकी हृद्यगंधा च सा पीता स्वर्णजातिका ॥ २६ ॥
जातीयुगं तिक्तमुष्णं तुवरं लघु दोषजित् ।
शिरोक्षिमुखदंतार्तिविषकुष्ठव्रणास्रजित् ॥ २७ ॥

---

१ दे० भा० गुलाब । मौसमी गुलाब । वं० भा० सेवती । फा० गुले सुर्ख । इं० केबेजरोज । २ दे० भा० नेवारी । वं० भा० नेओयार । ३ दे० भा० मोतिया । खेल । वं० भा० वेलफुलगाछ । ४ दे० भा० जाई, पीली जाई । चंवेली । वं० भा० चामिनी । इं० स्पेनिश आस्सीन् ।

यूथिका।[1]

यूथिका गणिकांबष्ठा सा पीता हेमपुष्पिका।
यूथीयुगं हिमं तिक्तं कटुपाकरसं लघु ॥ २८ ॥
मधुरं तुवरं हृद्यं पित्तघ्नं कफवातलम्।
व्रणास्रमुखदंताक्षिशिरोरोगविषापहम् ॥ २९ ॥

चांपेयः।[2]

चांपेयश्चंपकः प्रोक्तो हेमपुष्पश्च स स्मृतः।
एतस्य कलिका गंधफलीति कथिता बुधैः ॥ ३० ॥
चंपकः कटुकस्तिक्तः कषायो मधुरो हिमः।
विषक्रिमिहरः कृच्छ्रकफवातास्रपित्तजित् ॥ ३१ ॥

वकुलः।[3]

वकुलो मधुगंधश्च सिंहकेसरकस्तथा।
वकुलस्तुवरोऽनुष्णः कटुपाकरसो गुरुः ॥ ३२ ॥
कफपित्तविषश्वित्रक्रिमिदंतगदापहा।

वकः।[4]

शिवमल्ली पाशुपतराकाष्ठीलो वको वसुः ॥ ३३ ॥
वकोऽनुष्णः कटुकस्तिक्तः कफपित्तविषापहा।
योनिदोषतृषादाहकुष्ठशोथास्रनाशनः ॥ ३४ ॥

कदंवः।[5]

कदंवः प्रियको नीपो वृत्तपुष्पो हलिप्रियः।

---

१ वं० भा० जूही, स्वर्णजुही। २ दे० भा० चम्पा। वं० भा० चांपा। सुफैद चंपा, नीली चंपा सुलतानचंपा। इस के फूलके वीज को नागकेशर कहते हैं। भूमिचंपा। ३ दे० भा० मौलसरी। वं० भा० वकुलगाछ। इं० सुरीनाममेडलर ४ दे० भा० वडी मौलसरी। इं० सुरीमाममेडलर। ५ दे०भा० कदम्ब। वं० कदमगाछ। कदंव। धाराकदंब। भूमिकदंव। राजकदंव। (पुष्पगुण) पुष्पं कषायं मधुरं शीतं पित्तकफास्रजित्। (फल) तत्फलं मधुरं स्निग्धं कषायं विशदं हिमम्। कफपित्तहरं दंत्यं विवंधाध्मानवातकृत् ॥

कदंबो मधुरः शीतःकषायो लवणो गुरुः ॥ ३५ ॥
सरोऽवष्टंभकृद्रूक्षः कफस्तन्यानिलप्रदः ।

कुब्जकः ।

कुब्जको भद्रतरुणी बृहत्पुष्पोऽतिकेसरः ॥ ३६ ॥
महासहा कंटकाढ्या नीलाऽलिकुलसंकुला ।
कुब्जकः सुरभिः स्वादुः कषायानुरसः सरः ॥ ३७ ॥
त्रिदोषशमनो वृष्यः शीतहर्ता च स स्मृतः ।

मल्लिका[२] ।

मल्लिका मदयंती च शीतभीरुश्च भूपदी ॥ ३८ ॥
मल्लिकोष्णा लघुर्वृष्या तिक्ता च कटुका हरेत् ।
वातपित्तास्यदृग्व्याधिकुष्ठारुचिविषव्रणान् ॥ ३९ ॥

माधवी[३] ।

माधवी स्यात्तु वासंती पुंड्रिको मंडकोऽपि च ।
अतिमुक्तश्चाविमुक्तः कामुको भ्रमरोत्सवः ॥ ४० ॥
माधवी मधुरा शीता लघ्वी दोषत्रयापहा ।

केतकी[४] । स्वर्णकेतकी ।

केतकः सूचिकापुष्पो जंबूकः क्रकचच्छदः ॥ ४१ ॥
सुवर्णकेतकी त्वन्या लघुपुष्पा सुगंधिनी ।
केतकः कटुकः स्वादुर्लघुस्तिक्तः कफापहः ॥ ४२ ॥
उष्णास्तिक्तरसो ज्ञेयः चक्षुष्या हेमकेतकी ।

किंकिरातः ।

किंकिरातो हेमगौरः पीतकः पीतभद्रकः ॥ ४३ ॥

---

१ दे० भा० सेवतीगुलाब । सदा गुलाब । २ दे० भा० मोतियाभेद मल्लिकासंभवं पुष्पं तिक्तं जयति मारुतम् । ३ दे० भा० माधवी । बं०भा० माधवीलता । इं० क्लिपर्डहिपटेज । ४ दे०भा० केउडा । बं० भा० केयागाछ फा० करज । केतकी वातला वृष्या तंद्रानिद्राकरी मता । ५ दे०भा० किंकर भेद ब० भा०देवबाबूला । फा० मधिलान ।

किंकिरातो हिमस्तिक्तः कषायश्च हरेदसौ ।
कफपित्तपिपासास्रदाहशोषवमिक्रिमीन् ॥ ४४ ॥

कर्णिकारः ।

कर्णिकारः कटुस्तिक्तस्तुवरः शोधनो लघुः ॥ ४५ ॥
रंजनः सुखदः शोथश्लेष्मास्रव्रणकुष्ठजित् ।

अशोकः ।

अशोको हेमपुष्पश्च वंजुलस्ताम्रपल्लवः ॥ ४६ ॥
कंकेलिः पिंडपुष्पश्च गंधपुष्पो नटस्तथा ।
अशोकः शीतलस्तिक्तो ग्राही वर्ण्यः कषायकः ॥ ४७ ॥
दोषापचीतृषादाहक्रुमिशोथविषास्रजित् ।

वाणपुष्पः[2] ।

अम्लातो म्लादनः प्रोक्तस्तथाम्लातक इत्यपि ॥ ४८ ॥
कुरंटको वाणपुष्पः सरावोक्ता महासहा ।
अम्लादनः कषायोष्णः स्निग्धः स्वादुश्च तिक्तकः ॥ ४९ ॥

सैरेयकः[3] ।

सैरेयकः श्वेतपुष्पः सैरेया कटिसारिका ।
सहाचरः सहचरः स च भिंद्यापि कथ्यते ॥ ५० ॥
कुरंटकोऽत्र पीतः स्याद्रक्तः कुरबकः स्मृतः ।
नीलो वाणो द्वयोरुक्तो दासी चार्तगलश्च सः ॥ ५१ ॥
सैरेयः कुष्ठवातास्रकफकंडूविषापहः ।
तिक्तोष्णो मधुरो दंत्यः सुस्निग्धः केशरंजनः ॥ ५२ ॥

कुंदम् ।

कुंदं तु कथितं माघ्यं सदापुष्पं च तत्स्मृतम् ।
कुंदं शीतं लघु श्लेष्मशिरोरुग्विषपित्तहृत् ॥ ५३ ॥

---

१ दे० भा० अमलतास । २ रक्ताम्लानो रक्तपुष्पो रामालिंगनकामुकः । रागप्रसवकश्चैव सुभगः शोणझिंटिका ॥ ३ दे० भा० पीला वांसा । वं० भा० झांटि । कुलझांटि । पीतझांटि । नीलझांटि । कालझांटि ।

मुचुकुंदः।

मुचुकुंदः क्षत्रवृक्षश्चित्रकः प्रतिविष्णुकः।
मुचुकुंदः शिरःपीडापित्तास्रविषनाशनः॥ ५४॥

तिलकः।

तिलकः क्षुरकः श्रीमान् पुरुषश्छत्रपुष्पकः।
तिलकः कटुकः पाके रसे चोष्णो रसायनः॥ ५५॥
कफकुष्ठकृमीन् वस्तिमुखदन्तगदान् हरेत्।

बंधूकः।

बंधूको बंधुजीवश्च रक्तो माध्याह्निको मतः॥ ५६॥
बंधूकः कफकृद्ग्राही वातपित्तहरो लघुः।

ओण्ड्रपुष्पम्।

ओण्ड्रपुष्पं जपा चाथ त्रिसंध्या सारुणा मता॥ ५७॥
जपा संग्राहिणी केश्या त्रिसंध्या कफवातहृत्।

सिंदूरी।

सिंदूरी रक्तबीजा च रक्तपुष्पा सुकोमला॥ ५८॥
सिंदूरी विषपित्तास्रतृष्णावांतिहरी हिमा।

अगस्त्यः।

अगस्त्याह्वो वंगसेनो मुनिपुष्पो मुनिद्रुमः॥ ५९॥
अगस्त्यः पित्तकफजिच्चातुर्थिकहरो हिमः।
रूक्षो वातकरस्तिक्तः प्रतिश्यायनिवारणः॥ ६०॥

---

१ तिलक वृक्षका फूल तिलोंके समान होता है उसमें गंध आती है फल पीपल के समान मधुर होता है। २ दे० भा० गुलदुपहरिया। गेजुनिआ। मंचनिआ। बं० भा० बांधुलि फुलेर गाछ। ३ दे० भा० गुडहल, गुलतुररा, ओडहुल। बं० भा० जवाफुलेर गाछ। इं० शुफलावर। ४ दे० भा० लटकण, जाफर इं० आरनाटो। Arnato ५ दे० भा० हथिया, हदगा। बं० भा० वक। इं० लार्जेफलावर्डएगेटी॥

तुलसी[1] शुक्ला कृष्णा च ।

तुलसी सुरसा ग्राम्या सुलभा बहुमंजरी ।
अपेतराक्षसी गौरी शूलघ्नी देवदुंदुभिः ॥ ६१ ॥
तुलसी कटुका तिक्ता हृद्योष्णा दाहपित्तकृत् ।
दीपनी कुष्ठकृच्छ्रास्रपार्श्वरुक्कफवातजित् ॥ ६२ ॥
शुक्ला कृष्णा च तुलसी गुणैस्तुल्या प्रकीर्तिता ।

मरुवकः[2] ।

मारुतको मरुबको मरुन्मरुरपि स्मृतः ॥ ६३ ॥
फणी फणिज्जकश्चापि प्रस्थपुष्पः समीरणः ।
मरुदग्निप्रदो हृद्यस्तीक्ष्णोष्णः पित्तलो लघुः ॥ ६४ ॥
वृश्चिकादिविषश्लेष्मवातकुष्ठकृमिप्रणुत् ।
कटुपाकरसो रुच्यास्तिक्तो रूक्षः सुगंधिकः ॥ ६५ ॥

दमनकः[3] ।

उक्तो दमनको दांतो मुनिपुत्रस्तपोधनः ।
गंधोत्कटो ब्रह्मजटो विनीतः कुलपुत्रकः ॥ ६६ ॥
दमनस्तुवरस्तिक्तो हृद्यो वृष्यः सुगंधिकः ।
ग्रहणीविषकुष्ठास्रक्लेदकंडुत्रिदोषजित् ॥ ६७ ॥

वर्वरी[1] ।

वर्वरी कवरी तुंगी खरपुष्पाजगंधिका ।
पर्णासस्तत्र कृष्णे तु कठिल्लककुठेरकौ ॥ ६८ ॥
तत्र शुक्लो*र्जकः प्रोक्तो वटपत्रस्ततोऽपरः ।
वर्वरीत्रितयं रूक्षं शीतं कटु विदाहि च ॥ ६९ ॥

---

१ दे० भा० तुलसी । फा० रोहान् । इं० ह्वाईट वेझिल । २ दे० भा० मरुआ । वं० भा० मरुया । फा० मर्जगुम् । इं० स्वीट मार्जोरन् । Sweet marjoran. ३ दे० भा० दौना । वं० भा० दवना । वनदमनक, अग्निदमनक इं० वर्मवुड ॥ १ दे० भा० वनतुलसी । इसके बीजको तुखमरेह कहते हैं । वं० भा० बाबुईतुलसी । फा० पलंगमुश्क । * अर्जकः क्षुद्रतुलसी, श्वेतः कृष्णः ।

तीक्ष्णं रुचिकरं हृद्यं दीपनं लघुपाकि च ।
पित्तलं कफवातास्रकंडुक्रिमिविषापहम् ॥ ७० ॥

इति पुष्पवर्गः ।

फलवर्गः ।

तत्रादावाम्रस्य नाम गुणाः ।

[1]आम्रश्चूतो रसालोऽसौ सहकारोऽतिसौरभः ।
कामांगो मधुदूतश्च माकंदः पिकवल्लभः ॥ १ ॥
आम्रपुष्पमतीसारकफपित्तप्रमेहनुत् ।
असृग्दरहरं शीतं रुचिकृद् ग्राहि वातलम् ॥ २ ॥
आम्रं बालं कषायाम्लं रुच्यं मारुतपित्तकृत ।
तरुणं तु तदत्यम्लं रूक्षं दोषत्रयास्रकृत् ॥ ३ ॥
[2]आम्रमामं त्वचाहीनमातपेऽतिविशोषितम् ।
अम्लं स्वादु कषायं स्याद्भेदनं कफवातजित् ॥ ४ ॥
पक्कं तु मधुरं वृष्यं स्निग्धं बलसुखप्रदम् ।
गुरुवातहरं हृद्यं वर्ण्यं शीतमपित्तलम् ॥ ५ ॥
कषायानुरसं वह्निश्लेष्मशुक्रविवर्द्धनम् ।
तदेव वृक्षसंपक्कं गुरुवातहरं परम् ॥ ६ ॥
मधुराम्लरसं किंचिद्भवेत्तत्पित्तनाशनम् ।
आम्रं कृत्रिमपक्कं चेत्तद्भवेत्पित्तनाशनम् ॥ ७ ॥
रसस्याम्लस्य हानेस्तु माधुर्य्याच्च विशेषतः ।
चूषितं तत्परं रुच्यं बल्यं वीर्य्यकरं लघु ॥ ८ ॥

---

१ दे० भा० आम । फा० आंबा, इं० मेंगोट्री । Mango tree. २ दे० भा० अमचूर ।

शीतलं शीघ्रपाकि स्याद्वातपित्तहरं सरम् ।
तद्रसो गालितो बल्यो गुरुर्वातहरः सरः ॥ ९ ॥
अहृद्यस्तर्पणोऽतीव बृंहणः कफवर्द्धनः ।
* तस्य खंडं गुरुपरं रोचनं चिरपाकि च ॥ १० ॥
मधुरं बृहणं बल्यं शीतलं वातनाशनम् ।
वातपित्तहरं रुच्यं बृंहणं बलवर्द्धनम् ॥ ११ ॥
वृष्यं वर्णकरं स्वादु दुग्धाम्रं गुरुशीतलम् ॥ १२ ॥
मंदानलत्वं विषमज्वरं च रक्तामयं बद्धगुदोदरं च ।
आम्रातियोगो नयनामयं च ।
करोति तस्मादति तानि नाद्यात ॥ १३ ॥
एतदम्लाम्रविषयं मधुराम्रपरं नतु ।
मधुरस्य परं नेत्रहितत्वाद्या गुणा यतः ॥ १४ ॥
शुंठ्यंभसोऽनुपानं स्यादाम्राणामतिभक्षणे ।
जीरकं वा प्रयोक्तव्यं सह सौवर्चलेन च ॥ १५ ॥

अथाम्रावर्तस्य लक्षणं गुणाश्च ।

पक्वस्य सहकारस्य पटे विस्तारितो रसः ।
घर्मशुष्को मुहुर्दत्त आम्रावर्त इति स्मृतः ॥ १६ ॥
आम्रावर्तस्तृषाछर्दिवात्तपित्तहरः सरः ।
रुच्यः सूर्य्यांशुभिः पाकाल्लघुश्च स हि कीर्तितः ॥ १७ ॥

---

१ दे० भा० अम्बरस । स वै दुग्धेन संयुक्तः कांतिदः स्वादुदः स्मृतः । वृष्यश्चान्ये गुणाश्चोक्ता रसेन सदृशः स्मृतः ॥ (उत्तमानि फलानि) दाडिमामलकं द्राक्षा खर्ज्जूरं सपरूषकम् । राजादनं मातुलुंगं फलवर्गे प्रशस्यते ॥ * मुरब्बा । १ दे० भा० आंवट । आम्रतैल । आम्रतैलं तु तुवरं स्वादु रूक्षं च तिक्तकम् । सुगंधि मुखरोगस्य नाशनं कफवातनुत् ।

आम्रबीजम्।

आम्रबीजं कषायं स्याच्छर्द्यतीसारनाशनम्।
ईषदम्लं च मधुरं तथा हृदयदाहनुत्॥ १८॥

नवपल्लवम्।

आम्रस्य पल्लवं रुच्यं कफपित्तविनाशनम्।

आम्रातम्[1]।

आम्रातकः पीतनश्च मर्कटाम्रः कपीतनः॥ १९॥
आम्रातमम्लं वातघ्नं गुरूष्णं रुचिकृत्सरम्।
पक्वं तु तुवरं स्वादु रसे पाके हिमं स्मृतम्॥ २०॥
तर्पणं श्लेष्मलं स्निग्धं वृष्यं विष्टंभि बृंहणम्।
गुरु बल्यं मरुत्पित्तक्षतदाहक्षयास्रजित्॥ २१॥

राजाम्रम्।

राजाम्रष्टंग आम्रातः कामाह्वो राजपुत्रकः।
राजाम्रं तुवरं स्वादु विशदं शीतलं गुरु॥ २२॥
ग्राहि रूक्षं विबंधाध्मानवातकृत्कफपित्तनुत्॥

कोशाम्रम्[2]।

कोशाम्र उक्तः क्षुद्राम्रः कृमिवृक्षः सुकोशकः॥ २३॥
कोशाम्रः कुष्ठशोथास्रपित्तव्रणकफापहः।
तत्फलं ग्राहि वातघ्नमम्लोष्णं गुरु पित्तलम्॥ २४॥
पक्वं तु दीपनं रुच्यं लघूष्णं कफवातनुत्।

पनसः[3]।

पनसः कंटकिफलः पनसोऽतिबृहत्फलः॥ २५॥

---

१ दे० भा० अमरा, अंबडा। बं० भा० आमडा इं० स्योन्डि। आसमिनट्। (मज्जा) स्वादुपाकोऽग्निबलकृत्स्निग्धः पित्तानिलापहः। २ दे० भा० कोशाम। बं० भा० केओडा। जलपाई। ३ दे० भा० कटहल, कटहड। बं० भा० कांटाला। (पनसबीज) पनसोद्भूतबीजानि वृष्याणि मधुराणि च। गुरूणि—

पनसं शीतलं पक्वं स्निग्धं पित्तानिलापहम् ।
तर्पणं बृंहणं स्वादु मांसलं श्लेष्मलं भृशम् ॥ २६ ॥
बल्यं शुक्रप्रदं हंति रक्तपित्तक्षतव्रणान् ।
आमं तदेव विष्टंभि वातलं तुवरं गुरु ॥ २७ ॥
दाहकृन्मधुरं बल्यं कफमेदोविवर्द्धनम् ।

लकुचम् ।

लकुचः क्षुद्रपनसो लिकुचोडहुरित्यपि ॥ २८ ॥
आमं लकुचमुष्णं च गुरु विष्टंभकृत्तथा ।
मधुरं च तथाम्लं च दोषत्रयरक्तकृत् ॥ २९ ॥
शुक्राग्निनाशनं चापि नेत्रयोरहितं स्मृतम् ।
सुपक्वं तत्तु मधुरमम्लं चानिलपित्तहृत् ॥ ३० ॥
कफवह्निकरं रुच्यं वृष्यं विष्टंभकं च तत् ।

मोचाफलम् ।

कदली वारणबुसा रंभा मोचांशुमत्फला ॥ ३१ ॥
मोचाफलं स्वादु शीतं विष्टंभि कफनुद् गुरु ।
स्निग्धं पित्तास्रतृड्दाहक्षतक्षयसमीरजित् ॥ ३२ ॥
पक्वं स्वादु हिमं पाके स्वादु वृष्यं च बृंहणम् ।
क्षुत्तृष्णानेत्रगदहरंमेहघ्नं रुचिमांसकृत् ॥ ३३ ॥
माणिक्यमर्त्यामृतचंपकाद्या
भेदाः कदल्या बहवोपि संति ॥
उक्ता गुणास्तेष्वधिका भवंति ।
निर्दोषता स्याल्लघुता च तेषाम् ॥ ३४ ॥

—बद्धविट्कानि सृष्टमूत्राणि संवदेत् ॥ मज्जा पनसजा वृष्या वातपित्तकफापहा । विशेषात्पनसं वर्ज्यं गुल्मिभिर्मंदवह्निभिः

१ दे० भा० बडहल । बं० भा० डेओ, मादार । पं० भा० ढउ । २ दे० भा० केला । बं० भा० कला । फा० मावज् वोझ । इं० प्लेटेन् । Plaiņin.

चिर्भटम्[1] ।

चिर्भटं धेनुदुग्धं च तथा गोरक्षकर्कटी ।
चिर्भटं मधुरं रूक्षं गुरु पित्तकफापहम् ॥ ३५ ॥
अनुष्णं ग्राहि विष्टंभि बालं चानिलकोपनम् ।
कफपित्तकरं स्यंदि पक्वं तूष्णं च पित्तलम् ॥ ३६ ॥

नारिकेलम्[2] ।

नारिकेलो दृढफलो लांगली कूर्चशीर्षकः ।
तुंगः स्कंधफलश्चोच्चस्तृणराजःसदाफलः ॥ ३७ ॥
नारिकेलफलं शीतं दुर्जरं वस्तिशोधनम् ।
विष्टंभि बृंहणं बल्यं वातपित्तास्रदाहनुत् ॥ ३८ ॥
विशेषतः कोमलनारिकेलं निहंति पित्तज्वरपित्तदोषान् ।
तदेव जीर्णं गुरु पित्तकारि विदाहि विष्टंभि मतं भिषग्भिः॥
तस्यांभः शीतलं हृद्यं दीपनं शुक्रलं लघु ।
पिपासापित्तजित्स्वादु वस्तिशुद्धिकरं परम् ॥ ४० ॥
नारिकेलस्य तालस्य खर्जूरस्य शिरांसि[3] च ।
कषायस्निग्धमधुरबृंहणानि गुरूणि च ॥ ४१ ॥

कालिन्दम्[4] ।

कालिन्दं कृष्णबीजं स्यात्कालिङ्गञ्च सुवर्तुलम् ।

---

१ दे० भा० चिव्भड, कचरी, सेंध,फूट, गोरखककडी । बं०भा०काकुड, गोमुक, फुटी । इं० पुविसेंठक्योकंवर । (चिर्भटपुष्प) पुष्पं च चिर्भटं चैव दोषत्रयकरं स्मृतम् । अपक्वं जीर्णकफकृत्पक्वं किंचिद्विशिष्यते ॥ २ दे० भा० नारियल, नरेल । बं०भा०नारकोल । फा०जोज । हिंदी नारीयल । इं०कोकोनट् पाम । Cocoa nut palm. मृगाक्षीगुणाः—मृगाक्षी कटुका तिक्ता पाकेऽम्ला वातनाशिनी । पित्तकृत्पीनसहरा दीपनी रुचिकृत्परा ॥ ३ शिरांसि= वृन्तानि । ४ दे० भा० तरबूज । बं०भा० तरबूजा । चेलना । फा० हदवाना । इं० वाटरमेलन् । Water malin.

कलिन्दं ग्राहि दृक्पित्तशुक्रहृच्छीतलं गुरु ॥ ४२ ॥
पक्वन्तु सोष्णं सक्षारं पित्तलं कफवातजित् ॥

दशांगुलम् ।

दशांगुलं तु खर्बूजं कथ्यंते तद्गुणा अथ ॥ ४३ ॥
खर्वूजं मूत्रलं बल्यं कोष्ठशुद्धिकरं गुरु ।
स्निग्धं स्वादुतरं शीतं वृष्यं पित्तानिलापहम् ॥ ४४ ॥
तेषु यच्चाम्लमधुरं सक्षारं च रसाद्भवेत् ।
रक्तपित्तकरं तत्तु मूत्रकृच्छ्रहरं परम् ॥ ४५ ॥

त्रपुसम् ।

त्रपुसं कंटकिफलं सुधावासः सुशीतलम् ।
त्रपुसं लघु शीतं च नवं तृट्क्लमदाहजित् ॥ ४६ ॥
स्वादुपित्तापहं शीतं तिक्तं कृच्छ्रहरं परम् ।
तत्पक्वमम्लमुष्णं स्यात्पित्तलं कफवातनुत् ॥ ४७ ॥
तद्बीजं मूत्रलं शीतं रूक्षं पित्तास्रकृच्छ्रजित् ।

क्रमुकम् ।

घोंटा पूगी च पूगश्च गुवाकः क्रमुकस्य तु ॥ ४८ ॥
फलं पूगीफलं प्रोक्तमुद्वेगं च तदीरितम् ।
पूगं गुरु हिमं रूक्षं कषायं कफपित्तजित् ॥ ४९ ॥

---

१ दे० भा० खरबूजा। वं० भा० खरमुजा खरबुजा। फा० खरबुजा। इं० मेलन्। Malon। (नारिकेलपुष्प) नारिकेलस्य पुष्पं तु शीतं रक्तातिसारहृत्। रक्तपित्तप्रमेहं च सोमरोगं च नाशयेत्। मलस्तंभकरं चापि प्रोक्तं पूर्वमनीषिभिः। २ दे० भा० खीरा। वं० भा० शंशा। फा० शियारखुर्द। इं० कुकंबर। kukamber, ३ दे० भा० सुपारी। वं० भा० शुपारी। फा० पोपिल इं० बिटल नट्पाम। Bitelnut palm, पूगवृक्षस्य निर्यासो मोहनः शीतलो गुरुः। पाके चोष्णः पित्तलश्च पटुश्चाम्लः प्रकीर्तितः। वातनाशकरश्चैव मुनिभिः परिकीर्तितः।

मोहनं दीपनं रुच्यमास्यवैरस्यनाशनम् ।
आर्द्रं तद्गुर्वभिष्यंदि वह्निदृष्टिहरं स्मृतम् ॥ ५० ॥
स्विन्नं दोषत्रयच्छेदि दृढमध्यं तदुत्तमम् ।

तालम्[1] ।

तालस्तु लेखपत्रः स्यात्तृणराजो महोन्नतः ॥ ५१ ॥
पक्वन्तालफलं पित्तरक्तश्लेष्मविवर्द्धनम् ।
दुर्जरं बहुमूत्रं च तंद्राभिष्यंदशुक्रदम् ॥ ५२ ॥
तालमज्जा तु तरुणा किंचिन्मदकरो लघुः ।
श्लेष्मलो वातपित्तघ्नः सस्नेहो मधुरः सरः ॥ ५३ ॥

ताडी ।

तालजं तरुणं तोयमतीव मदकृन्मतम् ।
अम्लीभूतं यदा तु स्यात्पित्तकृद्वातदोषहृत् ॥ ५४ ॥

शालफलम्[2] ।

शालं फलं रूक्षशीतं मधुरं स्तंभनं गुरु ।
कषायं लेखनं स्तन्यवाताध्मानविबंधकृत् ॥ ५५ ॥
पित्तदाहतृषाकासक्षतक्षयविषास्रनुत ।

बिल्वः[3] ।

बिल्वः शांडिल्यशैलूषौ मालूरश्रीफलावपि ॥ ५६ ॥
बालं बिल्वफलं बिल्वकर्कटी बिल्वपेशिका ।
ग्राहणी कफवातामशूलघ्नी बिल्वपेशिका ॥ ५७ ॥
बालं बिल्वफलं ग्राहि दीपनं पाचनं कटु ।
कषायोष्णं लघु स्निग्धं तिक्तं वातकफापहम् ॥ ५८ ॥

---

१ दे० भा० ताड, तद्भेद हिंताल । बं० भा० श्रीताल । हिंताल । फा० ताल । इं० पालमाईपाम । palmy palm. २ दे० भा० साल, सखया । बं० भा० शालगाच्छ । लताशाल । इं० सालट्री । Saltree. ३ दे०भा० बिल, (Bill) बं० भा० बेल,बिल्व । इं० बेगालंकिन्स । Begalam kinc. तत्पत्रं कफवातामशूलघ्नं ग्राहि रोचनम्।निहन्याद्बिल्वजं पुष्पमतिसारं तृषां वमिम्।

पक्वं गुरु त्रिदोषं स्याद्दुर्जरं पूतिमारुतम् ।
विदाहि विष्टंभकरं मधुरं वह्निमांद्यकृत् ॥ ५९ ॥

कपित्थम्[1] ।

कपित्थस्तु दधित्थः स्यात्तथा पुष्पफलः स्मृतः ।
कपिप्रियो दधिफलः तथा दंतशठोऽपि च ॥ ६० ॥
कपित्थमामं संग्राहि कषायं लेखनं लघु ।
पक्वं गुरु तृषाहिक्काशमनं वातपित्तजित् ॥ ६१ ॥
स्वाद्वम्लं तुवरं कंठशोधनं ग्राहि दुर्जरम् ।

नारंगम्[2] ।

नारंगो नागरंगः स्यात्त्वक्सुगंधो मुखप्रियः ॥ ६२ ॥
नारंगं मधुराम्लं स्याद्रोचनं वातनाशनम् ।
अपरं त्वम्लमत्युष्णं दुर्जरं वातहृत्सरम् ॥ ६३ ॥

तिंदुकम्[3] ।

तिंदुकः स्फूर्जकः कालस्कंधश्च शितिसारकः ।
स्यादामं तिंदुकं ग्राहि वातलं शीतलं लघु ॥ ६४ ॥
पक्वं पित्तप्रमेहास्रश्लेष्मघ्नं मधुरं गुरु ।

कुपिलुः[4] ।

तिंदुकः कथितो यस्तु जलजो दीर्घपत्रकः ॥ ६५ ॥
कुपीलुः कुलकः काकतिंदुकः कालपीलुकः ।
काकेंदुर्विषतिंदुश्च तथा मर्कटतिंदुकः ॥ ६६ ॥

---

१ दे० भा० कैथ । बं० भा० कपेद्वाछ । इं० वुडण्यल । एडिफंटण्यल। २ दे० भा०नारंगी । बं० भा० नारंगालेबु । फा० नारज । इं० औरेंज । Orange. । ३ तेंदु । बं०भा० गाव तेंद । फा० अनुवस इं०एवनी Ebony. ४ दे० भा० काकतेंदु । अस्य फलं कुचला इति लोके । बं० भा० माकडा-गाछ । दे०भा० कुचले । बं०भा० कुंचले । फा० इफाराकी । इं० पाईचनं-नट ॥ कुचला शुद्धि (रसरत्नप्रदीपे) ॥ त्रिदिनं कांजिके क्षिप्तः शुद्धः स्याद्विषतिंदुकः (वृद्धयोगतरंगिण्याम्) किंचिदाज्येन भृष्टो वै विषमुष्टिर्विशुध्यति ।

कुपीलु शीतलं तिक्तं वातलं मदकृल्लघु ।
पादव्यथाहरं ग्राहि कफपित्तविनाशनम् ॥ ६७ ॥

फलेंद्रः ।

फलेंद्रः कथिता नंद्री राजजंबूर्महाफला ।
तथा सुरभिपत्रा च महाजंबूरपि स्मृता ॥ ६८ ॥
राजजंबूफलं स्वादु विष्टंभि गुरु रोचनम् ।
क्षुद्रजंबूः सूक्ष्मपत्रो नादेयी जलजंबुकः ॥ ६९ ॥
जंबूः संग्राहणी रूक्षा कफपित्तास्रदाहजित् ।

बदरम्[2] ।

पुंसि स्त्रियां च कर्कंधूर्बदरी कोलमित्यपि ॥ ७० ॥
फेनिलं कुवलं घोंटा सौवीरं बदरं महत् ।
अजाप्रियः कुहाकोलिर्विषमो भयकंटकः ॥ ७१ ॥

बदराविशेषाणां लक्षणगुणाश्च ।

पच्यमानन्तु मधुरं सौवीरं बदरं महत् ।
सौवीरं बदरं शीतं भेदनं गुरु शुक्रलम् ॥ ७२ ॥
बृंहणं पित्तदाहास्रक्षयतृष्णानिवारणम् ।
सौवीरं लघु संपक्कं मधुरं कोलमुच्यते ॥ ७३ ॥
कोलं तु बदरं ग्राहि रुच्यमुष्णं च वातलम् ।
कफपित्तकरं चापि गुरु सारकमीरितम् ॥ ७४ ॥
कर्कंधुः क्षुद्रबदरं कथितं पूर्वसूरिभिः ।
अम्लं स्यात्क्षुद्रबदरं कषायं मधुरं मनाक् ॥ ७५ ॥
स्निग्धं गुरु च तिक्तं च वातपित्तापहं स्मृतम् ।
शुष्कं भेद्यग्निकृत्सर्वं लघुतृष्णाक्रमास्रजित् ॥ ७६ ॥

---

१ दे० भा० बडी जामुन, छोटी जामुन, बं० भा० जामगाछ, इं० जांबडालट्री । Jambdal tree. २ दे० भा० बेर बडा, बेर छोटा । कर्कंधु कोकनबेर, झाडी बेर । बं० भा० क्षुलगाछ । फा० क्रुनार, सौवीरं=उनाब इं० जुजब, Jojab,

प्राचीनामलकम्[1] ।

प्राचीनामलकं लोके पानीयामलकं स्मृतम् ।
प्राचीनामलकं दोषत्रयजिज्ज्वरघाति च ॥ ७७ ॥

लवली[2] ।

सुगंधमूला लवली पांडुकोमलवल्कला ।
लवलीफलमश्मार्शःकफपित्तहरं गुरु ॥ ७८ ॥
विशदं रोचनं रूक्षं स्वाद्वम्लं तुवरं रसे ।

करमर्दः[3] करमर्दका ।

करमर्दः सुषेणः स्यात्कृष्णपाकफलस्तथा ॥ ७९ ॥
तस्माल्लघुफला या तु सा ज्ञेया करमर्दिका ।
करमर्दद्वयं त्वाममम्लं गुरुतृषापहम् ॥ ८० ॥
उष्णं रुचिकरं प्रोक्तं रक्तपित्तकफप्रदम् ।
तत्पक्वं मधुरं रुच्यं लघुपित्तसमीरजित् ॥ ८१ ॥

प्रियालम्[4] ।

प्रियालस्तु खरस्कंधश्चारो बहुलवल्कलः ।
राजादनं तापसेष्टः सन्नकद्रुर्धनुःपटः ॥ ८२ ॥
चारस्तु पित्तकासघ्नः तत्फलं मधुरं गुरु ।
स्निग्धं सरं मरुत्पित्तदाहज्वरतृषापहम् ॥ ८३ ॥

---

१ दे० भा० पानी आमला । बं० भा० पानी आमला । इं० फला कुरर्या-काटा प्राक्टा । २ दे०भा० हरफारेवडी । बं० भा० नोपाड, नोपाल । वदरी-फलमज्जा—वदरीफलमज्जा तु तुवरा मधुरा मता। शुक्रदा बलदा वृष्या कासश्वास-तृषापहा । वातघ्नी छर्दिदाहघ्नी पित्तहा मुनिभिर्मता । पत्रगुणाः-दरस्य पत्रलेपोऽयं ज्वरदाहविनाशनः । त्वचा विस्फोटशमनी वीजं नेत्रामयापहम् । ३ दे० भा० करोंदा, करोंदी । बं० भा० करमुचा । पं० भा०गरना गरनी, इं० जास्मिन् फलावर्डकेरिसा । ४ दे० भा० चिरौंजी चिरोली । बं० भा० पियाल। फा० वुकलेखाजा.

प्रियालमज्जा मधुरा वृष्या पित्तानलापहा ।
हृद्योऽतिदुर्जरः स्निग्धो विष्टंभी चामवर्द्धनः ॥ ८४ ॥

राजादनम् [१] ।

राजादनः फलाध्यक्षो राजन्या क्षीरिकापि च ।
क्षीरिकायाः फलं वृष्यं बल्यं स्निग्धं हिमं गुरु ॥ ८५ ॥
तृष्णामूर्च्छामदभ्रांतिक्षयदोषत्रयास्रजित् ।

विकंकतम् [२] ।

विकंकतः स्रुवावृक्षो ग्रंथिलः स्वादुकंटकः ॥ ८६ ॥
सरावयज्ञवृक्षश्च कंटकी व्याघ्रपादपि ।
विकंकतफलं पक्कं मधुरं सर्वदोषजित् ॥ ८७ ॥

पद्मबीजम् [३] ।

पद्मबीजं तु पद्माक्षं गालोढ्यं पद्मकर्कटी ।
पद्मबीजं हिमं स्वादु कषायं तिक्तकं गुरु ॥ ८८ ॥
विष्टंभि वृष्यं रूक्षं च गर्भस्थापनकं परम् ।
कफवातहरं बल्यं ग्राहि पित्तास्रदाहनुत् ॥ ८९ ॥

मखाणम् [४] ।

मखाणं पद्मबीजाभं पानीयफलमित्यपि ।
मखाणं पद्मबीजस्य गुणैस्तुल्यं विनिर्दिशेत् ॥ ९० ॥

शृंगाटकम् [५] ।

शृंगाटकं जलफलं त्रिकोणफलमित्यपि ।
शृंगाटकं हिमं स्वादु गुरु वृष्यं कषायकम् ॥ ९१ ॥

---

१ दे० भा० खिरनी, खिन्नी । बं० भा० रांजणी । इं० ओवट्युस् लांगुमाईसुसोप्स । २ दे० भा० कुकोया कंटाई बंज । किकणी । बं० भा० वइंचगाछ । ३ दे० भा० कमलगठा । पद्मबीजं । बं० भा० पद्मबीचि । ४ दे० भा० मखाना । फूल मखाना । बं० भा० मखान । ५ दे० भा० सिंघाडा । बं० भा० पाणिफल । फा० सुरंजान । इं० वाटर कैलिअम । Water Kaliam.

ग्राहि शुक्रानिलश्लेष्मप्रदं दाहास्रपित्तनुत् ।
उक्तं कुमुदबीजं तु बुधैः कैरविणीफलम् ॥ ९२ ॥

कुमुदबीजम् ।

भवेत्कुमुद्वतीबीजं स्वादु रूक्षं हिमं गुरु ।

मधूकं[२], जलमधूकम् ।

मधूको गुडपुष्पः स्यान्मधुपुष्पो मधुस्रवः ॥ ९३ ॥
वानप्रस्थो मधुष्ठीलो जलजोऽत्र मधूलकः ।
मधूकपुष्पं मधुरं शीतलं गुरु बृंहणम् ॥ ९४ ॥
बलशुक्रकरं प्रोक्तं वातपित्तविनाशनम् ।
फलं शीतं गुरु स्वादु शुक्रलं वातपित्तनुत् ॥ ९५ ॥
अहृद्यं हंति तृष्णास्रदाहश्वासक्षतक्षयान् ।

पालेवतम् ।

पालेवतासतं पुष्पैस्तिंदुकाभं फलं मतम् ॥ ९६ ॥
अन्यन्माणवकं ज्ञेयं महापालेवतं तथा ।
स्वाद्वम्लं शीतमुष्णं च द्विधा पालेवतं गुरु ॥ ९७ ॥
यत् स्वादु मधुरं तच्छीतं यदम्लं तदुष्णकम् ।

उभयमपि गुरु इति हेमाद्रिः ।

परूषकम्[३] ।

परूषकं परुषकमल्पास्थि च परापरम् ॥ ९८ ॥
परूषकं कषायाम्लमामं पित्तकरं लघु ।

---

१ नीलोफर । २ दे० भा० महुआ,जलमहुआ । वं० मा० मौल मौया । फा० चकां । इं० इल्ह्या ट्री Eloya tree. ३ दे०भा०फालसा । वं० भा० फलसा । फा० पालसा । इं० एश्याटिक ग्रेविया (मधूकस्य तैलम्) मधूकतैलं मधुरं पिच्छिलं तुवरं मतम् । कफपित्तज्वरं चैव दाहपित्तं च नाशयेत् । (अस्य त्वचा) परुषकत्वक् प्रमेहघ्नी योनिमेढ्रप्रदाहनुत् । मूत्रदोषप्रशमनी शीतपित्तानिलापहा ॥ १ ॥

तत्पक्कं मधुरं पाके शीतं विष्टंभि बृंहणम् ॥ ९९ ॥
हृद्यं तु पित्तदाहास्रज्वरक्षयसमीरजित् ।

तूतम्[1] ।

तूदस्तूतं च यूपश्च क्रमुको ब्रह्मदारु च ॥ १०० ॥
तूतं पक्कं गुरु स्वादु हिमं पित्तानिलापहम् ।
तदेवामं गुरु सरमम्लोष्णं रक्तपित्तकृत् ॥ १०१ ॥

दाडिमम्[2] ।

दाडिमः करको दंतबीजो लोहितपुष्पकः ।
तत्फलं त्रिविधं स्वादु स्वाद्वम्लं केवलाम्लकम् ॥ १०२ ॥
तत्तु स्वादु त्रिदोषघ्नं तृट्दाहज्वरनाशनम् ।
हृत्कंठमुखरोगघ्नं तर्पणं शुक्रलं लघु ॥ १०३ ॥
कषायानुरसं ग्राहि स्निग्धं मेधाबलावहम् ।
स्वाद्वम्लं दीपनं रुच्यं किंचित्पित्तकरं लघु ॥ १०४ ॥
अम्लं तु पित्तजनकमामवातकफापहम् ।

बहुवारः[3] ।

बहुवारस्तु शीतः स्यादुद्दालो बहुवारकः ॥ १०५ ॥
शेलुः श्लेष्मातकश्चापि पिच्छिलो भूतवृक्षकः ।
बहुवारो विषस्फोटव्रणवीसर्पकुष्ठनुत् ॥ १०६ ॥
मधुरस्तुवरस्तिक्तः केश्यश्च कफपित्तहृत् ।
फलमामं तु विष्टंभि रूक्षं पित्तकफास्रजित् ॥ १०७ ॥

---

१ दे० भा० शहतूत । तत । बं० भा० तूत । पलाशपिपुल । फा० शहतूत तुर्श । इं० मलबेरिज । Mulberies. २ दे० भा० अनार बं० भा० लिम । फा० अनार तुरिश, अनारशीरीं । इं० पोंग्रानट । Pomgra nut. अस्य पुष्पं) तत्पुष्पं च पुनर्ज्ञेयं नासासृगतिनावनात् । दाडिमत्वक् क्रमिघ्ना ग्राहिरक्तातिसारहा । ३ दे०भा० लिसूडा । लिसोडा । बं० भा० बहुपार, लतागाछ् । फा० सिपिस्तान । इं० नेरोलिव्डसेपिस्टन । Narrow leaved pistun.

तत्पक्वं मधुरं स्निग्धं श्लेष्मलं शीतलं गुरु ।

कतकम्[1] ।

पयःप्रसादि कतकं कतकं तत्फलं च तत् ॥ १०८ ॥
कतकस्य फलं नेत्र्यं जलनिर्मलताकरम् ।
वातश्लेष्महरं शीतं मधुरं तुवरं गुरु ॥ १०९ ॥

द्राक्षा[2] ।

द्राक्षा स्वादुफला प्रोक्ता तथा मधुरसापि च ।
मृद्वीका हारहूरा च गोस्तनी चापि कीर्तिता ॥ ११० ॥
द्राक्षा पक्वा सरा शीता चक्षुष्या बृंहणी गुरुः ।
स्वादुपाकरसा स्वर्य्या तुवरा सृष्टमूत्रविट् ॥ १११ ॥
कोष्ठमारुतहृद् वृष्या कफपुष्टिरुचिप्रदा ।
हंति तृष्णाज्वरश्वासवातवातास्रकामलाः ॥ ११२ ॥
कृच्छ्रास्रपित्तसम्मोहदाहशोषमदात्ययान् ।
आमा स्वल्पगुरुर्गुर्वी सैवाम्ला रक्तपित्तकृत् ॥ ११३ ॥
वृष्या स्याद्गोस्तनी द्राक्षा गुर्वी च कफपित्तनुत् ।
अबीजाऽन्या स्वल्पतरा गोस्तनी सदृशा गुणैः ॥ ११४ ॥
द्राक्षा पर्वतजा लघ्वी साम्ला श्लेष्माम्लपित्तकृत् ।
द्राक्षा पर्वतजा यादृक् तादृशी करमर्दिका ॥ ११५ ॥

क्षुद्रखर्जूरं[3] पिंडखर्जूरं च ।

भूमिखर्जूरिका स्वाद्वी दुरारोहा मृदुच्छदा ।
तथा स्कंधफला काककर्कटी स्वादुमस्तका ॥ ११६ ॥

---

१ दे० भा० निर्मली । बं० भा० निर्मलफल । इं० आनट् विच क्लिअर्स वाटर । Ant which clears water. २ दे० भा० दाख, किसमिस, मुनक्का । बं० भा० किसमिस, मनेका । फा० अंगर, मुनका । इं० ग्रेप, रोझिंस Grape roisins. ३ दे० भा० खजूर, पिंडखजूर, छुहारे । बं० भा० खेजूर, पिंडखेजूर छोहारे । फा० तमररुतक । इं० डेट् पाम । Date palm. (खजूरी । ताडी) खजूरी तोयमित्यादि ॥

पिंडखर्जूरिका त्वन्या सा देशे पश्चिमे भवेत् ।
खर्जूरी गोस्तनाकारा परद्वीपादिहागता ॥ ११७ ॥
जायते पश्चिमे देशे सा छोहारेति कीर्तिता ।
खर्जूरीत्रितयं शीतं मधुरं रसपाकयोः ॥ ११८ ॥
स्निग्धं रुचिकरं हृद्यं क्षतक्षयहरं गुरु ।
तर्पणं रक्तपित्तघ्नं पुष्टिविष्टंभशुक्रदम् ॥ ११९ ॥
कोष्ठमारुतहृद्बल्यं वांतिवातकफापहम् ।
ज्वरातिसारक्षुत्तृष्णाकासश्वासनिवारकम् ॥ १२० ॥
मदमूर्च्छामरुत्पित्तमद्योद्भूतगदांतकृत् ।
महतीभ्यां गुणैरल्पा स्वल्पा खर्जूरिका स्मृता ॥ १२१ ॥
खर्जूरितरुतोयं तु मदपित्तकरं भवेत् ।
वातश्लेष्महरं रुच्यं दीपनं बलशुक्रकृत् ॥ १२२ ॥

पिंडखजूरभेदः । सुलेमानी ।

सुनेपाली तु मृदुला दलहीनफला च सा ।
सुनेपाली श्रमभ्रांतिदाहमूर्च्छास्रपित्तहृत् ॥ १२३ ॥

वातादः[1] ।

वातादो वातवैरी स्यान्नेत्रोपमफलस्तथा ।
वाताद उष्णः सुस्निग्धो वातघ्नः शुक्रकृद्गुरुः ॥ १२४ ॥
वातादमज्जा मधुरो वृष्यः पित्तानिलापहः ।
स्निग्धोष्णः कफकृन्नेष्टो रक्तपित्तविकारिणाम् ॥ १२५ ॥

सेवम्[3] ।

मुष्टिप्रमाणं बंदरं सेवं शिंबितिकाफलम् ।

---

१ दे० भा० बादाम कडवे । बादाम मीठे । बं० भा० बादाम । फा० बादाम शीरीं बादाम तलख। इं० स्वीट् अलमंड । Sweet almond. वातादतैलं मृदु रेचनं स्याद्वाजीकरं मूर्द्धगदं प्रहन्यात् । पित्तानिलघ्नं लघु दाहनाशि लावण्यदं मेहकरं सुशीतम् ॥ २ इति आत्रेयसंहिता । ३ दे० भा० सेव बं० सेउ फा० सेब इं० एपल Apple.

सेवं समीरपित्तघ्नं बृंहणं कफकृद् गुरु ॥ १२६ ॥
रसे पाके च मधुरं शिशिरं रुचिशुक्रकृत् ।

अमृतफलम्[1] ।

अमृतफलं लघु वृष्यं सुस्वादु त्रीन् हरेद्दोषान् ॥ १२७ ॥
देशेषु मृद्‌गलानां बहुलं तल्लभ्यते लोकैः ।

पीलुः[2] ।

पीलुर्गुडफलः स्रंसी तथा शीतफलोऽपि च ॥ १२८ ॥
पीलु श्लेष्मसमीरघ्नं पित्तलं भेदि गुल्मनुत् ।
स्वादु तिक्तं च यत्पीलु तन्नात्युष्णं त्रिदोषहृत् ॥ १२९ ॥

अक्षोटः[3] ।

पीलुः शैलभवोऽक्षोटः कंदरालश्च कीर्तितः ।
अक्षोटकोऽपि वातादसदृशः कफपित्तकृत् ॥ १३० ॥

बीजपूरम्[4] ।

बीजपूरो मातुलुंगो रुचकः फलपूरकः ।
बीजपूरफलं स्वादु रसेऽम्लं दीपनं लघु ॥ १३१ ॥
रक्तपित्तहरं कंठजिह्वाहृदयशोधनम् ।
श्वासकासारुचिहरं हृद्यं तृष्णाहरं स्मृतम् ॥ १३२ ॥

बीजपूरभेदः[5] ।

बीजपूरोऽपरः प्रोक्तो मधुरो मधुकर्कटी ।
मधुकर्कटिका स्वाद्वी रोचनी शीतला गुरुः ॥ १३३ ॥
रक्तपित्तक्षयश्वासकासहिक्काभ्रमापहा ।

---

१ दे० भा० नासपाती नाख । गर्भदोषहरं स्त्रीणां मृतवत्सत्वनाशनम् । गर्भस्रावं गर्भपातं नाशयेन्नियतं त्विदम् ॥ १ ॥ २ दे०भा० पीलु वड़ी पीलु वं० पीलुगाछ । फा० दरख़्ते मिस्वाक इं० मस्टर्डट्री आफ स्क्रीपचर । Mustard tree of scripture. ३ दे० भा० अखरोट । वं० भा० आक्रोट । फा० चार्तगज । ई० वालनट् Walnut. ४ दे० भा० किंत्र । विजौरानींबू । वं० भा० टावालेवु । फा० तुरुंज । इं० साईट्रस Sitres. ५ दे० भा० चकोतरा ।

जंबीरद्वयम्[1] ।

स्याज्जंबीरो दंतशठो जंभजंभीरजंभलाः ॥ १३४ ॥
जंबीरमुष्णं गुर्वम्लं वातश्लेष्मविबंधनुत् ।
शूलकासकफोत्क्लेशच्छर्दितृष्णामदोषजित् ॥ १३५ ॥
आस्यवैरस्यहृत्पीडावह्निमांद्यकृमीन्हरेत् ।
स्वल्पजंबीरिका तद्वत्तृष्णाछर्दिनिवारणी ॥ १३६ ॥

निंबूकम् ।

निंबूः स्त्री निंबुकं क्लीबे निंपाकमपि कीर्तितम् ।
निंबूकमम्लं वातघ्नं दीपनं पाचनं लघु ॥ १३७ ॥

मिष्टनिंबूकम् ।

मिष्टनिंबूफलं स्वादु गुरु मारुतपित्तनुत् ।
गलरोगविषध्वंसि कफोत्क्लेशि च रक्तहृत् ॥ १३८ ॥
शोषारुचितृषाच्छर्दिहरं बल्यं च बृंहणम् ।

कर्मरंगम्[2] ।

कर्मरंगं हिमं ग्राहि स्वाद्वम्लं कफवातहृत् ॥ १३९ ॥

अम्लिका[3] ।

अम्लिका चुक्रिकाऽम्ली च चुक्रा दंतशठापि च ।
अम्ला च चिंचिका चिंचा तिंतिडीका च तिंतिडी ॥ १४० ॥
अम्लिकाम्ला गुरुर्वातहरी पित्तकफास्रकृत् ।
पक्का तु दीपनी रूक्षा सरोष्णा कफवातनुत् ॥ १४१ ॥

---

१ दे० भा० खट्टा खट्टी जंभीरी । बं० भा० कागजी लेबु । जामीरी लेबु । फा० लिमुने तुर्श लिमुने शीरीं । इं० लेमंस । Lemons. निंबुकं क्रिमिसमूहनाशनं तीक्ष्णमम्लमुदरग्रहापहं॥वातपित्तकफशूलिने हितं कष्टनष्टरुचिरोचनं परम् ॥ १ ॥ त्रिदोषवह्निक्षयवायुरोगनिपीडितानां विषविह्वलानाम् । मलग्रहे बद्धगुदे प्रदेयं विसूचिकायां मुनयो वदंति ॥२॥ २ दे० भा० कमरख । बं० भा० कामरांगा इं० करमबोला Carmbola. ३ दे० भा० इम्बली । बं० भा० तेंतुल । इं० टेमेरिंडट्री Tamerined tree.

अम्लवेतसम्[1] ।

स्यादम्लवेतसं चुक्रं शतवेधि सहस्रभित् ।
अम्लवेतसमत्यम्लं भेदनं लघु दीपनम् ॥ १४२ ॥
हृद्रोगशूलगुल्मघ्नं पित्तलं लोमहर्षणम् ।
रूक्षं विण्मूत्रदोषघ्नं प्लीहोदावर्तनाशनम् ॥ १४३ ॥
हिक्कानाहारुचिश्वासकासाजीर्णवमिप्रणुत् ।
कफवातामयध्वंसि छागमांसद्रवत्वकृत् ॥ १४४ ॥
चणकाम्लगुणं ज्ञेयं लोहसूचीद्रवत्वकृत् ।

वृक्षाम्लम्[2] ।

वृक्षाम्लं तिंतिडीकं च चुक्रं स्यादम्लवृक्षकम् ॥ १४५ ॥
वृक्षाम्लमाममम्लोष्णं वातघ्नं कफपित्तलम् ।
पक्वं तु गुरु संग्राहि कटुकं तुवरं लघु ॥ १४६ ॥
अम्लोष्णं रोचनं रूक्षं दीपनं कफवातहृत् ।

चतुरम्लं पंचाम्लम् ।

अम्लवेतसवृक्षाम्लबृहज्जंबीरनिंबुकैः ॥ १४७ ॥
चतुरम्लं हि पंचाम्लं बीजपूरयुतैर्भवेत् ।

परिभाषा ।

फलेषु परिपक्वं यद्गुणवत्तदुदाहृतम् ॥ १४८ ॥
बिल्वादन्यत्र विज्ञेयमामं तद्धि गुणाधिकम् ।
फलेषु सरसं यत्स्याद्गुणवत्तदुदाहृतम् ॥ १४९ ॥
द्राक्षाबिल्वशिवादीनां फलं शुष्कं गुणाधिकम् ।
फलतुल्यगुणं सर्वं मज्जानामपि निर्दिशेत् ॥ १५० ॥

---

१ दे० भा० अम्लवेद । वं०भा०थैकड़ । प० भा० गलगल फा०तुर्षक । इं० कामन्सोरेल । Coman sorail. चिंचापुष्पं तु तुवरं स्वाद्वम्लं च रुचिप्रदम् । विशदं चाग्निजनकं लघुवातकफापहम्॥१॥प्रमेहघ्नं समुद्दिष्टं पर्णं शोथहरं मतम् । चिंचाक्षारश्चाग्निमांद्यशूलनाशकरोमतः॥ २ दे०भा०समाकदाना।डांसरा । वं० भा० महादा । अम्लकुटा इं० कोकंबटर ट्री । Cocambatar tree.

फलं हिमाग्निदुर्वातव्यालकीटादिदूषितम् ।
अकालजं कुभूमीजं पाकातीतं न भक्षयेत् ॥ १५१ ॥

इति फलवर्गः ।

वटादिवर्गः ।

तत्रादौ वटस्य नामानि गुणाश्च ।

वटो रक्तफलः शृंगी न्यग्रोधः स्कन्धजो ध्रुवः ।
क्षीरी वैश्रवणावासो बहुपादो वनस्पतिः ॥ १ ॥
वटः शीतो गुरुर्ग्राही कफपित्तव्रणापहः ।
वर्ण्यो विसर्पदाहघ्नः कषायो योनिदोषहृत् ॥ २ ॥

अश्वत्थः ।

बोधिद्रुः पिप्पलोऽश्वत्थः चलपत्रो गजाशनः ।
पिप्पलो दुर्जरः शीतः पित्तश्लेष्मव्रणास्रजित् ॥ ३ ॥
गुरुस्तुवरको रूक्षो वर्ण्यो योनिविशोधनः ।

पिप्पलभेदः ।

पारिशोन्यः पलाशश्च फलीशश्च कमण्डलुः ॥ ४ ॥
गर्दभांडः कन्दरालकपीतनसुपार्श्वकाः ॥
पारिषो दुर्जरः स्निग्धः कृमिशुक्रकफप्रदः ॥ ५ ॥
फलेऽम्लो मधुरो मूले कषायः स्वादुमज्जकः ।

---

१ देश भाषा बोहड । बड । बं० भा० बट । फारसी बडवाई । इं० वननट्री Banian tree । २ दे० भा० पीपल । पिपल । बं० भा० अश्वत्थ । फा० दरखतलरजां । इं० प्लोलीवड फिगट्री । Ploleaved phigtree. ३ दे० भा० पारिस पिपल । बं० भा० गजशुण्डी । फा० यलासवेल्य । इं० हिइस्कम् ।

अश्वत्थभेदः *

नन्दीवृक्षोऽश्वत्थभेदः प्ररोही गजपादपः ॥ ६ ॥
स्थालीवृक्षः क्षीरितरुः क्षीरी च स्याद्वनस्पतिः ।
नन्दीवृक्षो लघुः स्वादुस्तिक्तस्तुवर उष्णकः ॥ ७ ॥
कटुपाकरसो ग्राही विषपित्तकफास्रजित्

उदुम्बरः[1] ।

उदुम्बरो जन्तुफलो यज्ञांगो हेमदुग्धकः ॥ ८ ॥
उदुम्बरो हिमो रूक्षो गुरुः पित्तकफास्रजित् ।
मधुरस्तुवरो वर्ण्यो व्रणशोधनरोपणः ॥ ९ ॥

मलयूः[2] ।

काकोदुम्बरिका फल्गुर्मलयूर्जघनेफला ।
मलयूस्तम्भकृत्तिक्ता शीतला तुवरा जयेत् ॥ १० ॥
कफपित्तव्रणश्वित्रपांड्वर्शःकुष्ठकामलाः ।

प्लक्षः[3] ।

प्लक्षो जटी पर्पटी च कर्पटी च स्त्रियामपि ॥ ११ ॥
प्लक्षः कषायः शिशिरो व्रणयोनिगदापहः ।
दाहपित्तकफास्रघ्नः शोथहा रक्तपित्तहृत् ॥ १२ ॥

शिरीषः[4] ।

शिरीषो भंडिलो भंडी भंडीरश्च कपीतनः ।
शुकपुष्पः शुकतरुर्मृदुपुष्पः शुकप्रियः ॥ १३ ॥
शिरीषो मधुरोऽनुष्णस्तिक्तश्च तुवरो लघुः ।
दोषशोथविसर्पघ्नः कासव्रणविषापहः ॥ १४ ॥

---

* वेलिया पिप्पल । दे० भा० गूलर । वं० भा० यज्ञडुमुर । फा० अंजीरे आदम । नद्युदुंबरिकागुणैः किञ्चिन्न्यूना । इं० फिगट्री Kigtree. ॥ २ दे० भा० फगवाडा । कठूमर । वं० भा० काकडूमर । फा० अंजीरे दस्ती । इं० फिगट्री । Kigtree । ३ दे० भा० पिलखन । वं० भा० पाकुडगाछ । ४ दे० भा० शिरीह । सिरस । वं० भा० शिरीषगाछ । फा० दरखतेजकरिया ।

क्षीरिवृक्षाः, पंचवल्कलाः ।

न्यग्रोधोदुंबराश्वत्थपारिषप्लक्षपादपाः ।
पंचैते क्षीरिणो वृक्षास्तेषां त्वक् पंचवल्कलम् ॥ १५ ॥
केचित्तु पारिषस्थाने शिरीषं वेतसं परे ।
क्षीरिवृक्षा हिमा वर्ण्या योनिरोगव्रणापहाः ॥ १६ ॥
रूक्षाः कषाया मेदोघ्ना विसर्पाम्यनाशनाः ।
शोथपित्तकफास्रघ्नाः स्तन्या भग्नास्थियोजकाः ॥ १७ ॥
त्वक्पंचकं हिमं ग्राहि व्रणशोथविसर्पजित् ।
तेषां पत्रं हिमं ग्राहि कफवातास्रनुल्लघु ॥ १८ ॥
विष्टंभाध्मानजित्तिक्तं कषायं लघुलेखनम् ।

शालः ।

शालस्तु सर्जकार्श्याश्वकर्णकाः सस्यसंबरः ॥ १९ ॥
अश्वकर्णः कषायः स्याद्व्रणस्वेदकफक्रिमीन् ।
ब्रध्नविद्रधिबाधिर्य्ययोनिकर्णगदान्हरेत ॥ २० ॥

शालभेदः ।

सर्जकोऽन्योजकर्णः स्याच्छालो मरिचपत्रकः ।
अजकर्णः कटुस्तिक्तः कषायोष्णो व्यपोहति ॥ २१ ॥
कफपांडुश्रुतिगदान्मेहकुष्ठविषव्रणान् ।

शल्लकी[2] ।

शल्लकी गजभक्षा च सुवहा सुरभी रसा ।
महेरुणा कुंदुरुकी वल्लकी च बहुस्रवा ॥ २२ ॥
शल्लकी तुवरा शीता पित्तश्लेष्मातिसारजित् ॥
रक्तपित्तव्रणहरी पुष्टिकृत्समुदीरिता ॥ २३ ॥

---

१ दे० भा० शाल । सखुया । सांखु । बं० भा० शालगाछ। लताशील। इं० सालट्री । Sal tree. २ दे० भा० सलई, सक्की, सिल्हक, सालें । बं० भा० शलई । प० भा० मैदासक्क ।

शिंशिपा ।

शिंशिपा पिच्छिला श्यामा कृष्णसारा च सा गुरुः ।
कपिला सैव मुनिभिर्भस्मगर्भेति कीर्तिता ॥ २४ ॥
शिंशिपा कटुका तिक्ता कषाया शोथहारिणी ।
उष्णवीर्या हरेन्मेदःकुष्ठश्वित्रवमिक्रिमीन् ॥ २५ ॥
वस्तिरुग्व्रणदाहास्रबलासान् गर्भपातिनी ।

ककुभः ।

ककुभोऽर्जुननामा स्यान्नदीसर्जश्च कीर्तितः ॥ २६ ॥
इंद्रद्रुर्वीरवृक्षश्च वीरश्च धवलः स्मृतः ।
ककुभो शीतलो हृद्यः क्षतक्षयविषास्रजित् ॥ २७ ॥
मेदोमेहव्रणान् हंति तुवरः कफपित्तहृत् ।

असनः ।

बीजकः पीतसारश्च पीतशालक इत्यपि ॥ २८ ॥
बंधूकपुष्पः प्रियकः सर्जकश्चासनः स्मृतः ।
बीजकः कुष्ठवीसर्पश्वित्रमेहगदक्रिमीन् ॥ २९ ॥
हंति श्लेष्मास्रपित्तं च त्वच्यः केश्यो रसायनः ।

खदिरः ।

खदिरो रक्तसारश्च गायत्री दंतधावनः ॥ ३० ॥
कंटकी बालपत्रश्च बहुशल्यश्च यज्ञियः ।
खदिरः शीतलो दन्त्यः कंडुकासारुचिप्रणुत् ॥ ३१ ॥

---

१ दे० भा० टाहली । सीसम । श्वेता, कपिला । कृष्णा । वं० भा० शिशुगाच्छे । इं० ब्लाकवुडस ट्री । Black woodes tree. दे० २ भा० कौ । कौह । वं० भा० अर्जुन गाच्छ । ३ दे० भा० विजयसार । वं० भा० पियाशाल । प० भा०अलसन । फा०कमरकस् । इं० इंडयन्किन्सट्री Indian kinstree, असनस्य तु पुष्पाणि विपाके मधुराणि च । तिक्तानि पाचनीयानि वातलानि भवंति हि ॥ ४ दे० भा० खेर । श्वेत,रक्त, वं० भा० खैर गाच्छ ।

तिक्तः कषायो मेदोघ्नः कृमिमेहज्वरव्रणान् ।
श्वित्रशोथामपित्तास्रपांडुकुष्ठकफान् हरेत् ॥ ३२ ॥

श्वेतखदिरः ।[1]

खदिरः श्वेतसारोऽन्यः कदरः सोमवल्कलः ।
खदिरो विशदो वर्ण्यो मुखरोगकफास्रजित् ॥ ३३ ॥

इरिमेदः ।[2]

इरिमेदो विट्खदिरः कालस्कंधोऽरिमेदकः ।
इरिमेदः कषायोष्णो मुखदंतगदास्रजित् ॥ ३४ ॥
हंति कंडूविषश्लेष्मकृमिकुष्ठविषव्रणान् ।

रोहीतकः ।[3]

रोहीतको रोहितको रोही दाडिमपुष्पकः ॥ ३५ ॥
रोहीतकः प्लीहघाती रुच्यो रक्तप्रसादनः ।

किंकिरातः ।[4]

बबूलः किंकिरातः स्यात्किंकराटः सपीतकः ॥ ३६ ॥
स एव कथितस्तज्ज्ञैराभाषट्पदमोदनी ।
बबूलः कफनुद्ग्राही कुष्ठकृमिविषापहः ॥ ३७ ॥

अरिष्टकः ।[5]

अरिष्टकस्तु मांगल्यः कृष्णवर्णोऽर्थसाधनः ।

---

१ दे० भा० कत्था । बं०भा० खैर । फा०कात । इं० केटेच्य Catechu
२ दे०भा० दुर्गंधि खैर । बं०भा० विग् खैर । इं०स्पंज ट्री । Sapanj tree. (खैर गोंद) निर्यासस्तस्य मधुरो बल्यः शुक्रविवर्द्धनः । (खदिरसार) खदिरः खदिरोद्भूतस्तत्सारो रंगदः स्मृतः ॥ सारस्तु विशदो व्रण्यो मुखरोगकफास्रजित् ॥ १ ॥ ३ दे० भा० रुहेडा । श्वेत, रक्त । बं० भा० रोडा । कडार
४ दे० भा० किकर । बं०भा०बबूल गाछ । फा० मुगिलां । इं० एकसिया ट्री Ecasia tree. ५ दे०भा० रेठा । बं०भा०रिठे गाछ । फा० फिंदक् हिन्दी । इं० सोमबेरी सोपन ट्री । Sombari sopan tree. (अस्य निर्यासः)–

रक्तबीजः पीतफेनः फेनिलो गर्भपातनः ॥ ३८ ॥
अरिष्टकस्त्रिदोषघ्नो ग्रहजिद्गर्भपातनः ।

पुत्रजीवः ।

पुत्रजीवो गर्भकरो यष्टी पुष्णोर्थसाधकः ॥ ३९ ॥
पुत्रजीवो गुरुर्वृष्यो गर्भदः श्लेष्मवातहृत् ।
सृष्टमूत्रमलो रूक्षो हिमः स्वादुः पटुः कटुः ॥ ४० ॥

इंगुदः ।

इंगुदोंगारवृक्षश्च तिक्तकस्तापसद्रुमः ।
इंगुदः कुष्ठभूतादिग्रहव्रणविषक्रिमीन् ॥ ४१ ॥
हंत्युष्णः श्वित्रशूलघ्नस्तिक्तकः कटुपाकवान् ।

जिंगिनी ।

जिंगिनी झिंगिणी झिंगी सनिर्य्यासा प्रमोदिनी ॥ ४२ ॥
जिंगिनी मधुरा सोष्णा कषाया योनिशोधनी ।
कटुका व्रणहृद्रोगवातातीसारहृत्पटुः ॥ ४३ ॥

तमालः ।

तमालः शालवद्वेद्यो दाहविस्फोटहृत्पुनः ।

तुणी ।

तुणी तुन्नक आपीत्तः तुणिकः कच्छपस्तथा ॥ ४४ ।
कुठेरकः कांतलको नंदीवृक्षश्च नंदकः ।

—बबूलस्य तु निर्यासो ग्राही पित्तानिलापहा । रक्तातिसारपित्तास्रमेहप्रदरनाशनः भग्नसंधानकः शीतः शोणितस्रुतिवारणः ॥ १ ॥ १ दे० भा० जियोपोता । २ दे० भा० इंगोट । इं० डेलील Daleil । ३ दे० भा ० काली सिंवल । निर्यासवती । मोदनी जातनिर्यासो नस्याद्वातव्यथापहः । तत्पुष्पं वातलं ग्राहि पित्तासृक्प्रदरापहम् ॥ १ ॥ फलं रसायनं केश्यं वृंहणं शुक्रलं गुरु । मूत्रक्षयहरं तृष्णारक्तमूत्रविवंधकृत् ॥ २ ॥ इंगुदाः फलमज्जको जलयुतो लेपान्मुखे कांतिदः । ४ दे० भा० तमाल ।

तुणीरुक्तः कटुः पाके कषायो मधुरो लघुः ॥ ४५ ॥
तिक्तो ग्राही हिमो वृष्यो व्रणकुष्ठास्रपित्तजित्।

भूर्जपत्रः[1]।

भूर्जपत्रः स्मृतो भूर्जश्चर्मी बहुलवल्कलः ॥ ४६ ॥
भूर्जो भूतग्रहश्लेष्मकर्णरुक्पित्तरक्तजित्।
कषायो राक्षसघ्नश्च मेदोविषहरः परः ॥ ४७ ॥

पलाशः[2]।

पलाशः किंशुकः पर्णो याज्ञिको रक्तपुष्पकः।
क्षारश्रेष्ठो वातहरो ब्रह्मवृक्षः समिद्वरः ॥ ४८ ॥
पलाशो दीपनो वृष्यः सरोष्णो व्रणगुल्मजित्।
कषायः कटुकस्तिक्तः स्निग्धो गुदजरोगजित ॥ ४९ ॥
भग्नसंधानकृद्दोषग्रहण्यर्शःकृमीन् हरेत्।

शालमली।

शालमलिस्तु भवेन्मोचा पिच्छिला पूरणीति च ॥ ५० ॥
रक्तपुष्पा स्थिरायुश्च कंटकाढ्या च तूलिनी।
शालमलिः शीतला स्वाद्वी रसे पाके रसायनी ॥ ५१ ॥
श्लेष्मला पित्तवातास्रहारिणी रक्तपित्तजित्।

मोचरसः[3]।

निर्यासः शालमलेः पिच्छाशालमलिर्वेष्टकोऽपि च ॥ ५२ ॥
मोचास्रावो मोचरसो मोचनिर्य्यास इत्यपि।

---

१ दे० भा० भोजपत्र, भूर्जपत्र। बं० भा० भूजि पत्र। इं० जकेमोटी Jakimoti. २ दे० भा० छिछरा। ढाक। टेसू। केसू। बं० भा० पला-शगाछ। इं० डोडनीब्रांचव्युटिपा। पलाशमूलस्वरसो नेत्रच्छायांधपुष्पजित्। तद्बीजं क्रिमिविध्वंसि कांडो रसायने हितः ॥ १ ॥ पलाशभवनिर्य्यासो ग्राही च क्षपयेद्ध्रुवम्। ग्रहणीं मुखजान् कासान् जयेत्स्वेदातिनिर्गमम् ॥ २ ॥ ३ दे० भा० सेमरका गूंद। बं० भा० शिमुलेर आटा। इं० सिल्ककाटन ट्री। Silk cotton tree.

मोचास्रावो हिमो ग्राही स्निग्धो वृष्यः कषायकः ॥५३॥
प्रवाहिकातीसारामकफपित्तास्रदाहनुत् ।

कूटशाल्मलिः[1] ।

कुत्सिता शाल्मलिः प्रोक्ता रोचना कूटशाल्मलिः ॥५४॥
कूटशाल्मलिका तिक्ता कटुका कफवातनुत् ।
भेद्युष्णा प्लीहजठरयकृद्गुल्मविषापहा ॥ ५५ ॥
भूतानाहविबन्धास्रमेदःशूलकफापहा ।

धवः[2] ।

धवो धटो नंदितरुः स्थिरो गौरो धुरंधरः ॥ ५६ ॥
धवः शीतः प्रमेहार्शःपांडुपित्तकफापहः ।
मधुरस्तुवरस्तस्य फलं च मधुरं मनाक् ॥ ५७ ॥

धन्वंगः[3] ।

धन्वंगस्तु धनुर्वृक्षो गोत्रवृक्षस्तु तेजनः ।
धन्वंगः कफपित्तास्रकासहृत्तुवरो लघुः ॥ ५८ ॥
बृंहणो बलकृद्रूक्षः संधिकृद्व्रणरोपणः ।

करीरः[4] ।

करीरः क्रकरो पत्रो ग्रंथिलो मरुभूरुहः ॥ ५९ ॥
करीरः कटुकस्तिक्तः स्वेद्युष्णो भेदनः स्मृतः ।
दुर्नामकफवातामगरशोथव्रणप्रणुत् ॥ ६० ॥

शाखोटः[5] ।

शाखोटः पीतफलको भूतावासः खरच्छदः ।
शाखोटो रक्तपित्तार्शोवातश्लेष्मातिसारजित् ॥ ६१ ॥

---

१ दे० भा० कौडी सिवल । २ दे० भा० धौं । कहुवा । वं० भा० धाऊयागाछ । ३ धामन । ४ दे० भा० करीर । कचडा । टींट । वं० भा० करील । फा० कबार । इं० केपर kaper. 'मूलं कटुकषायञ्च पित्तकृद्दीपनं परम् ।' इसके फलको डेले कहते हैं । ५ दे० भा० देहा । सहोडा । वं० भा० शेओडा ।

वरुणः[1] ।

वरुणो वरणः सेतुस्तिक्तशाकः कुमारकः ।
कषायो मधुरस्तिक्तः कटुको रूक्षको लघुः ॥ ६२ ॥

कटभी[2] ।

कटभी स्वादुपुष्पा च मधुरेणुः कटंभरा ।
कटभी तु प्रमेहार्शोनाडीव्रणविषक्रिमीन् ॥ ६३ ॥
अत्युष्णा कफकुष्ठघ्नी कटू रूक्षा च कीर्तिता ।
तत्फलं तुवरं ज्ञेयं विशेषात्कफशुक्रहृत् ॥ ६४ ॥

गोलीढः[3] ।

मोक्षस्तु मोक्षकोऽपि स्याद्गोलीढो गोलिहस्तथा ।
क्षारश्रेष्ठः क्षारवृक्षो द्विविधः श्वेतकृष्णकः ॥ ६५ ॥
मोक्षकः कटुकस्तिक्तो ग्राह्युष्णः कफवातहृत् ।
विषमेदोगुल्मकंडूवस्तिरुक्क्रिमिशुक्रनुत् ॥ ६६ ॥

अंबुशिरीषिका[4] ।

शिरीषिका ढिंढिणिका दुर्बलांबुशिरीषिका ।
त्रिदोषविषकुष्ठार्शोहरी वारिशिरीषिका ॥ ६७ ॥

शमी[5] ।

शमी सक्तुफला तुंगा केशहंतृफला शिवा ।
मंगल्या च तथा लक्ष्मीः शमी रासालिपका स्मृता ॥६८॥
शमी तिक्ता कटुः शीता कषाया रेचनी लघुः ।
कफकासभ्रमश्वासकुष्ठार्शःक्रिमिजित्स्मृता ॥ ६९ ॥

सप्तपर्णः[6] ।

सप्तपर्णो विशालत्वक् शारदो विषमच्छदः ।

---

१ दे० भा० बरना । बं भा० बरुक्षा गाच्छ । २ दे० भा० कांटीवाला सिरस । श्वेत । श्याम । इं० केरिस ट्री cares tree । ३ दे० भा० घंटापाटलि । बं० भा० घंटा पारुल । प० भा० पाडल । ४ दे० भा० डिढाना । डिढैन । ५ दे० भा० जंडी । जंड । बं० भा० शांई । इं० स्पंज ट्री spanjtree. ६ दे० भा० सतोना । सातपुडा । बं० भा० छातिम गाच्छ ।

सप्तपर्णो व्रणश्लेष्मवातकुष्ठास्रजंतुजित् ॥ ७० ॥
दीपनः श्वासगुल्मघ्नः स्निग्धोष्णस्तुवरः सरः ।

तिनिशः[1] ।

तिनिशः स्यंदनो नेमी रथद्रुर्वंजुलस्तथा ॥ ७१ ॥
तिनिशः श्लेष्मपित्तास्रमेदःकुष्ठप्रमेहजित् ।
तुवरः श्वित्रदाहघ्नो व्रणपांडुक्रिमिप्रणुत् ॥ ७२ ॥

भूमिसहा[2] ।

भूमिसहो द्वारदा तु शरद्भानुः खरच्छदः ।
भूमिसहस्तु शिशिरो रक्तपित्तप्रसादनः ॥ ७३ ॥

इति वटादिवर्गः ।

धातुवर्गः ।

तत्र धातूनां लक्षणानि गुणाश्च ।

स्वर्णं रूप्यं च ताम्रं च वंगं यसदमेव च ।
सीसं लोहं च सप्तैते धातवो गिरिसंभवाः ॥ १ ॥
वलीपलितखालित्यं कार्श्याऽबल्यजरामयान् ।
निवार्य्य देहं दधति नृणां तद्धातवो मताः ॥ २ ॥

सुवर्णोत्पत्तिनामलक्षणगुणाः[3] ।

पुरा निजाश्रमस्थानां सप्तर्षीणां[2] जितात्मनाम् ।
पत्नीर्विलोक्य लावण्यलक्ष्मीसंपन्नयौवनाः ॥ ३ ॥

---

१ दे० भा० तिनासवा । तिरिछा । वं० भा० तिनाश । सासना । २ दे० भा० भूई सहदेई । उलखड । औखड । ३ दे० भा० सोना । वं० भा० सोना । फा० तिला । इं० गोल्ड् । gold. कनकं सेवयेन्नित्यं जरामृत्युविनाशनम् । कायाग्निपुष्टिजननं वाजीकरणमुत्तमम् ॥ आयुष्यं बलमारोग्यं वज्रे स्वर्णे रसे स्थितम् ॥ १ ॥ २ मरीचिरंगिरा अत्रिः पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः । वसिष्ठश्चेति सप्तैते कीर्तिताः सप्तर्षयः ॥ २ ॥

कंदर्पदर्पविध्वस्तचेतसो जातवेदसः ।
पतितं यद्धरापृष्ठे रेतस्तद्धेमतामगात् ॥ ४ ॥
स्वर्णं सुवर्णं कनकं हिरण्यं हेम हाटकम् ।
तपनीयं च गांगेयं कलधौतं भर्मकांचनम् ॥ ५ ॥
चामीकरं शातकुंभं तथा कार्तस्वरं च तत् ।
जांबूनदं जातरूपं महारजतमित्यपि ॥ ६ ॥
रुक्मं लोहवरं चाग्निबीजं चांपेयकर्बुरे ।
अष्टापदं च रसजं तैजसं चापि कीर्तितम् ॥ ७ ॥
प्राकृतं सहजं वह्निसंभूतं खनिसंभवम् ।
रसेंद्रवेधसं जातं स्वर्णं पंचविधं स्मृतम् ॥ ८ ॥
दाहे रक्तं सितं छेदे निकषे कुंकुमप्रभम् ।
तारशुल्बोज्झितं स्निग्धं कोमलं गुरु हेमसत् ॥ ९ ॥
तच्छ्वेतं कठिनं रूक्षं विवर्णं समलं दलम्[1] ।
दाहे छेदे सितं श्वेतं कषे त्याज्यं लघु स्फुटम्[2] ॥ १० ॥
सुवर्णं शीतलं वृष्यं बल्यं गुरु रसायनम् ।
स्वादु तिक्तं च तुवरं पाके तु स्वादु पिच्छिलम् ॥ ११ ॥
पवित्रं बृंहणं नेत्र्यं मेधास्मृतिमतिप्रदम् ।
हृद्यमायुष्करं कांतिवाग्विशुद्धिस्थिरत्वकृत् ॥ १२ ॥
विषद्वयं क्षयोन्मादत्रिदोषज्वरशोषजित् ॥ १३ ॥
बलं सवीर्य्यं हरते नराणां रोगव्रजान् पोषयतीह काये ।
असौख्यकार्य्येव सदा सुवर्णमशुद्धमेतन्मरणं च कुर्य्यात् १४
असम्यङ्मारितं स्वर्णं बलं वीर्य्यं च नाशयेत् ।
करोति रोगान् मृत्युं च तद्धन्याद्यत्नतस्ततः ॥ १५ ॥

रजतम्[3] ।

त्रिपुरस्य वधार्थाय निर्निमेषैर्विलोचनैः ।

---

१ दलं, जोरत इति । २ यद्घनाहतं स्फुटति । सितया हंति दाहाद्यं वातपित्तं फलत्रिकात् । त्रिसुगंध्या प्रमेहादिभ्रजं तं हंत्यसंशयम् ॥ १ ॥ ३ दे० भा० चांदी । बं० भा० रूप फा० नुकरा इं० सिल्वर silver.

निरीक्षयामास शिवः क्रोधेन परिपूरितः ।
अग्निस्तत्कालमपतत्तस्यैकस्माद्विलोचनात् ॥ १६ ॥
ततो रुद्रः समभवद्वैश्वानर इव ज्वलन् ।
द्वितीयादपतन्नेत्रादश्रुबिंदुस्तु वामकात् ॥ १७ ॥
तस्माद्रजतमुत्पन्नमुक्तकर्मसु योजयेत् ।
रजतं त्रिविधं प्रोक्तं सहजं खनिजकृत्रिमे ॥ १८ ॥
कृत्रिमं च भवेत्तद्धि वंगादिरसयोगतः ।
रूप्यं तु रजतं तारं चंद्रकांतिसितप्रभम् ॥ १९ ॥
वसूत्तमं च कुप्यं च खर्जूरं रंगबीजकम् ।
गुरु स्निग्धं मृदु श्वेतं दाहे छेदे घनक्षमम् ॥ २० ॥
वर्णाढ्यं चंद्रवत्स्वच्छं रूप्यं नवगुणं शुभम् ।
कठिनं कृत्रिमं रूक्षं रक्तं पीतदलं लघु ॥ २१ ॥
दाहच्छेदघनैर्नष्टं रूप्यं दुष्टं प्रकीर्तितम् ।
रूप्यं तिक्तं कषायाम्लं स्वादु पाकरसं सरम् ॥ २२ ॥
वयसः स्थापनं स्निग्धं लेखनं वातपित्तजित् ।
प्रमेहादिकरोगांश्च नाशयत्यचिराद्ध्रुवम् ॥ २३ ॥
तारं शरीरस्य करोति तापं विड्बंधनं यच्छति शुक्रनाशम् ।
वीर्य्यं बलं हंति तनोस्तु पुष्टिं महागदान्पोषयति ह्यशुद्धम् २४

ताम्रम्[१] ।

शुक्रं यत्कार्तिकेयस्य पतितं धरणीतले ।
तस्मात्ताम्रं समुत्पन्नमिदमाहुः पुराविदः ॥ २५ ॥
ताम्रमौदुंबरं शुल्बमुदुंबरमपि स्मृतम् ।
रविप्रियं म्लेच्छमुखं सूर्य्यपर्यायनामकम् ॥ २६ ॥
जपाकुसुमसंकाशं स्निग्धं मृदु घनक्षमम् ।
लोहं नागोज्झितं ताम्रं मारणाय प्रशस्यते ॥ २७ ॥

---

१ दे० भा० तांबा । बं० भा० तामा । फा० मिस. । इं० कापर copper.

कृष्णं रूक्षमतिस्तब्धं श्वेतं चापि घनासहम् ।
लोहनागयुतं चेति शुल्बं दुष्टं प्रकीर्तितम् ॥ २८ ॥
ताम्रं कषायं मधुरं च तिक्तमम्लं च पाके कटु सारकं च ॥
पित्तापहं श्लेष्महरं च शीतं तद्रोपणं स्याल्लघु लेखनं च२९॥
पांडूदराशोंज्वरकुष्ठकासश्वासक्षयान्पीनसमम्लपित्तम् ।
शोथं कृमिं शूलमपाकरोति प्राहुः परे बृंहणमल्पमेतत् ३०
न विषं विषमित्याहुस्ताम्रं तु विषमुच्यते ।
एको दोषो विषे ताम्रे त्वष्टौ दोषाः प्रकीर्तिताः ॥ ३१ ॥
दाहः स्वेदोऽरुचिर्मूर्च्छा क्लेदो रेको वमिर्भ्रमः ।

वंग[1]म् ।

रंगं वंगं त्रपु प्रोक्तं तथा पिच्चटमित्यपि ॥ ३२ ॥
खुरकं मिश्रकं चापि द्विविधं वंगमुच्यते ।
उत्तमं खुरकं तत्र मिश्रकं त्ववरं मतम् ॥ ३३ ॥
रंगं लघु सरं रूक्षमुष्णं मेहकफक्रिमीन् ।
निहंति पांडुं सश्वासं चक्षुष्यं पित्तलं मनाक् ॥ ३४ ॥
सिंहो यथा हस्तिगणं निहंति तथैव वंगोऽखिलमेहवर्गम् ।
देहस्य सौख्यं प्रबलेंद्रियत्वं नरस्य पुष्टिं विदधाति नूनम् ३५

य[2]सदं ।

यसदं रंगसदृशं रीतिहेतुश्च तन्मतम् ।
यसदं तुवरं तिक्तं शीतलं कफपित्तहृत् ॥ ३६ ॥
चक्षुष्यं परमं मेहान्पांडुं श्वासं च नाशयेत् ।

सीस[3]कम् ।

दृष्ट्वा भोगिसुतां रम्यां वासुकिस्तु मुमोच यत् ॥ ३७ ॥

१ दे० भा० कली । कलई । रांग । बं० भा० रांग बंग । फा० अरजीज । इं० टीन् । tin. २ दे० भा० जिस्त, जसद । बं०भा० दस्ता । फा० रुरातूतिया । इं० जिक् । zinc. ३ दे० भा० सिक्का सीसा । बं० भा० सीसे । फा० सुर्ब । इं० लेड् lead

वीर्य्यं जातस्ततो नागः सर्वरोगापहो नृणाम् ।
सीसं वर्ध्रं च वप्रं च योगेष्टं नागनामकम् ।
सीसं वंगगुणं ज्ञेयं विशेषान्मेहनाशनम् ॥ ३८ ॥
नागस्तु नागशततुल्यबलं ददाति
व्याधिं विनाशयति जीवनमातनोति ॥
वह्निं प्रदीपयति कामबलं करोति
मृत्युं च नाशयति सन्ततसेवितस्सः ॥ ३९ ॥
पाकेन हीनौ किल वंगनागौ
कुष्ठानि गुल्मांश्च तथातिकष्टान् ।
पांडुप्रमेहानलसादशोथ-
भगंदरादीन् कुरुतः प्रभुक्तौ ॥ ४० ॥

लोहम् ।

पुरा लोमिनदैत्यानां निहतानां सुरैर्युधि ।
उत्पन्नानि शरीरेभ्यो लोहानि विविधानि च ॥ ४१ ॥
लोहोऽस्त्री शस्त्रकं तीक्ष्णं पिंडं कालायसायसी ।
गुरुता दृढतोत्क्लेदकश्मलं दाहकारिता ॥ ४२ ॥
अश्मदोषः सुदुर्गंधो दोषाः सप्तायसस्य तु ।
लोहं तिक्तं सरं शीतं मधुरं तुवरं गुरु ॥ ४३ ॥
रूक्षं वयस्यं चक्षुष्यं लेखनं वातलं जयेत् ।
कफपित्तं गरं शूलं शोथार्शःप्लीहपांडुताः ।
मेदोमेहकृमीन्कुष्ठं तत्किट्टं तद्वदेव हि ॥ ४४ ॥
खडत्वकुष्ठामयमृत्युदं भवेद्हृद्रोगशूलौ कुरुतेऽश्मरीं च ।
नानारुजानांच तथाप्रकोपं करोतिहल्लासमशुद्धलोहम् ४५

---

१ नागः भुजंगः इत्यादि । १ दे० भा० लोहा, फोलाद, इस्पात । वं० भा० लोह, तिगा, इसपात काल लोह । फा० आहन्, फोलाद, संगे आहन् । इं० आयरन् Iron गुंजामेकां समारभ्य यावत्स्युर्नव रक्तिकाः । तावल्लोहं समश्नीयाद्यथादोषबलं नरः ॥ १ ॥

जीवहारि मदकारि चायसं चेदशुद्धिमदसंस्कृतं ध्रुवम् ।
पाटवं न तनुते शरीरके दारुणं हृदि रुजां च यच्छति ४६॥
कूष्मांडं तिलतैलं च माषान्नं राजिकां तथा ।
मद्यमम्लरसं चापि त्यजेल्लोहस्य सेवकः ॥ ४७ ॥

लोहसारम् ।

क्ष्माभृच्छिखराकाराण्यंगान्यम्लेन लेपिते ।
लोहे स्युर्यत्र सूक्ष्माणि तत्सारमभिधीयते ॥ ४८ ॥
लोहं साराह्वयं हन्यात् ग्रहणीमतिसारकम् ।
अर्द्धं सर्वांगजं वातं शूलं च परिणामजम् ॥ ४९ ॥
छर्दिं च पीनसं पित्तं श्वासं कासं व्यपोहति ॥ ५० ॥

कांतलोहम् ।

पात्रे यस्मिन् प्रसरति जले तैलबिंदुर्निषिक्तो ।
विङ्गं गंधं त्यजति च निजं रूषितं निंबकल्कैः ।
तप्तं दुग्धं भवति शिखराकारकं नैति भूमिं
कृष्णांगः स्यात्सजलचणकः कांतलोहं तदुक्तम् ॥ ५१ ॥
गुल्मोदरार्शःशूलाममामवातं भगंदरम् ॥
कामलाशोथकुष्ठानि क्षयं कांतमयो हरेत् ॥ ५२ ॥
प्लीहानमम्लपित्तं च यकृच्चापि शिरोरुजम् ।
सर्वान् रोगान्विजयते कांतलोहं न संशयः ॥ ५३ ॥
बलं वीर्य्यं वपुःपुष्टिं कुरुतेऽग्निं विवर्द्धयेत ॥ ५४ ॥

मंडूरम् ।

ध्मायमानस्य लोहस्य मलं मंडूरमुच्यते ।
लोहसिंहानिका किट्टी सिंहानं च निगद्यते ॥ ५५ ॥
यल्लोहं यद्गुणं प्रोक्तं तत्किट्टमपि तद्गुणम् ।

---

१ शतोर्द्धमुत्तमं किट्टं मध्यं चाशीतिवार्षिकम् । अधमं षष्टिवर्षीयं ततो हीनं विषोपमम् ॥

सप्तोपधातवः[1] ।

सप्तोपधातवः स्वर्णमाक्षिकं तारमाक्षिकम् ॥ ५६ ॥
तुत्थं कांस्यं च रीतिश्च सिंदूरश्च शिलाजतु ।
उपधातुषु सर्वेषु तत्तद्धातुगुणा अपि ॥ ५७ ॥
संति किं तेषु ते गौणाः तत्तदंशाल्पभावतः ।

स्वर्णमाक्षिकम्[2] ।

स्वच्छं माक्षिकमाख्यातं तापीजं मधुमाक्षिकम् ॥ ५८ ॥
ताप्यं माक्षिकधातुश्च मधुधातुश्च स स्मृतः ।
किंचित्सुवर्ण साहित्यात् स्वर्णमाक्षिकमीरितम् ॥ ५९ ॥
उपधातुः सुवर्णस्य किंचित्स्वर्णगुणान्वितः ।
तथा च कांचनाभावे दीयते स्वर्णमाक्षिकम् ॥ ६० ॥
किंतु तस्यानुकल्पत्वात् किंचिदूनगुणं ततः ।
न केवलं स्वर्णगुणो वर्तते स्वर्णमाक्षिके ॥ ६१ ॥
द्रव्यांतरस्य संसर्गात्संत्यन्येऽपि गुणा यतः ।
सुवर्णमाक्षिकं स्वादु तिक्तं वृष्यं रसायनम् ॥ ६२ ॥
चक्षुष्यं वस्तिरुक्कुष्ठपांडुमेहविषोदरान् ।
अर्शः शोथं विषं कंडुं त्रिदोषमपि नाशयेत् ॥ ६३ ॥
मंदानलत्वं बलहानिमुग्रां विष्टंभतां नेत्रगदान्सकुष्ठान् ।
तथैव मालां व्रणपूर्विकां च करोति तापीजमशुद्धमेतत् ६४॥

तारमाक्षिकम्[3] ।

तारमाक्षिकमन्यत्तु तद्भवेद्रजतोपमम् ।
किंचिद्रजतसाहित्यात्तारमाक्षिकमीरितम् ॥ ६५ ॥
अनुकल्पतया तस्य ततो हीनगुणं स्मृतम् ।
न केवलं रूप्यगुणा वर्तते तारमाक्षिके ॥ ६६ ॥
द्रव्यांतरस्य संसर्गात्संत्यन्येऽपि गुणा यतः ॥ पूर्ववत् ॥

---

१ गौणधातवः । २ दे० भा० सोनामखी । बं० भा० स्वर्णमाक्षिक इं० आयनपाईराईटीस । ३ दे० भा० रूपामाखी ।

तुत्थम्[1] ।

तुत्थं वितुन्नकं चापि शिखिग्रीवं मयूरकम् ॥ ६७ ॥
तुत्थं ताम्रोपधातुर्हि किंच ताम्रेण तद्भवेत् ।
किंचित्ताम्रगुणं तस्माद्वक्ष्यमाणगुणं च तत् ॥ ६८ ॥
तुत्थकं कटुकं क्षारं कषायं वामकं लघु ।
लेखनं भेदनं शीतं चक्षुष्यं कफपित्तहृत् ॥ ६९ ॥
विषाश्मकुष्ठकंडूघ्नं खर्परं चापि तद्गुणम् ।

कांस्यम्[2] ।

ताम्रत्रपुजमाख्यातं कांस्यं घोषं च कांसकम् ॥ ७० ॥
उपधातुर्भवेत्कांस्यं द्वयोस्तरणिरंगयोः ।
कांस्यस्य तु गुणा ज्ञेयाः स्वयोनिसदृशा जनैः ॥ ७१ ॥
संयोगजप्रभावेण तस्यान्येपि गुणाः स्मृताः ।
गुरु नेत्रहितं रूक्षं कफपित्तहरं परम् ॥ ७२ ॥

पित्तलम्[3] ।

पित्तलं त्वारकूटं स्यादारो रीतिश्च कथ्यते ॥ ७३ ॥
राजरीतिर्ब्रह्मरीतिः कपिला पिंगलापि च ।
रीतिरप्युपधातुः स्यात्ताम्रस्य यसदस्य च ॥ ७४ ॥
पित्तलस्य गुणा ज्ञेयाः स्वयोनिसदृशा जनैः ।
संयोगजप्रभावेण तस्यान्येऽपि गुणाः स्मृताः ॥ ७५ ॥
रीतिकायुगलं रूक्षं तिक्तं च लवणं रसे ।
शोधनं पांडुरोगघ्नं कृमिघ्नं नातिलेखनम् ॥ ७६ ॥

---

१ दे० भा० नीलाथोथा तूतिया बं० भा० तुतिया । फा० दूदिया । इं० आलपोढ आंफकांपर । वमने मंडले दद्रौ विषे चैव प्रशस्यते । २ दे० भा० कांसी ब०भा० कांसा । फा० रोइन । इं० बेलमेटल Bial matal. ३ दे० भा० पित्तल । बं० भा० कांचापितल । फा० विरंज । इं० ब्रास Brass

सिंदूरम् ।[1]

सिंदूरं रक्तरेणुश्च नागगर्भं च सीसकम् ।
सीसोपधातुः सिंदूरं गुणैस्तत्सीसवन्मतम् ॥ ७७ ॥
सिंदूरमुष्णवीसर्पकुष्ठकंडूविषापहम् ।
भग्नसंधानजननं व्रणशोधनरोपणम् ॥ ७८ ॥

शिलाजतु ।[2]

निदाघे घर्मसंतप्ता धातुसारं धराधराः ।
निर्यासवत्प्रमुंचंति तच्छिलाजतु कीर्तितम् ॥ ७९ ॥
सौवर्णं राजतं ताम्रमायसं तच्चतुर्विधम् ।
शिलाजत्वद्रिजतु च शैलनिर्यास इत्यपि ॥ ८० ॥
गैरेयमश्मजं चापि गिरिजं शैलधातुजम् ।
शिलाजं कटुतिक्तोष्णं कटुपाकं रसायनम् ॥ ८१ ॥
छेदि योगवहं हंति कफमेदोश्मशर्कराः ।
मूत्रकृच्छ्रं क्षयं श्वासं वातार्शांसि च पांडुताम् ॥ ८२ ॥
अपस्मारं तथोन्मादं शोथकुष्ठोदरक्रिमीन् ।
सौवर्णं तु जपापुष्पवर्णं भवति तद्रसात् ॥ ८३ ॥
मधुरं कटु तिक्तं च शीतलं कटुपाकि च ।
ताम्रं मयूरकंठाभं तीक्ष्णमुष्णं च जायते ॥ ८४ ॥
लौहं जटायुःपक्षाभं तिक्तकं लवणं भवेत् ।
विपाके कटुकं शीतं सर्वश्रेष्ठमुदाहृतम् ॥ ८५ ॥

रसः ।

रसायनार्थिभिर्लोके पारदो रस्यते यतः ।
ततो रस इति प्रोक्तः स च धातुरपि स्मृतः ॥ ८६ ॥

---

१ दे० भा० सिंदूर । बं० भा० सिंदुर । फा० सिरिनज् । २ दे० भा० शिलाजीत बं०भा० शिलाजतु । इं० आसफेलट जुझपिच । Assfailt Jojh-pich (परीक्षा) गोमूत्रगंधवत्कृष्णं स्निग्धं मृदु तथा गुरु । तिक्तं कषायं शीतं च सर्वश्रेष्ठं तदायसम् ॥ १ ॥ विंध्याद्रौ बहुलं तत्तु तत्र लोहं यतोऽधिकम् तच्छोधनमृते व्यर्थमनेकमलमेलनात् ॥ २ ॥

पारदम्¹।

शिवांगात्प्रच्युतं रेतः पतितं धरणीतले ॥
तद्देहसारजातत्वाच्छुक्लमच्छमभूच्च तत् ॥ ८७ ॥
क्षेत्रभेदेन विज्ञेयं शिववीर्य्यं चतुर्विधम् ।
श्वेतं रक्तं तथा पीतं कृष्णं तत्तु भवेत् क्रमात् ॥ ८८ ॥
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्च खलु जातितः ।
श्वेतं शस्तं रुजां नाशे रक्तं किल रसायने ॥ ८९ ॥
धातुवेधे तु तत्पीतं खे गतौ कृष्णमेव च ।
पारदो रसधातुश्च रसेंद्रश्च महारसः ॥ ९० ॥
चपलः शिववीर्य्यश्च रसः सूतः शिवाह्वयः ।
पारदः षड्रसः स्निग्धस्त्रिदोषघ्नो रसायनः ॥ ९१ ॥
योगवाही महावृष्यः सदा दृष्टिबलप्रदः ।
सर्वामयहरः प्रोक्तो विशेषात्सर्वकुष्ठनुत् ॥ ९२ ॥
स्वस्थो रसो भवेद्ब्रह्मा बद्धो ज्ञेयो जनार्दनः ।
रंजितः क्रामितश्चापि साक्षाद्देवो महेश्वरः ॥ ९३ ॥
मूर्च्छितो हरति रुजं बंधनमनुभूय खेगतिं कुरुते ।
अजरीकरोति हि मृतः कोऽन्यः करुणाकरः सूतात्॥९४॥
असाध्यो यो भवेद्रोगो यस्य नास्ति चिकित्सितम् ।
रसेंद्रो हंति तं रोगं नरकुंजरवाजिनाम् ॥ ९५ ॥
मलं विषं वह्निगिरित्वचापलं नैसर्गिकं दोषमुशंति पारदे।
उपाधिजौ द्वौ त्रपुनागयोगजौ दोषौ रसेंद्रेकथितौ मुनीश्वरैः
मलेन मूर्च्छा मरणं विषेण दाहोऽग्निना कष्टतरः शरीरे ।

---

१ दे०भा० पारा। वं०भा०पारा। फा० सीमाव। इं०मर्क्युर marqure. (पारदपथ्यानि) हितं मुद्गान्नदुग्धाज्यशाल्यन्नानि सदा ततः। शाके पुनर्नवा देवि मेघनादं सवास्तुकम् ॥ १ ॥ सैंधवं नागरं मुस्ता मूलकानि च भक्षयेत् । आत्मज्ञानं कथा पूजा शिवस्य च विशेषतः ॥ २ ॥ एतांस्तु समयान्भद्रे न लंघेद्रसभक्षकः ॥

देहस्य जाड्यं गिरिणा सदा स्या--
च्चांचल्यतो वीर्य्यहतिश्च पुंसाम् ॥ ९७ ॥
वंगेन कुष्ठं भुजगेन गंडो भवेत्ततोऽसौ परिशोधनीयः॥९८॥
वह्निर्विषं मलं चेति मुख्या दोषास्त्रयो रसे ।
एते कुर्वंति संतापं मृतिं मूर्च्छां नृणां क्रमात् ॥ ९९ ॥
अन्येऽपि कथिता दोषा भिषग्भिः पारदे यदि ।
तथाप्येते त्रयो दोषा हरणीया विशेषतः ॥ १०० ॥
संस्कारहीनं खलु सूतराजं यस्सेवते तस्य करोति बाधाम्
देहस्य नाशं विदधाति नूनं कुष्ठांश्च रोगाञ्जनयेन्नराणाम्।

उपरसाः[1] ।

गंधो हिंगुलमभ्रतालकशिलाः स्रोतोंजनं टकणं
राजावर्तकचुंबकौ स्फुटिकया शंखः खटीगैरिकम् ।
कासीसं रसकं कपर्दसिकताबोलाश्च कंकुष्ठकं
सौराष्ट्री च मता अमी उपरसाः सूतस्य किंचद्गुणैः॥१०२॥

गंधकम्[2] ।

श्वेतद्वीपे पुरा देव्याः क्रीडंत्या रजसाप्लुतम् ।
दुकूलं तेन वस्त्रेण स्नातायाः क्षीरनीरधौ ॥ १०३ ॥
प्रसृतं यद्रजस्तस्माद्गंधकः समभूत्तदा ।
गंधको गंधिकश्चापि गंधपाषाण इत्यपि ॥ १०४ ॥
सौगंधिकश्च कथितो वलिर्वलवसापि च ।
चतुर्धा गंधकः प्रोक्तो रक्तः पीतः सितोऽसितः ॥ १०५ ॥
रक्तो हेमक्रियासूक्तः पीतश्चैव रसायने ।
व्रणादिलेपने श्वेतः कृष्णः श्रेष्ठः सुदुर्लभः ॥ १०६ ॥
गंधकः कटुकास्तिक्तो वीर्योष्णस्तुवरः सरः ।
पित्तलः कटुकः पाके कंडुवीसर्पजंतुजित ॥ १०७ ॥
हंति कुष्ठक्षयप्लीहकफवातान् रसायनः ॥ १०८ ॥

---

१ उपरसा गौणरसाः । २ दे०भा० गंधक । वं०भा० गंधक इं०सल्फ्योरिक ।

अशोधितो गंधक एष कुष्ठं करोति तापं विषमं शरीरे ।
सौख्यंचरूपंचबलंतथौजःशुक्रं निहंत्येवकरोतिचामम् १०९

हिंगुलम् ।

हिंगुलं दरदं म्लेच्छमिंगुलं पूर्णपारदम् ।
मक्षिरंगं सुरंगं च नाम्ना कर्मारबंधनम् ॥
दरदस्त्रिविधः प्रोक्तश्चर्मारः शुकतुंडकः ॥ ११० ॥
हंसपादस्तृतीयः स्याद्गुणवानुत्तरोत्तरम् ।
चर्मारः शुक्लवर्णः स्यात्सपीतः शुकतुंडकः ॥ १११ ॥
जपाकुसुमसंकाशो हंसपादो महोत्तमः ।
तिक्तं कषायं कटु हिंगुलं स्यान्नेत्रामयघ्नं कफपित्तहारि ।
हृल्लासकुष्ठज्वरकामलाश्च प्लीहामवातौ च गरं निहंति११२
ऊर्ध्वपातनयुक्त्या तु डमरूयंत्रपाचितम् ।
हिंगुलं तस्य सूतं तु शुद्धमेव न शोधयेत् ॥ ११३ ॥

अभ्रकम् ।

पुरा वधाय वृत्रस्य वज्रिणा वज्रमुद्धृतम् ।
विस्फुलिंगास्ततस्तस्माद्गगने परिसर्पिताः ॥ ११४ ॥
ते निपेतुर्घनध्वानाः शिखरेषु महीभृताम् ।

---

१ दे० भा० शिंगरफ । बं० भा० हिंगुल । फा० सिंग्रफ । ई० सल्फेरेट ओफर्क्युरी । (हिंगुलनिर्माणम्) अशुद्धपारदं भागं चतुर्भागं तु गंधकम् । उभौ क्षिप्त्वा लोहपात्रे क्षणं मृद्वग्निना पचेत् ॥ १ ॥ कृत्वाथ खंडशस्तत्र काचकूप्यां निरुध्य च । वस्त्रमृत्तिकया सम्यक्काचकूपीं प्रलेपयेत् ॥ २ सर्वतो गुलमानेन च्छायाशुष्कं तु कारयेत् । वालुकायंत्रगर्भे तु दिनं मृद्वग्निना पचेत् ॥ ३ ॥ क्रमवृद्धयाग्निना पश्चात्पचेद्दिवसपंचकम् । सप्ताहे तु समुद्धृत्य हिंगुलः स्यान्मनोहरः ॥ ४ ॥ २ दे० भा० अभ्रक । अभ्रख । बं० भा० अभ्र । फा० सितारा जमीन । इ० टाल्क ग्लिमर Talk Glimmer.

तेभ्य एव समुत्पन्नं तत्तद्गिरिषु चाभ्रकम् ॥ ११५ ॥
तद्वज्रं वज्रपातत्वादभ्रमभ्ररवोद्भवात् ।
गगनात्स्खलितं यस्माद्गगनं च ततो मतम् ॥ ११६ ॥
विप्रक्षत्रियविट्शूद्रभेदात्तस्माच्चतुर्विधः ।
क्रमेणैव सितं रक्तं पीतं कृष्णं च वर्णतः ॥ ११७ ॥
प्रशस्यते सितं तारे रक्तं तत्तु रसायने ।
पीतं हेमनि कृष्णं तु गदेषु द्रुतयेऽपि च ॥ ११८ ॥
पिनाकं दर्दुरं नागं वज्रं चेति चतुर्विधम् ।
मुञ्चत्यग्नौ विनिक्षिप्तं पिनाकं दलसंचयम् ॥ ११९ ॥
अज्ञानाद्भक्षणं तस्य महाकुष्ठप्रदायकम् ।
दर्दुरं त्वग्निनिक्षिप्तं कुरुते दर्दुरध्वानिम् ॥ १२० ॥
गोलकान् बहुशः कृत्वा स स्यान्मृत्युप्रदायकः ।
नागं तु नागवद्वह्नौ फूत्कारं परिमुंचति ॥ १२१ ॥
तद्भक्षितमवश्यं तु विदधाति भगंदरम् ।
वज्रन्तु वज्रवत्तिष्ठेत्तन्नाग्नौ विकृतिं व्रजेत् ॥ १२२ ॥
सर्वाभ्रेषु वरं वज्रं व्याधिवार्द्धक्यमृत्युहृत् ।
अभ्रमुत्तरशैलोत्थं बहुसत्त्वं गुणाधिकम् ॥ १२३ ॥
दक्षिणाद्रिभवं स्वल्पसत्त्वमल्पगुणप्रदम् ॥ १२४ ॥
अभ्रं कषायं मधुरं सुशीतमायुःकरं धातुविवर्द्धनं च ।
हन्यात्त्रिदोषं व्रणमेहकुष्ठं प्लीहोदरं ग्रंथिविषक्रिमींश्च १२५
रोगान् हंति दृढयति वपुर्वीर्य्यवृद्धिं विधत्ते
तारुण्याढ्यं रमयति शतं योषितां नित्यमेव ।
दीर्घायुष्कांजनयति सुतान् विक्रमैः सिंहतुल्या-
न्मृत्योर्भीतिं हरति सततं सेव्यमानं मृताभ्रम् ॥ १२६ ॥
पीडां विधत्ते विविधां नराणां कुष्ठं क्षयं पांडुगदं च शोथम् ।
हृत्पार्श्वपीडां च करोत्यशुद्धमभ्रं त्वसिद्धं गुरुतापदं स्यात् ॥

हरितालम्[1] ।

हरितालं तु तालं स्यादालं तालकमित्यपि ।
हरितालं द्विधा प्रोक्तं पत्राख्यं पिंडसंज्ञकम् ॥ १२८ ॥
तयोराद्यं गुणैः श्रेष्ठं ततो हीनगुणं परम् ॥
स्वर्णवर्णं गुरु स्निग्धं सपत्रं चाभ्रपत्रवत् ॥ १२९ ॥
पत्राख्यं तालकं विद्याद्गुणाढ्यं तद्रसायनम् ।
निष्पत्रं पिंडसदृशं स्वल्पसत्त्वं तथा गुरु ॥ १३० ॥
स्त्रीपुष्पहारकं स्वल्पगुणं तत्पिण्डतालकम् ।
हरितालं कटु स्निग्धं कषायोष्णं हरेद्विषम् ॥
कंडुकुष्ठास्यरोगास्रकफपित्तकचव्रणान् ॥ १३१ ॥
हरति च हरितालं चारुतां देहजातां
सृजति च बहुतापानंगसंकोचपीडाम् ।
वितरति कफवातौ कुष्ठरोगं विदध्या-
दिदमशितमशुद्धं मारितं चाप्यसम्यक् ॥ १३२ ॥

मनःशिला[2] ।

मनःशिला मनोगुप्ता मनोह्वा नागजिह्विका ।
नैपाली कुनटी गोला शिला दिव्यौषधिः स्मृता ॥ १३३ ॥

---

१ दे० भा० हरताल । वं० भा० हरिताल । हतेल ॥ शोधितं हरितालं तु कांतिवीर्य्यविवर्द्धनम् । कुष्ठादिकफरोगघ्नं जरा मृत्युहरं परम् ॥ १ ॥ अशीतिवातान्कफपित्तरोगान् कुष्ठानि मेहांश्च गुदामयांश्च । निहंति गुंजार्द्धमितं तु तालं षड्वल्लखंडेन समं प्रयुक्तम् ॥ २ ॥ पिंजरं पित्तलं तालं मनोज्ञं हरितालकम् । छत्रांगकांचनरसं गोदंतं नटमंडनम् ॥ ३ ॥ तालकस्यैव भेदोस्ति मनागेव तदंतरम् । तालकं चातिपीतं स्याद्भवेद्रक्ता मनःशिला ॥ ४ ॥ हरितालोऽष्टधा प्रोक्तो गोदंतः सर्वतोधिकः । तदभावे तु पत्राख्यो वयसः स्थापनः परः ॥ ५ ॥ हरितालं हरेर्वीर्य्यं लक्ष्मीवीर्य्यं मनःशिला । पारदं शिववीर्यं स्याद्गंधकं पार्वतीरजः ॥ ६ ॥ २ दे० भा० मनशिल । मैनशिल । वं० भा० मनछाल ।

मनःशिला गुरुर्वर्ण्या सरोष्णा लेखना कटुः ।
तिक्ता स्निग्धा विषश्वासकासभूतकफास्रनुत् ॥ १३४ ॥
मनःशिला मंदबलं करोति जंतुं ध्रुवं शोधनमंतरेण ।
मलानुबंधं किल मूत्ररोधं सशर्करं कृच्छ्रगदं च कुर्यात् १३५

अंजनं, सौवीरम्[1] ।

अंजनं यामुनं चापि कापोतांजनमित्यपि ।
तत्तु स्रोतोंजनं कृष्णं सौवीरं श्वेतमीरितम् ॥ १३६ ॥
वल्मीकशिखराकारं भिन्नमंजनसन्निभम् ।
घृष्टं तु गैरिकाकारमेतत्स्रोतोंजनं स्मृतम् ॥ १३७ ॥
स्रोतोंजनसमं ज्ञेयं सौवीरं तत्तु पांडुरम् ।
स्रोतोंजनं स्मृतं स्वादु चक्षुष्यं कफपित्तनुत ॥ १३८ ॥
कषायं लेखनं स्निग्धं ग्राहिच्छर्दिविषापहम् ।
सिध्मक्षयास्रहृच्छीतं सेवनीयं सदा बुधैः ॥ १३९ ॥
स्रोतोंजनगुणाः सर्वे सौवीरेऽपि मता बुधैः ।
किंतु द्वयोरंजनयोः श्रेष्ठं स्रोतोंजनं स्मृतम् ॥ १४० ॥

टंकणम्[2] ।

टंकणोऽग्निकरो रूक्षः कफघ्नो वातपित्तकृत् ।

स्फुटिका[3] ।

स्फुटी च स्फुटिका प्रोक्ता श्वेता च शुभ्र रंगदा ॥१४१॥
दृढरंगा रंगदृढा दृढा रंगापि कथ्यते ।
स्फुटिका तु कषायोष्णा वातपित्तकफव्रणान् ॥ १४२ ॥
निहंति श्वित्रवीसर्पान् योनिसंकोचकारिणी ।

---

१ दे० भा० सुरमा, सुफेदसुरमा । वं० भा० श्वेतसुरमा, नीला सुरमा । फा० सुरमा अस्फहानी । इं० सल्फ़रेट आफ आंटीमनी । (Salfurat of antimony) २ दे० भा० सुहागा अयमुपरसत्वात्पुनरुक्तः ३ दे० भा० टकडी । लाल, सफेद । वं० भा० फटकिरी ।

राजावर्तः[1]।

राजावर्तः कटुस्तिक्तः शिशिरः पित्तनाशनः ॥ १४३ ॥
राजावर्तः प्रमेहघ्नश्छर्दिहिक्कानिवारणः।

चुंबकः[2]।

चुंबकः कांतपाषाणोऽयस्कांतो लोहकर्षकः ॥ १४४ ॥
चुंबको लेखनः शीतो मेदोविषगरापहः।

गैरिकम्[3]।

गैरिकं रक्तधातुश्च गौरेयं गिरिजं तथा ॥ १४५ ॥
स्वर्णगैरिकमन्यत्तु ततो रक्ततरं हि तत्।
गैरिकद्वितयं स्निग्धं मधुरं तुवरं हिमम् ॥ १४६ ॥
चक्षुष्यं दाहपित्तास्रकफहिक्काविषापहम्।

खटी[4] गौरखटी।

खटिका कठिनी चापि लेखनी च निगद्यते ॥ १४७ ॥
खटिका दाहजिच्छीता मधुरा विषशोथजित्।
लेपादेते गुणाः प्रोक्ता भक्षिता मृत्तिकासमा ॥ १४८ ॥
खटी गौरखटी द्वे च गुणैस्तुल्ये प्रकीर्तिते।

वालुका[5]।

वालुका सिकता प्रोक्ता शर्करा रेतजापि च ॥ १४९ ॥
वालुका लेखनी शीता व्रणोरःक्षतनाशिनी।

---

१ दे० भा० लाजवर्द। पाषाण। २ दे० भा० चुंवक प्रत्थर। ३ दे० भा० गेरी, स्वर्णगेरी। वं भा० गिरी माटो। फा० गिलेसुर्खमश्री। इ० ओकररेलंम्बरस्टोन। Ocarrailamber stone. ४ दे० भा० खडाकटी, खडी, गौरखडी। बं० भा० खडिमाटी, चाखडी। फा० गिले सुफेद गिले खरिया। इं० पाइप क्ले। Piap clay. ५ दे० भा० रेत, बं० भा० वाली। फा० रेग। इं० सैंड, Sand.

खर्परम्[1] ।

खर्परं तुत्थकं तुत्थादन्यत्तद्रसकं स्मृतम् ॥ १५० ॥
ये गुणास्तुत्थके प्रोक्तास्ते गुणा रसके स्मृताः ॥

कासीसम्[2] ।

कासीसं धातुकासीसं पांशुकासीसमित्यपि ॥ १५१ ॥
तदेव किंचित्पीतं तु पुष्पकासीसमुच्यते ।
कासीसमम्लमुष्णं च तिक्तं च तुवरं तथा ॥ १५२ ॥
वातश्लेष्महरं केश्यं नेत्रकंडूविषप्रणुत् ।
मूत्रकृच्छ्राश्मरीश्वित्रनाशनं परिकीर्तितम् ॥ १५३ ॥

सौराष्ट्री[3] ।

सौराष्ट्री तुवरी काली मृत्तालकसुराष्ट्रजे ।
आढकी चापि सा ख्याता मृत्स्ना च सुरमृत्तिका ॥ १५४
स्फुटिकाया गुणाः सर्वे सौराष्ट्र्या अपि कीर्तिताः ।

कृष्णमृत्तिका ।

कृष्णमृत्क्षतदाहास्रप्रदरश्लेष्मदाहनुत् ॥ १५५ ॥

कपर्दकम्[4] ।

कपर्दको वराटश्च कपर्दी च वराटिका ।
कपर्दिका हिमा नेत्रहिता स्फोटक्षयापहा ॥ १५६ ॥
कर्णस्रावाग्निमांद्यघ्नी पित्तास्रकफनाशिनी ।

---

१ दे० भा० खपरिला । बं० भा० खापर । फा० संगबसरी, इं० ब्लाक जाक Black sok. २ दे० भा० कसीस, पुष्पकसीस बं० भा० धातुकासीस पुष्पकासीस फा० जाकेसुब्ज । इं० सल्फेट औफ आयर्न । Salfet ofll iron° भस्मवन्मृत्तिकाम्लं च कासीसधातुरित्यपि । तदेव किंचित्पीतं तु पुष्पकासीसमुच्यते ॥ ३ दे० भा० सोरटामटी । बं० मा० सौराष्ट्रदेशीय सुगंधिमृत्तिका । ४ दे० भा० कौडी । बं० भा० कडी । इं० कवरीझ Coverijh. सार्द्धनिष्कप्रमाणासौ श्रेष्ठा योगेषु योजयेत् । निष्कप्रमाणा मध्या सा हीना पादोननिष्कका ॥ १ ॥

शंखम्[1] ।

शंखः समुद्रजः कंबुः सुनादः पावनध्वनिः ॥ १५७ ॥
शंखो नेत्र्यो हिमः शीतो लघुः पित्तकफास्रजित् ।

बोलम्[2] ।

बोलं गंधरसं प्राणपिंडगोपरसाः स्मृताः ॥ १५८ ॥
बोलं रक्तहरं शीतं मेध्यं दीपनपाचनम् ।
मधुरं कटुतिक्तं च दाहस्वेदत्रिदोषजित् ॥ १५९ ॥
ज्वरापस्मारकुष्ठघ्नं गर्भाशयविशुद्धिकृत् ।

कंकुष्ठम्[3] ।

तत्रैकं नलकाख्यं स्यात्तदन्यद्रेणुकं स्मृतम् ॥ १६० ॥
हिमवत्पादशिखरे[4] कंकुष्ठमुपजायते ।
तत्रैकं रक्तकालं स्यादन्यद्धेमप्रभं स्मृतम् ॥ १६१ ॥
पीतप्रभं गुरु स्निग्धं श्रेष्ठं कंकुष्ठमादिशेत् ।
श्यामं रक्तं लघु त्यक्तसत्त्वं नेष्टं हरेणुकम् ॥ १६२ ॥
कंकुष्ठं काककुष्ठं च वरांगं रंगदायकम् ।
कंकुष्ठं रेचनं तिक्तं कटुष्णं वर्णकारकम् ॥ १६३ ॥
कृमिशोथोदराध्मानगुल्मानाहकफापहम् ।

रत्ननिरुक्तिः ।

धनार्थिनो जनाः सर्वे रमंतेऽस्मिन्नतीव यत् ॥ १६४ ॥
ततो रत्नमिति प्रोक्तं शब्दशास्त्रविशारदैः ।

रत्ननाम ।

रत्नं क्लीबे मणिः पुंसि स्त्रियामपि निगद्यते ॥ १६५ ॥
तत्तु पाषाणभेदोऽस्ति मुक्तादि च तदुच्यते । अमरः ।
रत्नं मणिर्द्वयोरश्मजातौ मुक्तादिकेऽपि च ॥ १६६ ॥

---

१ दे० भा० शंख । बं० भा० शंख शाक । इं० कौंच Konch. २ दे० भा० हीराबोल । बीजाबोल । बं० भा० मधुरस । इं० मिही । Mihi. ३ दे० भा० मुरदासंग पा० भा० मुरदासंग । ४ हिमवतः प्रत्यंतपर्वतानां शिखरे ।

[1]रत्नं गारुत्मतं पुष्परागो माणिक्यमेव च ।
इंद्रनीलश्च गोमेदं तथा वैदूर्य्यमित्यपि ॥ १६७ ॥
मौक्तिकं विद्रुमश्चेति रत्नान्युक्तानि वै नव ।

विष्णुधर्मोत्तरेऽपि ।

मुक्ताफलं हीरकश्च वैदूर्य्यं पद्मरागकम् ॥ १६८ ॥
पुष्पराजं च गोमेदं नीलं गारुत्मतं तथा ।
प्रवालयुक्तान्येतानि महारत्नानि वै नव ॥ १६९ ॥

[2]हीरकम् ।

हीरकः पुंसि वज्रोऽस्त्री चन्द्रो मणिवरश्च सः ।
स तु श्वेतः स्मृतो विप्रो लोहितः क्षत्रियः स्मृतः॥१७०॥
पीतो वैश्योऽसितः शूद्रः चतुर्वर्णात्मकश्च सः ।
रसायने मतो विप्रः सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥ १७१ ॥
क्षत्रियो व्याधिविध्वंसी जरामृत्युहरः स्मृतः ।
वैश्यो धनप्रदः प्रोक्तस्तथा देहस्य दार्ढ्यकृत् ॥ १७२ ॥
शूद्रो नाशयति व्याधीन् वयःस्तंभं करोति च ।
पुंस्त्रीनपुंसकानीह लक्षणीयानि लक्षणैः ॥ १७३ ॥
सुवृत्ताः फलसंपूर्णास्तेजोयुक्ता बृहत्तराः ।
पुरुषास्ते समाख्याता रेखाबिंदुविवर्जिताः ॥ १७४ ॥
रेखाबिन्दुसमायुक्ताः षडस्रास्ते स्त्रियः स्मृताः ।
त्रिकोणाश्च सुदीर्घास्ते विज्ञेयाश्च नपुंसकाः ॥ १७५ ॥

---

१ दे० भा० रत्नं--वज्रं--हीरा । गारुत्मतं--पन्ना, हरिन्मणि--पद्मरागः--लाल । पुष्परागः--पुखराज । माणिक्यं--चूनी । इंद्रनीलं--नीलम । गोमेदः--पीतरत्न । वैदूर्य--केतुग्रहवल्लभ । रेणुकं नलकाख्यं च पाठांतरम् । २ दे० भा० हीरा ॥ बं० भा० हिरे । फा० इल्माश । इं० डाएमण्ड ॥ Diamond. वज्रं समीरकफपित्तगदांश्च हन्याद्वज्रोपमं च कुरुते वपुरुत्तमश्रि । शोथक्षयभ्रमभगंदरमेहमेदः-पांडूदरश्वयथुहारि च षड्रसाढ्यम् ॥

तेषु स्युः पुरुषा श्रेष्ठाः रसबंधनकारिणः ।
स्त्रियः कुर्वंति कायस्य कांतिं स्त्रीणां सुखप्रदाः ॥ १७६ ॥
नपुंसकास्त्ववीर्य्याः स्युरकामाः सत्त्ववर्जिताः ।
स्त्रियः स्त्रीभ्यः प्रदातव्याः क्लीबं क्लीबे प्रयोजयेत् ॥ १७७ ॥
सर्वेभ्यः सर्वदा देया पुरुषा वीर्य्यवर्द्धनाः ।
अशुद्धं कुरुते वज्रं कुष्ठं पार्श्वव्यथां तथा ॥ १७८ ॥
पांडुतां पंगुरत्वं च तस्मात्संशोध्य मारयेत् ।
आयुः पुष्टिं बलं वीर्य्यं वर्णं सौख्यं करोति च ॥ १७९ ॥
सेवितं सर्वरोगघ्नं मृतं वज्रं न संशयः ।

हरितम्[1] ।

गारुत्मतं मरकतमश्मगर्भो हरिन्मणिः ॥ १८० ॥

माणिक्यम्[2] ।

माणिक्यं पद्मरागः स्यात् शोणरत्नं च लोहितम् ।

पुष्परागः[3] ।

पुष्परागो मंजुमणिः स्याद्वाचस्पतिवल्लभः ॥ १८१ ॥

इंद्रनीलं[4] गोमेदः[5] ।

नीलं तथेंद्रनीलं च गोमेदः पीतरत्नकम् ।

वैदूर्य्यम्[6] ।

वैदूर्य्यं दूरजं रत्नं स्यात्केतुग्रहवल्लभम् ॥ १८२ ॥

मौक्तिकम्[7] ।

मौक्तिकं शौक्तिकं मुक्ता तथा मुक्ताफलं च तत् ।

---

१ दे० भा० पन्ना । वं० भा० पान्ना । फा० जुमुर्रद इं० इमराल्ड । २ दे० भा० लाल । वं० भा० माणिक । इं० रुबी Rocbi. ३ दे० भा० पुखराज । वं० भा० पुष्पराग । इं० टोपाज Toials. ४ दे० भा० नीलम । वं० भा० नीलमणि इं० सेफायर Safiar. ५ दे० भा० गोमेद । वं० भा० औनिक्स । ६ दे० भा० लहसुनिया । वं० भा० वैदूर्य्य । इं० फेटसआई । ७ दे० भा० मोती । वं० भा० मुक्ता । फा० मरवारिद । इं० पर्ल Pearl. विद्रुमं सर्वदोषघ्नं दीपनं रुचिपुष्टिदम् ।

शुक्तिः शंखो गजः क्रोडः फणिर्मत्स्यश्च दर्दुरः ॥ १८३ ॥
वेणुरेते समाख्याताः तज्ज्ञैर्मौक्तिकयोनयः ।
मौक्तिकं शीतलं वृष्यं चक्षुष्यं बलपुष्टिदम् ॥ १८४ ॥

प्रवालः[1] ।

पुंसि क्लीबे प्रवालः स्यात्पुमानेव तु विद्रुमः ।
रत्नानि भक्षितानि स्युर्मधुराणि सराणि च ॥ १८५ ॥
चक्षुष्याणि च शीतानि विषघ्नानि धृतानि च ।
मंगल्यानि मनोज्ञानि ग्रहदोषहराणि च ॥ १८६ ॥

किंरत्नं कस्य ग्रहस्य प्रीतिकरमित्युक्तरं रत्नमालायाम् ।

माणिक्यं तरणेः सुजातममलं मुक्ताफलं शीतगो-
र्माहेयस्य तु विद्रुमो निगदितः सौम्यस्य गारुत्मतम् ।
देवेज्यस्य च पुष्परागमसुराचार्य्यस्य वज्रं शने-
र्नीलं निर्मलमन्ययोर्निगदिते गोमेदवैदूर्यके ॥ १८७ ॥

उपरत्नानि[2] ।

उपरत्नानि काचश्च[3] कर्पूराश्मा[4] कपर्दिका ।
मुक्ताशुक्तिस्[5]तथा शंख इत्यादीनि बहून्यपि ॥ १८८ ॥

—क्षयपांडुज्वरश्वासकासमेदोगदाञ्जयेत् ॥ १ ॥ श्वेतं स्निग्धमतीव वंधुरतरं स्यात्पारसीकोद्भवं रूक्षं कांचनवर्णसंकरयुतं स्याद्वार्वरं मौक्तिकम् ॥ शौणं तूर्मजसंभवं विदुरतिस्निग्धं तथा देशजं चातुर्वर्ण्ययुतं सुलक्षणमिति श्लक्ष्णं कविश्रीकरम् ॥२॥
१ दे० भा० मूंगा, गुलियां । वं० भा० मुंगा।फा० मिरजान्, इं० रेडकोरल् Red coral. २ उपरत्नानि, गौणरत्नानि । ३ दे० भा० कच्च । वं० भा० काच । फा० आवगीना । इं० ग्लास Glass. काचा तु सारका लघ्वी व्रणनेत्रहितावहा । लेखनी शूलहृत्प्रोक्ता वैद्यशास्त्रविशारदैः ॥ १ ॥ ४ दे०भा० रत्नकपूर । कपूरनिआ । ५ दे० भा० मोतीवाली सीपी । वं० भा० शामुक । झितुक । इं०ओईस्टरशेल, भेदजलसीपी । मुक्ताशुक्तिः कटुः स्निग्धा श्वासहृद्रोगनाशिनी । शूलप्रशमनी रुच्या मधुरा दीपनी परा ॥ २ ॥

उपरत्नत्वादिमौ कपर्दशंखौ पुनरुक्तौ ।

गुणा यथैव रत्नानामुपरत्नेषु ते तथा ।
किंतु किंचित्ततो हीना विशेषोयमुदाहृतः ॥ १८९ ॥

विषम् ।

विषं तु गरलं क्ष्वेडस्तस्य भेदाननुदाहरे ।
वत्सनाभः सहारिद्रः शक्तुकश्च प्रदीपनः ॥ १९० ॥
सौराष्ट्रिकः शृंगिकश्च कालकूटस्तथैव च ।
हालाहलो ब्रह्मपुत्रो विषभेदा अमी नव ॥ १९१ ॥

वत्सनाभः[1] ।

सिंधुवारसदृक्पत्रो वत्सनाभ्याकृतिस्तथा ।
यत्पार्श्वे न तरोर्वृद्धिर्वत्सनाभः स भाषितः ॥ १९२ ॥
(हारिद्रः)-हरिद्रातुल्यमूलो यो हारिद्रः स उदाहृतः ।
(शक्तुकः)-यद्ग्रन्थिः शक्तुकेनेव पूर्णमध्यः स शक्तुकः१९३

प्रदीपनः ।

वर्णतो लोहितो यः स्याद्दीप्तिमान् दहनप्रभः ।
महादाहकरः पूर्वैः कथितः स प्रदीपनः ॥ १९४ ॥
(सौराष्ट्रिकः) सुराष्ट्रविषये यः स्यात्स सौराष्ट्रिक उच्यते ।

शृंगिकः[2] ।

यस्मिन् गोशृंगके बद्धे दुग्धं भवति लोहितम् ॥ १९५ ॥
सः शृंगिक इति प्रोक्तो द्रव्यतत्त्वविशारदैः ।

---

१ दे० भा० वचनाग, मीठा तेलिया। बं० भा० काटविष । फा० जहर। इं० एकोनाईट । aconight. २ दे० भा० सिंगियाविष । (शुद्धिः) विषं तु खंडशः कृत्वा वस्त्रखंडेन बंधयेत् । गोमूत्रमध्ये निक्षिप्य स्थापयेदातपे त्र्यहम् ॥ १ ॥ गोमूत्रं च प्रदातव्यं नूतनं प्रत्यहं बुधैः । त्र्यहेऽतीते समुद्धृत्य शोषयेन्मृदुपे षयेत् ॥ २ ॥ शुध्यत्येवं विषं तच्च योग्यं भवति चार्तिजित् । एकाष्टकं भवेद्यावदभ्यस्तं तिलमात्रया ॥ ३ ॥ सर्वरोगहरं नृणां जायते शोधितं विषम् । अतिमात्रं यदा भुक्तं तदाज्यं टंकणं पिबेत् ॥ ४ ॥ विषं सवेगतो नाशमाशु प्राप्नोति निश्चितम् ।

कालकूटः ।

देवासुररणे देवैर्हतस्य पृथुमालिनः ॥ १९६ ॥
दैत्यस्य रुधिराज्जातस्तरुरश्वत्थसन्निभः ।
निर्यासः कालकूटोऽस्य मुनिभिः परिकीर्तितः ॥ १९७ ॥
सोऽहिक्षेत्रे शृंगवेरे कोङ्कणे मलये भवेत ॥ १९८ ॥

हालाहलः ।

गोस्तनाभफलो गुच्छस्तालपत्रच्छदस्तथा ॥ १९९ ॥
तेजसा यस्य दह्यंते समीपस्था द्रुमादयः ।
असौ हालाहलो ज्ञेयः किष्किंधायां हिमालये ॥ २०० ॥
दक्षिणाब्धितटे देशे कोंकणेपि च जायते ।

ब्रह्मपुत्रः ।

वर्णतः कपिलो यः स्यात्तथा भवति सारतः ॥ २०१ ॥
ब्रह्मपुत्रः स विज्ञेयो जायते मलयाचले ।
ब्राह्मणः पांडुरस्तेषु क्षत्रियो लोहितप्रभः ॥ २०२ ॥
वैश्यः पीतोऽसितः शूद्रः विष उक्तश्चतुर्विधः ।
रसायने विषं विप्रं क्षत्रियं देहपुष्टये ॥ २०३ ॥
वैश्यं कुष्ठविनाशाय शूद्रं दद्याद्वधाय हि ।
विषं प्राणहरं प्रोक्तं ²व्यवायि च विकाशि³ च ॥ २०४ ॥
आग्नेयं⁴ वातकफहृद्योगवाहि⁵ मदावहम्⁶ ।
तदेव युक्तियुक्तं तु प्राणदायि रसायनम् ॥ २०५ ॥
योगवाहि त्रिदोषघ्नं बृंहणं वीर्यवर्द्धनम् ।

---

१ दे० मा० सिमलखार । संखिया । फा० मिर्गवमूश । इं० ओफेसंड ओफ आर्सेनिक (ocasiad of arsenik) २ सकलकायव्यापनपूर्वकं पाकगमनशीलम् । ३ विकाशि ओजःशोपणपूर्वकं संधिबंधनशिथिलीकरणम् । ४ आग्नेयं, अधिकाग्न्यंशम् । ५ योगवाहि । संगिगुणग्राहकम् । ६ मदावहं तमोगुणाधिक्येन बुद्धिविध्वंसकम् ॥

ये दुर्गुणा विषेऽशुद्धे ते स्युर्हीना विशोधनात् ॥ २०६ ॥
तस्माद्विषं प्रयोगेषु शोधयित्वा प्रयोजयेत् ।

उपविषाणि[1] ।

अर्कक्षीरं स्नुहीक्षीरं लांगलीकरवीरकौ ॥ २०७ ॥
गुंजाहिफेनो धत्तूरः सप्तोपविषजातयः ॥ २०८ ॥

एषां गुणास्तत्रतत्र द्रष्टव्याः ॥

इति धातुवर्गः ।

धान्यवर्गः ।

शालिधान्यं व्रीहिधान्यं शूकधान्यं तृतीयकम् ।
शिंबीधान्यं क्षुद्रधान्यमित्युक्तं धान्यपंचकम् ॥ १ ॥
शालयो रक्तशाल्याद्या व्रीहयः षष्टिकादयः ।
यवादिकं शूकधान्यं मुद्गाद्यं शिंबिधान्यकम् ॥ २ ॥
कंग्वादिकं क्षुद्रधान्यं तृणधान्यं च तत्स्मृतम् ।
कंडनेन विना शुक्ला हैमंताः शालयः स्मृताः ॥ ३ ॥

शालिः[1] ।

रक्तशालिः सकलमः पांडुकः शकुनाहृतः ।
सुगंधकः कर्दमको महाशालिश्च दूषकः ॥ ४ ॥
पुष्पांडकः पुंडरीकस्तथा महिषमस्तकः ।
दीर्घशूकः कांचनको हायनो लोध्रपुष्पकः ॥ ५ ॥

---

१ उपविषाणि गौणविषाणि । दोलायंत्रेण पयसि स्थापयित्वा पचेद्दिनम् । एतेनैव विशुध्यंति सर्वाण्युपविषाणि च ॥ १ ॥ चिञ्चापत्ररसे कर्षं वस्त्रपूते पलद्वयम् । स्नुहीक्षीरं रौद्रयंत्रे भावयेद्यत्नतः सुधीः ॥ २ ॥ द्रवे शुष्के समुत्तार्य्य सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ शेषाणामुपविषाणां शुद्धिस्तत्र तत्र द्रष्टव्या । १ दे० भा० चावल । बं० भा० शालिधान्य । फा० विरज । ई० Rice,

इत्याद्याः शालयस्संति बहवो बहुदेशजाः ।
ग्रंथविस्तारभीतिस्ते समस्ता नात्र भाषिताः ॥ ६ ॥
शालयो मधुराः स्निग्धा बल्या बद्धाल्पवर्चसः ।
कषाया लघवो रुच्याः स्वर्य्या वृष्याश्च बृंहणाः ॥ ७ ॥
अल्पानिलकफाः शीताः पित्तघ्ना मूत्रलास्तथा ।
शालयो दग्धमृज्जाताः कषाया लघुपाकिनः ॥ ८ ॥
सृष्टमूत्रपुरीषाश्च रूक्षाः श्लेष्मापकर्षणाः ।
[1]कैदारा वातपित्तघ्ना गुरवः कफशुक्रलाः ॥ ९ ॥
कषाया अल्पवर्चस्का मेध्याश्चैव बलावहाः ।
[2]स्थलजाः स्वादवः पित्तकफघ्ना वातवह्निदाः ॥ १० ॥
किंचित्तिक्ताः कषायाश्च विपाके कटुका अपि ।
वापिता मधुरा वृष्या बल्याः पित्तप्रणाशनाः ॥ ११ ॥
श्लेष्मलाश्चाल्पवर्चस्काः कषाया गुरवो हिमाः ।
वापितेभ्यो गुणैः किंचिद्धीनाः प्रोक्ता अवापिताः ॥१२॥
रोपितास्तु नवा वृष्याः पुराणा लघवः स्मृताः ।
तेभ्यस्तु रोपिता भूयः शीघ्रपाका गुणाधिकाः ॥ १३ ॥
छिन्नरूढा हिमा रूक्षा बल्याः पित्तकफापहाः ।
बद्धविट्काः कषायाश्च लघवश्चाल्पतिक्तकाः ॥ १४ ॥

[3]रक्तशालिः ।

रक्तशालिर्वरस्तेषु बल्यो वर्ण्योऽस्त्रदोषजित् ।
चक्षुष्यो मूत्रलः स्वर्य्यः शुक्रलस्तृड्ज्वरापहः ॥ १५ ॥
विषव्रणश्वासकासदाहनुद्वह्निपुष्टिदः ।
तस्मादल्पांतरगुणाः शालयो महदादयः ॥ १६ ॥

व्रीहिधान्यम् ।

वार्षिकाः कंडिताः शुक्ला व्रीहयश्चिरपाकिनः ।

---

१ कृष्टक्षेत्रजाः । २ अकृष्टभूमिजाः स्वयंजाताः । ३ दे० भा० रतुआ मुंजी झोणा । मगध भाषा दाऊदखानी ।

कृष्णव्रीहिः पाटलश्च कुक्कुटांडक इत्यपि ॥ १७ ॥
शालामुखी जतुमुख इत्याद्या व्रीहयः स्मृताः ।
कुक्कुटांडाकृतिर्व्रीहिः कुक्कुटांडक उच्यते ॥ १८ ॥
कृष्णव्रीहिः स विज्ञेयो यः कृष्णतुषतंडुलः ।
पाटलः पाटलापुष्पवर्णको व्रीहिरुच्यते ॥ १९ ॥
शालामुखः कृष्णशूकः कृष्णतंडुल उच्यते ।
लाक्षावर्णं मुखं यस्य ज्ञेयो जतुमुखस्तु सः ॥ २० ॥
व्रीहयः कथिताः पाके मधुरा वीर्य्यतो हिताः ।
अल्पाभिष्यंदिनो बद्धवर्चस्काः षष्टिकैः समाः ॥ २१ ॥
कृष्णव्रीहिर्वरस्तेषां तस्मादल्पगुणाः परे ।

षष्टिकम् [1] ।

गर्भस्था एव ये पाकं यांति ते षाष्टिका मताः ॥ २२ ॥
षष्टिकः [2] शतपुष्पश्च प्रमोदकमुकुन्दकौ ।
महाषाष्टिक इत्याद्याः षष्टिकाः समुदाहृताः ॥ २३ ॥
एतेऽपि व्रीहयः प्रोक्ता व्रीहिलक्षणदर्शनात् ।
षष्टिका मधुराः शीता लघवो बद्धवर्चसः ॥ २४ ॥
वातपित्तप्रशमनाः शालिभिः सदृशा गुणैः ।
षष्टिका प्रवरातेषां लघ्वी स्निग्धा त्रिदोषजित् ॥ २५ ॥
स्वाद्वी मृद्वी ग्राहणी च बलदा ज्वरहारिणी ।
रक्तशालिगुणैस्तुल्यास्ततः स्वल्पगुणाः परे ॥ २६ ॥

यवः [3] ।

अनुयवो निःशूकः स्यात्कृष्णारुणवर्णोयवः ।
निःशूकोऽपि यवः प्रोक्तो धवलाकृतिको महान् ॥ २७ ॥

---

१ दे० भा० धांई चावल । सठी चावल । २ यो व्रीहिः षष्टिरात्रेण पच्यते स तु षष्टिकः । स्निग्धो ग्राही गुरुः स्वादुस्त्रिदोषघ्नः स्थिरो हिमः ॥ षष्टिको व्रीहिषु श्रेष्ठो गौरश्चासितगौरतः । ३ दे० भा० जौं । निशूक--मुंडे । बं० भा० यव तोक्म--हरित शूक । फा० जव इं० बिटरवार्लि, पेरलवार्लि ।

यवस्तु शितशूकः स्यान्निःशूकोऽनुयवः स्मृतः ।
तोक्मस्तद्वत्सहारितस्ततः स्वल्पश्च कीर्तितः ॥ २८ ॥
यवः कषायो मधुरः शीतलो लेखनो मृदुः ।
व्रणेषु तिलवत्पथ्यो रूक्षो मेधाग्निवर्द्धनः ॥ २९ ॥
कटुपाकोऽनभिष्यंदी स्वर्य्यो बलकरो गुरुः ।
बहुवातमलो वर्णस्थैर्य्यकारी च पिच्छिलः ॥ ३० ॥
कंठत्वगामयश्लेष्मपित्तमेदःप्रणाशनः ।
पीनसश्वासकासोरुस्तंभलोहिततृट्प्रणुत् ॥ ३१ ॥
अस्मादनुयवो न्यूनस्तोक्मो न्यूनतरस्ततः ।

गोधूमः-।

गोधूमः सुमनोऽपि स्यात्त्रिविधः स च कीर्तितः ॥ ३२
महागोधूम इत्याख्यः पश्चाद्देशात्समागतः ।
मधुली तु ततः किंचिदल्पा सा मध्यदेशजा ॥ ३३ ॥
निःशूको दीर्घगोधूमः क्वचिन्नंदीमुखाभिधः ।
गोधूमो मधुरः शीतो वातपित्तहरो गुरुः ॥ ३४ ॥
कफशुक्रप्रदो बल्यः स्निग्धः संधानकृत्सरः ।
जीवनो बृंहणो वर्ण्यो व्रण्यो रुच्यः स्थिरत्वकृत् ॥ ३५ ॥
कफप्रदो नवीनो न तु पुराणः । पुराणा यवगोधूमक्षौद्रजांगल-
शूल्यभुगिति वाग्भटेन वसंते गृहीतत्वात् ।
मधूली शीतला स्निग्धा पित्तघ्नी मधुरा लघुः ॥ ३६ ॥
शुक्रला बृंहिणी पथ्या तद्वन्नंदीमुखः स्मृतः ।
शमीजाः शिंबिजाः शिंबिभवाः सूपाश्च वैदलाः ॥ ३७ ॥
वैदला मधुरा रूक्षाः कषायाः कटुपाकिनः ।
वातलाः कफपित्तघ्ना बद्धमूत्रमला हिमाः ॥ ३८ ॥
ऋते मुद्गमसूराभ्यामन्ये त्वाध्मानकारिणः ।

१—२ महागोधूमः वातलगोधूमः दे० भा० वडानक इति लोके ।

मुद्गम्[1] ।

मुद्गो रूक्षो लघुर्ग्राही कफपित्तहरो हिमः ॥ ३९ ॥
स्वादुरल्पानिलो नेत्र्यो ज्वरघ्नो वनजस्तथा ।
मुद्गो बहुविधः श्यामो हरितः पीतकस्तथा ॥ ४० ॥
श्वेतो रक्तश्च तेषां तु पूर्वः पूर्वो लघुः स्मृतः ।
सुश्रुतेन पुनः प्रोक्तो हरितः प्रवरो गुणैः ॥ ४१ ॥
चरकादिभिरप्युक्तः एष ह्येव गुणाधिकः ।

माषः[2] ।

माषो गुरुः स्वादुपाकः स्निग्धो रुच्योनिलापहः ॥ ४२ ॥
स्रंसनस्तर्पणो बल्यः शुक्लो बृंहणः परः ।
भिन्नमूत्रमलः स्तन्यो मेदःपित्तकफप्रदः ॥ ४३ ॥
गुदकीलार्दितश्वासपक्तिशूलानि नाशयेत् ।
कफपित्तकरो माषः कफपित्तकरं दधि ॥ ४४ ॥
कफपित्तकरा मत्स्या वृंताकं कफपित्तकृत् ।

राजमाषः[3] ।

राजमाषो महामाषः चपलश्च बलः स्मृतः ॥ ४५ ॥
राजमाषो गुरुः स्वादुस्तुवरस्तर्पणः सरः ।
रूक्षो वातकरो रुच्यः स्तन्यो भूरिमलप्रदः ॥ ४६ ॥
श्वेतो रक्तस्तथा कृष्णस्त्रिविधः स प्रकीर्तितः ।
यो महांस्तेषु भवति स एवोक्तो गुणाधिकः ॥ ४७ ॥

---

१ दे० भा० मुंगी सब्ज । मुंगी काली । बं० भा० मुंग । फा० बुनुमाष । इं० ग्रीन ग्रेन । Green Grpin. हरित पश्चमें, श्वेत, पुनैनि आग्रामादौ रक्त पीत--पुरमंडल प्रांतप्रदेशें । श्याम उडदी । २ दे० भा० मांह । बं० भा० माषकलाय । फा० माष । इं० किडनीबीन kidni been माषस्तु कुरुविंदः स्याद्धान्यवीरो वृषांकुरः । मांसलश्च बलाट्यश्च पित्र्यश्च पितृभोजनः ॥ ३ दे०भा०रवांह चोला । बं०भा०बोरा।फा०लोमिया । इं० चाईनिझडोलिकोस् Chinigh dolikas.

निष्पावः[1] ।

निष्पावो राजशिंबी स्याद्वल्लकः श्वेतशिंबकः ।
निष्पावो मधुरो रूक्षो विपाकेऽम्लो गुरुः सरः ॥ ४८ ॥
कषायः स्तन्यपित्तास्रमूत्रवातविबंधकृत् ।
विदाह्युष्णो विषश्लेष्मशोथहृच्छुक्रनाशनः ॥ ४९ ॥

मकुष्ठम्[2] ।

मकुष्ठो वनमुद्गः स्यान्मुकुष्ठकमँपुष्टकौ ।
मकुष्ठो वातलो ग्राही कफपित्तहरो लघुः ॥ ५० ॥
वांतिजिन्मधुरः पाके कृमिकृज्ज्वरनाशनः ।

मसूरः[3] ।

मांगल्यको मसूरः स्यान्मांगल्या च मसूरिका ॥ ५१ ॥
मसूरो मधुरः पाके संग्राही शीतलो लघुः ।
कफपित्तास्रजिद्रूक्षो वातलो ज्वरनाशनः ॥ ५२ ॥

आढकी[4] । -

आढकी तुवरी चापि सा प्रोक्ताशनपुष्पिका ।
आढकी तुवरा रूक्षा मधुरा शीतला लघुः ॥ ५३ ॥
ग्राहणी वातजननी वर्ण्या पित्तकफास्रजित् ।

चणकः[5] ।

चणको हरिमंथः स्यात्सकलप्रिय इत्यपि ॥ ५४ ॥

---

१ दे० भा०वडे मटर । राजशिंबीबीज । वं० भा० भेटराखु । २ दे० भा० मोठ । वं० भा० वनमूङ्ग । फा० मापहिंदी । ई० एकलिनोडे ड किडनीबिन । ३ दे० भा० मसर । वं० भा० मसूरिकलाय । फा० नोसुर्ख । ई० लेंटल Lantil तत्पर्णशाकं तुवरं लघुतिक्तं च कीर्तितम् । ४ दे० भा० हरहर अड अड श्वेत रक्त कृष्ण । वं० भा० आड़रि फा० ाखुल्द । ई० पीजीअनपी Pigianpi. ५ दे० भा० छोले श्वेत कृष्ण । फा० नूद । ई०--ग्राम Gram पत्रशाक । रुच्यं चणं कषायं स्याद्दुर्जरं कफवात त् । अम्लं विष्टंभजनकं पित्तनुद्दंतशोथहृत् ॥

चणकः शीतलो रूक्षः पित्तरक्तकफापहः।
लघुः कषायो विष्टंभी वातलो ज्वरनाशनः॥ ५५॥
स चांगारेण संभृष्टस्तैलभृष्टश्च तद्गुणः।
आर्द्रभृष्टो बलकरो रोचनश्च प्रकीर्तितः॥ ५६॥
शुष्कभृष्टोऽतिरूक्षः स्याद्वातपित्तप्रकोपनः।
स्विन्नः पित्तकफं हन्यात्सूपः क्षोभकरो मतः॥ ५७॥
आर्द्रोऽतिकोमलो रुच्यः पित्तशुक्रहरो हितः।
कषायो वातलो ग्राही कफपित्तहरो लघुः॥ ५८॥

कलायः[1]।

कलायो वर्तुलः प्रोक्तः सतीनश्च हरेणुकः।
कलायो मधुरः स्वादुः पाके रूक्षश्च शीतलः॥ ५९॥

त्रिपुटः[2]।

त्रिपुटः कंटकोऽपि स्यात्कथ्यंते तद्गुणा अमी।
त्रिपुटो मधुरस्तिक्तस्तुवरो रूक्षणो भृशम्॥ ६०॥
कफपित्तहरो रुच्यो ग्राहको शीतलस्तथा।
किंतु खंजत्वपुंगत्वकारी वातातिकोपनः॥ ६१॥

कुलत्थः[3]।

कुलत्थिका कुलत्थश्च कथ्यंते तद्गुणा अथ।
कुलत्थः कटुकः पाके कषायः पित्तरक्तकृत्॥ ६२॥
लघुर्विदाही वीर्योष्णः श्वासकासकफानिलान्।
हंति हिक्काश्मरीशुक्रदाहानाहान्सपीनसान्॥ ६३॥
स्वेदसंग्राहको मेदोज्वरक्रिमिहरः परः।

---

१ दे० भा० मटरछोटा। बं० भा० वाटुला मटर। इं० फील्डपी fielb. pea २ दे० भा० दडौ। बं० भा० खेरसारिकलाय। फा० मांसंग जलठान। इं० चिकिलिंगवेच Chikilingwich. ३ दे० भा० कुलथी। बं० भा० कुलथीकलाय। फा० कल्बित मुंखहिंदी। इं० दुफ्लावर्डडोलीकोस।

तिलः[1] ।

तिलः कृष्णः सितो रक्तः स वन्योऽल्पतिलः स्मृतः॥६४॥
तिलो रसे कटुस्तिक्तो मधुरस्तुवरो गुरुः ।
विपाके कटुकः स्वादुः स्निग्धोष्णः कफपित्तनुत् ॥ ६५ ॥
बल्यः केश्यो हिमस्पर्शस्त्वच्यः स्तन्यो व्रणे हितः ।
दंत्योऽल्पमूत्रकृद्ग्राही वातघ्नोऽग्निमतिप्रदः ॥ ६६ ॥
कृष्णः श्रेष्ठतमस्तेषु शुक्लो वै मध्यमः स्मृतः ।
अन्यो हीनतरः प्रोक्तस्तज्ज्ञै रक्तादिकस्तिलः ॥ ६७ ॥

अतसी[2] ।

अतसी नीलपुष्पी च पार्वती स्यादुमा क्षुमा ।
अतसी मधुरा तिक्ता स्निग्धा पाके कटुर्गुरुः ॥ ६८ ॥
अतसी शुक्रवातघ्नी कफपित्तविनाशिनी ।

तुवरी[3] ।

तुवरी ग्राहिणी प्रोक्ता लघ्वी कफविषास्रजित् ॥ ६९ ॥
तीक्ष्णोष्णा वह्निदा कंडूकुष्ठकोष्ठक्रिमिप्रणुत् ।

गौरसर्षपः[4] ।

सर्षपः कटुकः स्नेहस्तंतुभश्च कदम्बकः ॥ ७० ॥
गौरस्तु सर्षपः प्राज्ञैः सिद्धार्थ इति कथ्यते ।
सर्षपस्तु रसे पाके कटुस्निग्धः सतिक्तकः ॥ ७१ ॥
तीक्ष्णोष्णः कफवातघ्नो रक्तपित्ताग्निवर्द्धनः ।

---

१ दे० भा० तिल तिली । वं० भा० तिलगाच्छ । फा० कुंजद । इं० सिसीमनीजरसीडस् Sisimanigar seeds. तिलस्तु होमधान्यं स्यात्पवित्रः पितृतर्पणः । पापघ्नं पूतधान्यं च जटिलस्तु वनोद्भवः ॥ १ ॥ २ दे० भा० अलसी । वं० भा० मसिनी तिसी । फा० तुखमे कतात । इं० कामन फ्लेक्सीड । common flacx seed. ३ दे० भा० तारामीरा, तरावा । ४ दे० भा० सरों, रक्तसरों पीली सरों । वं० भा० सरिषा श्वेत सर्षे । फा० सर्षफ । इं० सिनापिस आल्वा । sinapisalwa

रक्षोहरो जयेत्कंडूकुष्ठकोष्ठक्रिमिग्रहान् ॥ ७२ ॥
यथा रक्तस्तथा गौरः किंतु गौरो वरो मतः ।

राजिका[1] ।

राजी तु राजिका तीक्ष्णगंधा क्षुज्जनकासुरी ॥ ७३ ॥
क्षवः क्षुधाभिजनकः कृष्णिका कृष्णसर्षपः ।
राजिका कफपित्तघ्नी तीक्ष्णोष्णा रक्तपित्तकृत् ॥ ७४ ॥
किंचिद्रूक्षाग्निदा कंडूकुष्ठकोष्ठक्रिमीन् हरेत् ।
अतितीक्ष्णा विशेषेण तद्वत्कृष्णापि राजिका ॥ ७५ ॥
सरा हिमा गुरुर्ग्राही तत्पुष्पं प्रदराम्रजित् ।

क्षुद्रधान्यम् ।

क्षुद्रधान्यं कुधान्यं च तृणधान्यमिति स्मृतम् ॥ ७६ ॥
क्षुद्रधान्यमनुष्णं स्यात्कषायं लघुलेखनम् ।
मधुरं कटुकं पाके रूक्षं च क्लेदशोषकम् ॥ ७७ ॥
वातकृद्बद्धविट्कं च पित्तरक्तकफापहम् ।

कंगुः[2] ।

स्त्रियां कंगुप्रियंगू द्वे कृष्णा रक्ता सिता तथा ॥ ७८ ॥
पीता चतुर्विधा कंगुस्तासां पीता वरा स्मृता ।
कंगुस्तु भग्नसंधानवातकृद्बृंहणी गुरुः ॥ ७९ ॥
रूक्षा श्लेष्महराऽतीव वाजिनां गुणकृद् भृशम् ।

चीनकः[3] ।

चीनकः कंगुभेदोस्ति स ज्ञेयः कंगुवद् गुणैः ॥ ८० ॥

श्यामाकः[4] ।

श्यामाकः शोषणो रूक्षो वातलः कफपित्तहृत ।

---

१ दे० भा० राई । बं० भा० राई सर्षे। इं० मसटर्डसीडस् । mustard seeds.
२ दे० भा० कंगनी । बं० भा० कांनिधान । फा० गल । ३ दे० भा० चीना । बं० भा० चिने । फा० उरजान । इं० मीलेट mitcat चीनकः ाककंगुश्च स श्लक्ष्गः श्लक्ष्णकः स्मृतः । ४ दे० भा० सुवांक । फा० श्यामाख । बं० भा० शामाधान ।

कोद्रवः[1] ।

कोद्रवः कोरदूषः स्यादुद्दालो वनकोद्रवः ॥ ८१ ॥
कोद्रवो वातलो ग्राही हिमः पित्तकफापहः ।
उद्दालस्तु भवेदुष्णो ग्राही वातकरो भृशम् ॥ ८२ ॥

शरवीजम् ।

चारुकः शरवीजं स्यात्कथ्यंते तद्गुणा अथ ।
चारुको मधुरो रूक्षो रक्तपित्तकफापहः ॥ ८३ ॥
शीतो लघुरवृष्यश्च कषायो वातकोपनः ।

वंशवीजम् ।

यवा वंशभवा रूक्षाः कषायाः कटुपाकिनः ॥ ८४ ॥
बद्धमूत्राः कफघ्नाश्च वातपित्तकराः सराः ।

कुसुंभवीजम्[2] ।

कुसुंभवीजं वरटा सैव प्रोक्ता वराटिका ॥ ८५ ॥
वरटा मधुरा स्निग्धा रक्तपित्तकफापहा ।
कषाया शीतला गुर्वी स्यादवृष्यानिलापहा ॥ ८६ ॥

गवेधुः[3] ।

गवेधुका तु विद्वद्भिर्गवेधुः कथिता स्त्रियाम् ।
गवेधुः कटुका स्वाद्वी कार्श्यकृत्कफनाशिनी ॥ ८७ ॥

नीवारः[4] ।

प्रसाधिका तु नीवारस्तृणान्नमिति च स्मृतम् ।
नीवारः शीतलो ग्राही पित्तघ्नः कफवातकृत् ॥ ८८ ॥

---

१ दे॰भा॰कोदों । वं॰भा॰कोदों धान्यम् । इं॰पकचर्डपासपेलें । श्यामाकः श्यामकः श्यामस्त्रिवीजः स्यादविप्रियः । सुकुमारो राजधान्यं तृणवीजोत्तमश्च सः ॥ २ दे॰भा॰कुसुम्भेके वीज । वं॰भा॰कुसुमफल । फा॰तुखमकाशाय । ३ दे॰ भा॰ देवान । गरहेडआ । गड् गड् । २ दे॰ भा॰ तिनी लंभ रक्तकंगु । वं॰ भा॰ उडी धान्य ।

यवनालः।

यवनालो हिमः स्वादुर्लोहितः श्लेष्मपित्तजित्।
अवृष्यस्तुवरो रूक्षः क्लेदकृत्कथितो लघुः॥ ८९॥

शणः।

शणः प्रोक्तो मातुलानी जंतुतंतुर्महाशना।
शणो हिमो लघुर्ग्राही तत्पुष्पं प्रदरास्रजित्॥ ९०॥

नवधान्यादिः।

धान्यं सर्वं नवं स्वादु गुरु श्लेष्मकरं स्मृतम्।
तत्तु वर्षोषितं पथ्यं यतो लघुवरं हितम्॥ ९१॥
वर्षोषितं सर्वधान्यं गौरवं परिमुंचति।
न तु त्यजति वीर्य्यं स्वं क्रमान्मुंचत्यतः परम्॥ ९२॥
एतेषु यवगोधूमतिलमाषा नवा हिताः।
पुराणा विरसा रूक्षा न तथा: गुणकारिणः॥ ९३॥

इति धान्यवर्गः।

शाकवर्गः।

पत्रं पुष्पं फलं नालं कंदं संस्वेदजं तथा।
शाकं षड्विधमुद्दिष्टं गुरु विद्याद्यथोत्तरम्॥ १॥
प्रायः शाकानि सर्वाणि विष्टंभीनि गुरूणि च।
रूक्षाणि बहुवर्चांसि सृष्टविण्मारुतानि च॥ २॥
शाकं भिनत्ति वपुरस्थि निहंति नेत्रं
वर्णं विनाशयति रक्तमथापि शुक्रम्॥
प्रज्ञाक्षयं च कुरुते पलितं च नूनं
हंति स्मृतिं गतिमिति प्रवदंति तज्ज्ञाः॥ ३॥
शाकेषु सर्वेषु वसंति रोगास्ते हेतवो देहविनाशनाय।
तस्माद्बुधः शाकविवर्जनं तु कुर्य्यात्तथाम्लेषु स एव दो

एतानि शाकनिंदकवचनानि सामान्यानि ।

पत्रशाकं वास्तुकद्वयम् ।

वास्तूकं वास्तुकं च स्यात्क्षारपत्रं च शाकराट् ।
तदेव तु बृहत्पत्रं रक्तं स्याद्गौडवास्तुकम् ॥ ५ ॥
प्रायशो यवमध्ये स्याद्यवशाकमतः स्मृतम् ।
वास्तूकद्वितयं स्वादु क्षारं पाके कटूदितम् ॥ ६ ॥
दीपनं पाचनं रुच्यं लघु शुक्रबलप्रदम् ।
सरं प्लीहास्रपित्तार्शःकृमिदोषत्रयापहम् ॥ ७ ॥

पोतकी ।

पोतक्युपोदिका सा तु मालवे मृतवल्लरी ।
पोतकी शीतला स्निग्धा श्लेष्मला वातपित्तनुत् ॥ ८ ॥
अकंठ्या पिच्छिला निद्रा शुक्रदा रक्तपित्तजित् ।
बलदा रुचिकृत्पथ्या बृंहणी तृप्तिकारिणी ॥ ९ ॥

श्वेतरक्तमारिषः ।

मारिषो वाष्पिको मर्षः श्वेतो रक्तश्च स स्मृतः ।
मारिषो मधुरः शीतो विष्टंभी पित्तनुद् गुरुः ॥ १० ॥
वातश्लेष्मकरो रक्तपित्तनुद्विषमाग्निजित् ।
रक्तमर्षोगुरुर्नाति स क्षारो मधुरः सरः ॥ ११ ॥
श्लेष्मलः कटुकः पाके स्वल्पदोष उदीरितः ।

---

१ दे० भा० बाथू । बथुआ । भेद चिल्ली रक्त बथुआ । वं०भा० वेतुया । फा० मुसेलेसा सरमक । इं० ह्वाइट गुजफूट । शाकं सर्वमचक्षुष्यं चक्षुष्यं शाकपंचकम् । जीवंती वास्तुमत्स्याक्षी मेघनादः पुनर्नवा ॥ १ ॥ २ दे०भा० पोईसाग । वं० भा० पोईशाक । इं० रेडमल्बार नाइटझोड । Redmalbar night jhore. ३ दे० भा० सील । मवडा । वं० भा० श्वेतकाटनटेरशाक । रक्त कृष्ण । श्वेत । रक्त कांटानटेरशाक ।

तंडुलीयः[1] ।

तंडुलीयो मेघनादः कांडेरस्तंडुलेरकः ॥ १२ ॥
भंडीरस्तंडुलीबीजो विषघ्नश्चाल्पमारिषः ।
तंडुलीयो लघुः शीतो रूक्षः पित्तकफास्रजित् ॥ १३ ॥
सृष्टमूत्रमलो रुच्यो दीपनो विषहारकः ।
पानीयतंडुलीयो यस्तत्कंचटमुदाहृतम् ॥ १४ ॥
कंचटं तिक्तकं रक्तपित्तानिलहरं लघु ।

पालिंक्या[2] ।

पालिंक्या वास्तुकाकारा छुरिका चीरितच्छदा ॥ १५ ॥
पालिंक्या वातला शीता श्लेष्मला भेदनी गुरुः ।
विष्टंभनी मदश्वासपित्तरक्तकफापहा ॥ १६ ॥

कालशाकम्[3] ।

नाडीकं कालशाकं च श्राद्धशाकं च कालकम् ।
कालशाकं सरं रुच्यं वातकृत्कफशोथहृत् ॥ १७ ॥
बल्यं रुचिकरं मेध्यं रक्तपित्तहरं हिमम् ।

पटुशाकः[4] ।

पटुशाकस्तु नाडीको नाडीशाकश्च स स्मृतः ॥ १८ ॥
नाडीको रक्तपित्तघ्नो विष्टंभी वातकोपनः ।

कलंबी[5] ।

कलंबीशतपर्वा च कथ्यंते तद्गुणा अथ ॥ १९ ॥
कलंबी शुक्रदा प्रोक्ता मधुरा स्तन्यकारिणी ।

दे० भा० १ चोलाई । जलचौलाई । बं० भा० क्षुदेनटे । चारा नटे । गोपालकांचडादाभ । फा० खुपेजमर्ज । इं० हर्मे फ्रोडाईट, रामेरंथ । Hearmifrodight amarunth. तंडुलीयकमूलं स्यादुष्णं श्लेष्मविनाशनम् । रजोरोधकरं रक्तपित्तप्रदरसंहरम् । २ दे० भा० पालक । बं० भा० पालं शाक । फा० इस्पनाखं । इं० स्पाईनेज । sapienais. दे० भा० खाब । नरिवां । नलिका । नरच । ४ दे० भा० पटुशाक । बं० भा० कोंसटार । लालते । ५दे० भा० कर्मशाक, बं० भा० कलमी ।

लोनी (णी) [1]बृहल्लोनी च ।

लोणा लोणी च कथिता बृहल्लोणी तु घोटिका ॥ २० ॥
लोणी रूक्षा स्मृता गुर्वी वातश्लेष्महरी पटुः ।
अर्शोघ्नी दीपनी चाम्ला मन्दाग्निविषनाशिनी ॥ २१ ॥
घोटिकाम्ला सरा चोष्णा वातकृत्कफपित्तहृत् ।
वाग्दोषव्रणगुल्मघ्नी श्वासकासप्रमेहनुत् ॥ २२ ॥
शोथे लोचनरोगे च हिता तज्ज्ञैरुदाहृता ।

[2]चांगेरी ।

चांगेरी चुक्रिका दंतशठांबष्ठाम्ललोणिका ॥ २६ ॥
अश्मंतकस्तु शफरी कुशला चाम्लपत्रिका ।
चांगेरी दीपनी रुच्या रूक्षोष्णा कफवातनुत् ॥ २४ ॥
पित्तलाम्ला ग्रहण्यर्शःकुष्ठातीसारनाशिनी ।

[3]चुक्रा ।

चुक्रिका स्यात्तु पत्राम्ला रोचनी शतवेधनी ॥ २५ ॥
चुक्रा त्वम्लतरा स्वाद्वी वातघ्नी कफपित्तकृत् ।
रुच्या लघुतरा पाके वृंताकेनातिरोचनी ॥ २६ ॥

[4]चिंचुः ।

चिंचुश्चुचूश्चचुकी च दीर्घपत्रा सतिक्तका ।
चुञ्चूः शीता सरा रुच्या स्वाद्वी दोषत्रयापहा ॥ २७ ॥
धातुपुष्टकरी बल्या मेध्या पिच्छिलिका स्मृता ।

---

१ दे० भा० कुलफा, लूनक । बं० भा० बडणुनी, क्षुदेणुनी । फा० खुरफा । इं० पर्सलेन Paraslain. २ दे० भा० खटकल, खट्टीमीठी अविलोना । ३ दे० भा० चूक । बं० भा० चूकापालङ् । फा० तुरशक् बडा तुरेंखु रासानी छोटी । इं० ब्लेड्डडक । bladder dock. ४ दे० भा० चेचुना, लघु बृहत् । बं० भा० चेचको ।

हिलमोचका।

ब्रह्मी शंखदराचारी ब्राह्मी च हिलमोचिका ॥ २८ ॥
शोथं कुष्ठं कफं पित्तं हरते हिलमोचिका।

शितिवारः।

शितिवारः शितिवरः स्वस्तिकः सुनिषण्णकः ॥ २९ ॥
श्रीवीरकः सूचीपत्रः पर्णकः कुक्कुटः शिखी।
चांगेरीसदृशः पत्रैश्चतुर्दल इतीरितः ॥ ३० ॥
शाकी जलान्विते देशे चतुष्पत्रीति चोच्यते।
सुनिषण्णो हिमो ग्राही मोहदोषत्रयापहः ॥ ३१ ॥
अविदाही लघुः स्वादुः कषायो रूक्षदीपनः ॥ ३२ ॥
वृष्यो रुच्यो ज्वरश्वासमेहकुष्ठभ्रमप्रणुत्।

मूलकम्।

पाचनं लघु रुच्योष्णं पत्रं मूलकजं नवम्।
स्नेहसिद्धं त्रिदोषघ्नमसिद्धं कफपित्तकृत् ॥ ३३ ॥

द्रोणपुष्पी।

द्रोणपुष्पीदलं स्वादु रूक्षं गुरु च पित्तकृत्।
भेदनं कामलाशोथमेहज्वरहरं कटु ॥ ३४ ॥

यवानी।

यवानी शाकमाग्नेयं रुच्यं वातकफप्रणुत्।
उष्णं कटु च तिक्तं च पित्तलं लघु शूलहृत् ॥ ३५ ॥

दद्रुघ्नम्।

दद्रुघ्नपत्रं दोषघ्नमम्लं वातकफापहम्।
कंडूकासकृमिश्वासदद्रुकुष्ठप्रणुल्लघु ॥ ३६ ॥

---

१ दे० भा० हुलहुल। बं० भा० हिंचेशोक। २ दे० भा० चौपति। बं० भा० सुषणी शाक। शुशुनी शाक। फा० अंजरा तुखमें अंजरा। इसके बीजको उटंकन बीज कहते हैं ॥

सेहुंडम् ।

सेहुंडस्य दलं तीक्ष्णं दीपनं रेचनं हरेत् ।
आध्मानाष्ठीलिकागुल्मशूलशोथोदराणि च ॥ ३७ ॥

पर्पटम् ।

पर्पटो हंति पित्तास्रज्वरतृष्णाकफभ्रमान् ।
संग्राही शीतलस्तिक्तो दाहनुद्वातलो लघुः ॥ ३८ ॥

गोजिह्वा ।

गोजिह्वा कुष्ठमेहास्रकृच्छ्रज्वरहरी लघुः ।

पटोलम् ।

पटोलपत्रं पित्तघ्नं दीपनं पाचनं लघु ॥ ३९ ॥
स्निग्धं वृष्यं तथोष्णं च ज्वरकासकृमिप्रणुत् ।

गुडूची ।

गुडूचीपत्रमाग्नेयं सर्वज्वरहरं लघु ॥ ४० ॥
कषायं कटु तिक्तं च स्वादु पाके रसायनम् ।
बल्यमुष्णं च संग्राहि हन्याद्दोषत्रयं तृषाम् ॥ ४१ ॥
दाहप्रमेहवातासृक्कामलाकुष्ठपांडुताः ।

कासमर्दम् ।

कासमर्दोऽरिमर्दश्च कासारिः कर्कशस्तथा ॥ ४२ ॥
कासमर्ददलं रुच्यं वृष्यं कासविषास्रनुत् ।
मधुरं कफवातघ्नं पाचनं कंठशोधनम् ॥ ४३ ॥
विशेषतः कासहरं पित्तघ्नं ग्राहकं लघु ।

चणकम् ।

रुच्यं चणकशाकं स्याद्दुर्जरं कफवातकृत् ॥ ४४ ॥
अम्लं विष्टंभजननं पित्तनुदंतशोथहृत् ।

---

१ दे० भा० कासमर्द । कसोंदी । बं० भा० कालका सुंदी । इं० एडण्डपोडेकेरया ।

कलायः ।

कलायशाकं भेदि स्याल्लघु तिक्तं त्रिदोषजित् ॥ ४५ ॥

सार्षपम् ।

कटुकं सार्षपं शाकं बहुमूत्रमलं गुरु ।
अम्लपाकं विदाहि स्यादुष्णं रूक्षं त्रिदोषकृत् ॥ ४६ ॥
सक्षारं लवणं तीक्ष्णं स्वादु शाकेषु निंदितम् ।

पुष्पशाकम् अगस्तिकम् ।

अगस्तिकुसुमं शीतं चातुर्थिकनिवारणम् ॥ ४७ ॥
नक्तांध्यनाशनं तिक्तं कषायं कटुपाकि च ।
पीनसश्लेष्मपित्तघ्नं वातघ्नं मुनिभिर्मतम् ॥ ४८ ॥

कदली ।

कदल्याः कुसुमं स्निग्धं मधुरं तुवरं गुरु ।
वातपित्तहरं शीतं रक्तपित्तक्षयप्रणुत् ॥ ४९ ॥

शिग्रु ।

शिग्रुपुष्पं तु कटुकं तीक्ष्णोष्णं स्नायुशोथकृत् ।
कृमिहृत्कफवातघ्नं विद्रधिप्लीहगुल्मजित् ॥ ५० ॥
मधुशिग्रोस्त्वक्षिहितं रक्तपित्तप्रसादनम् ।

शाल्मली ।

शाल्मली पुष्पशाकं तु घृतसैंधवसाधितम् ॥ ५१ ॥
प्रदरं नाशयत्येव दुःसाध्यं च न संशयः ।
रसे पाके च मधुरं कषायं शीतलं गुरु ॥ ५२ ॥
कफपित्तास्रजिद् ग्राहि वातलं च प्रकीर्तितम् ।

फलशाकं कूष्मांडम्[2] ।

कूष्मांडं स्यात्पुष्पफलं पीतपुष्पं बृहत्फलम् ॥ ५३ ॥

---

१ (वरुणपुष्पं) पुष्पं वरुणसंग्राहि पित्तघ्नं चामवातजित् । कोविदारकर्वेदारशणशाल्मलिपुष्पकं ग्राहिशाकं प्रशस्तं च रक्तपित्ते विशेषतः । २ दे० भा० पेठा, कुह्मडा । बं० भा० कुमडो गाच्छ । फा० भूराकद्दू । इं० पंपकीन । Pumpkeen.

कूष्मांडं बृंहणं वृष्यं गुरु पित्तास्रवातनुत् ।
बालं पित्तापहं शीतं मध्यमं कफकारकम् ॥ ५४ ॥
वृद्धं नातिहिमं स्वादु सक्षारं दीपनं लघु ।
वस्तिशुद्धिकरं चेतोरोगहृत्सर्वदोषजित् ॥ ५५ ॥

कूष्मांडी ।

कूष्मांडी तु भृशं लघ्वी कर्कारुरपि कीर्तिता ।
कर्कारुर्ग्राहिणी शीता रक्तपित्तहरी गुरुः ॥ ५६ ॥
पक्वा तिक्ताग्निजननी सक्षारा कफवातनुत् ।

मिष्टतुम्वी ।

अलाबुः कथिता तुंबी द्विधा दीर्घा च वर्तुला ॥ ५७ ॥
मिष्टतुंबीफलं हृद्यं पित्तश्लेष्मापहं गुरु ।
वृष्यं रुचिकरं प्रोक्तं धातुपुष्टिविवर्द्धनम् ॥ ५८ ॥

कटुतुंबी ।

इक्ष्वाकुः कटुतुंबी स्यात्सा तुंबी च बृहत्फला ।
कटुतुंबी हिमा हृद्या पित्तकासविषापहा ॥ ५९ ॥
तिक्ता कटुर्विपाके च वातपित्तज्वरांतकृत् ।

कर्कटी ।

एर्वारुः कर्कटी प्रोक्ता कथ्यंते तद्गुणा अथ ॥ ६० ॥
कर्कटी शीतला रूक्षा ग्राहिणी मधुरा गुरुः ।
रुच्या पित्तहरा सामा पक्वा तृष्णाग्निपित्तकृत् ॥ ६१ ॥

---

१ दे० भा० काशीफल सीताफल । गोलकद्दू । वं०भा० विलायती कुमडा । फा० वादरंग । इं० दि गोर्ड् ॥ Thegord. २ दे० भा० मीठी तोंवी । वं० भा० लाउद । फा० कुदुरादरोज । इं० ह्वाइट् गुर्ड् ॥ White gord. ३ दे० भा० कडवी तूम्वी । वं० भा० तितलाऊ । फा० कुदुतलख । इं० वोटल्गुर्ड् । Botal gord. ४ दे० भा० तर । ककडी । वं० भा० काकुड । फा० ख्याट जाव, दरंज । इं० ककम्वर । Kakumber

चिचिंडा[1] ।

चिचिंडा श्वेतराजिः स्यात्सुदीर्घा गृहकूलकः ।
चिचिंडो वातपित्तघ्नो बल्यः पथ्यो रुचिप्रदः ॥ ६२ ॥
शोषणोऽतिहितः किंचिद्गुणैर्न्यूनः पटोलतः ।

कारवेल्लम्[2] ।

कारवेल्लं कठिल्लं स्यात्कारवेल्ली ततो लघुः ॥ ६३ ॥
कारवेल्लं हिमं भेदि लघु तिक्तामवातलम् ।
ज्वरपित्तकफास्रघ्नं पांडुमेहकृमीन् हरेत् ॥ ६४ ॥
तद्गुणा कारवेल्ली स्याद्विशेषाद्दीपनी लघुः ।

महाकोशातकी[3] ।

महाकोशातकी ज्योत्स्ना हस्तिघोषा महाफला ॥ ६५ ॥
धामार्गवो घोषकश्च हस्तिपर्णश्च स स्मृतः ।
महाकोशातकी स्निग्धा रक्तपित्तानिलापहा ॥ ६६ ॥

राजकोशातकी[4] ।

धामार्गवः पीतपुष्पो जालनी कृतवेधनः ।
राजकोशातकी चेति तथोक्ता राजिमत्फला ॥ ६७ ॥
राजकोशातकी शीता मधुरा कफवातला ।
पित्तघ्नी दीपनी श्वासज्वरकासकृमिप्रणुत ॥ ६८ ॥

पटोलः[5] ।

पटोलः कूलकस्तिक्तः पांडुकः कर्कशच्छदः ।

---

१ दे० भा० चिचिंडा । बं० भा० चिचिंगा । इं० स्नेक्गार्ड Sunkgord. २ दे० भा० करेला, करेली । बं० भा० वडाकरेला छोटा करेला । फा० करेलाह । इं० हेरीमोर्डिका Harimardika, ३ दे० भा० घीया तोरी । बं० भा० धुंदुल । फा० खियार । ४ दे० भा० कडवी तोरी । मुंगीतोरी । बं० भा० झिंगा । फा० तुरीयेतलख । इं० विटरल्युफा (Witer lieufa) ५ दे० भा० कडवे परवल । बं० भा० पलतालता । फा० मोरहडी ।

राजीफलः पांडुफलो राजेयश्चामृताफलः ॥ ६९ ॥
बीजगर्भः प्रतीकश्च कुष्ठहा कासभंजनः ।
पटोलं पाचनं हृद्यं वृष्यं लघ्वग्निदीपनम् ॥ ७० ॥
स्निग्धोष्णं हंति कासास्रज्वरदोषत्रयकृमीन् ।
पटोलस्य भवेन्मूलं विरेचनकरं सुखात् ॥ ७१ ॥
नालं श्लेष्महरं पत्रं पित्तहारि फलं पुनः ।
दोषत्रयहरं प्रोक्तं तद्वत्तिक्तपटोलकम् ॥ ७२ ॥

विंबी ।

विंबी रक्तफला तुंडी तुंडकेरी च बिंबिका ।
ओष्ठोपमफला प्रोक्ता पीलुपर्णी च कथ्यते ॥ ७३ ॥
विंबीफलं स्वादु शीतं गुरुपित्तास्रवातजित् ।
स्तंभनं लेखनं रुच्यं विबंधाध्मानकारकम् ॥ ७४ ॥

शिंवीद्वयम् ।

शिंबी शिंबिः पुस्तशिंबी तथा पुस्तकशिंबिका ।
शिंबीद्वयं च मधुरं रसे पाके हिमं गुरु ॥ ७५ ॥
बल्यं दाहकरं प्रोक्तं श्लेष्मलं वातपित्तजित् ।
कोलशिंबी कृष्णफला तथा पर्य्यंकपादिका ॥ ७६ ॥
कोलशिंबी समीरघ्नी गुर्व्युष्णा कफपित्तकृत् ।
शुक्राग्निसादकृद्वृष्या रुचिकृद्बद्धविट् गुरुः ॥ ७७ ॥

सौभांजनम् ।

सौभांजनं फलं स्वादु कषायं कफपित्तनुत् ।
शूलकुष्ठक्षयश्वासगुल्महृद्दीपनं परम् ॥ ७८ ॥

वृंताकम् ।

वृंताकं स्त्री तु वार्ताकुः भंटाकी भंटकापि च ।

---

१ दे० भा० कंदूरी । तिक्त, मधुर । वं० भा० तेलाकुच । २ दे० भा० महाशिंबी ॥ सुआरसेम, सेम ॥ वं० भा० शोभगाच्छ । ३ दे० भा० बैंगन, बताऊं । वं० भा० वेगुनगाछ । फा० बादंगान् इं० ब्रिजल् । Brinjal.

ततका स्वादु तीक्ष्णोष्णं कटुपाकमपित्तलम् ॥ ७९ ॥
वरवातवलासघ्नं दीपनं शुक्रलं लघु ।
तद्बालं कफपित्तघ्नं वृद्धं पित्तकरं लघु ॥ ८० ॥
वृंताकं पित्तलं किंचिदंगारपरिपाचितम् ।
कफमेदोनिलामघ्नमत्यर्थं लघु दीपनम् ॥ ८१ ॥
तदेव हि गुरु स्निग्धं सतैललवणान्वितम् ।
अपरं श्वेतवृंताकं कुक्कुटांडसमं भवेत् ॥ ८२ ॥
तदर्शस्सु विशेषेण हितं हीनं च पूर्वतः ।

तिंडिशः[1] ।

तिंडिशो रोमशफलो मुनिनिर्मित इत्यपि ॥ ८३ ॥
तिंडिशो रुचिकृद्भेदी पित्तश्लेष्मापहः स्मृतः ।
सशीतो वातलो रूक्षो मूत्रलश्चाश्मरीहरः ॥ ८४ ॥

पिंडारम्[2] ।

पिंडारं शीतलं बल्यं पित्तघ्नं रुचिकारकम् ।
पाके लघु विशेषेण विषशांतिकरं स्मृतम् ॥ ८५ ॥

कर्कोटकी[3] ।

कर्कोटकी पीतपुष्पा महाजालीति चोच्यते ।
कर्कोटक्याः फलं कुष्ठहृल्लासारुचिनाशनम् ॥ ८६ ॥
श्वासकासज्वरान् हंति कटुपाकं च दीपनम् ।

डोंडिका[4] ।

डोंडिका विषमुष्टिश्च डोंडीत्यपि सुमुष्टिका ॥ ८७ ॥
डोंडिका पुष्टिदा वृष्या रुच्या वह्निप्रदा लघुः ।
वातपित्तकफार्शांसि कृमिगुल्मविषामयान् ॥ ८८ ॥

---

१ टेंडा २ टंडे का भेद। अग्निप्रदा मारुतनाशिनी च शुक्रप्रदा शोणितवर्द्धनी च । हृल्लासकासारुचिनाशिनी च। वार्ताकुरेषा गुणसुप्रयुक्ता ॥ ३ दे०भा०ककौं-डा,खेखसा । बं०भा० काकरोल । ४ दे०भा० जीवंतीभेद । तिक्त जीवंती ॥

कंटकारी ।

कंटकारीफलं तिक्तं कटुकं दीपनं लघु ।
रूक्षोष्णं श्वासकासघ्नं ज्वरानिलकफापहम् ॥ ८९ ॥

नालशाकम् ।

तीक्ष्णोष्णं सार्षपं नालं वातश्लेष्मव्रणापहम् ।
कंडूकृमिहरं दद्रुकुष्ठघ्नं रुचिकारकम् ॥ ९० ॥

मूलकम् ।

भवेन्मूलकनालं तु विष्टंभि कफकारकम् ।
वातपित्तहरं रुच्यं सुशुष्कं तद्गुणाधिकम् ॥ ९१ ॥

कंदशाकम् । सूरणम्[1] ।

सूरणः कंद ओलश्च कंडूलोऽर्शोघ्न इत्यपि ।
सूरणो दीपनो रूक्षः कषायः कंडुकृत्कटुः ॥ ९२ ॥
विष्टंभी विशदो रुच्यः कफार्शःकृंतनो लघुः ।
विशेषादर्शसां पथ्यः प्लीहगुल्मविनाशनः ॥ ९३ ॥
सर्वेषां कंदशाकानां सूरणः श्रेष्ठ उच्यते ।
दद्रूणां रक्तपित्तानां कुष्ठिनां न हितो हि सः ॥ ९४ ॥
संधानयोगं संप्राप्तः सूरणो गुणकृत्परः ।

आलुकम्[2] ।

आरुकं वीरसेनं च वीरं वीरारुकं तथा ॥ ९५ ॥
आलुकं शीतलं सर्वं विष्टंभि मधुरं गुरु ।
सृष्टमूत्रमलं रूक्षं दुर्जरं रक्तपित्तनुत् ॥ ९६ ॥
कफानिलकरं बल्यं वृष्यं स्वल्पाग्निवर्धनम् ।

---

१ दे० भा० जिमीकन्द । वं० भा० ओल, फा० ओल । २ दे० भा० आलू, ...गोटालु, काठिन्ययुक्तं, शंखालु, श्वेततायुक्तं हस्त्यालु, दीर्घतायुक्तं पिंडालु । ...तुंब, सुथनी, मध्वालु, मधुरतायुक्तं, पिंडालु, कचालु । फा० जरसक् लहौरी । ...० स्वीटपोटाटो, Sweet potatoe रक्तालु, रोमान्वित, रतालु रतंडा ।

रक्तालुभेदः[1]

रक्तालुभेदो या दीर्घा तन्वी च ग्रथितालुकी ॥ ९७ ॥
आलुकी त्वलकृत्स्निग्धा गुर्वी हृत्कफनाशिनी ।
विष्टंभकारिणी तैले तालतोऽतिरुचिप्रदा ॥ ९८ ॥

मूलकम्[2] ।

मूलकं द्विविधं प्रोक्तं तत्रैकं लघुमूलकम् ।
शालामर्कटकं विस्रशालेयं मरुसंभवम् ॥ ९९ ॥
चाणक्यमूलकं तीक्ष्णं तथा मूलिकपोतिका ।
नेपालमूलकं चान्यत्तद्भवेद्गजदंतवत् ॥ १०० ॥
लघुमूलं कटूष्णं स्याद्रुच्यं लघु च पाचनम् ।
दोषत्रयहरं स्वर्यं ज्वरश्वासविनाशनम् ॥ १०१ ॥
नासिकाकंठरोगघ्नं नयनामयनाशनम् ।
महत्तदेव रूक्षोष्णं गुरुदोषत्रयप्रदम् ॥ १०२ ॥
स्नेहसिद्धं तदेव स्याद्दोषत्रयविनाशनम् ।

गाजरम्[3] ।

गाजरं गर्जरी प्रोक्ता तथा नारंगवर्णकम् ॥ १०३ ॥
गाजरं मधुरं तीक्ष्णं तिक्तोष्णं दीपनं लघु ।
संग्राहि रक्तपित्तार्शोग्रहणीकफवातजित् ॥ १०४ ॥

कदली ।

शीतलः कदलीकंदो बल्यः केश्योऽम्लपित्तजित् ।
वह्निकृद्दाहहारी च मधुरो रुचिकारकः ॥ १०५ ॥

मानकः ।

मानकः स्यान्महापत्रः कथ्यंते तद्गुणा अथ ।
मानकः शोथहृच्छीतः पित्तरक्तहरो लघुः ॥ १०६ ॥

---

१ दे० भा० अरबी । इं० ग्रेट लीवड् केलेडिअन । Great leaved caladian. २ दे० भा० मूली, बडी मूली । बं० भा० मूली, चणक मूली । फा० तुखम तुख । इं० रेडीश Radeesh. ३ दे० भा० गाजर । बं० भा० गाजर फा० जर्दक । इं० कैरट Carrot.

वाराही[1] ।

वाराही पित्तला बल्या कटुतिक्ता रसायना ।
आयुः शुक्राग्निकृन्मेहकफकुष्ठानिलापहा ॥ १०७ ॥

हस्तिकर्णी ।

गजकर्णी तु तिक्तोष्णा तथा वातकफौ जयेत् ।
शीतज्वरहरी स्वादुः पाके तस्यास्तु कंदकः ॥ १०८ ॥
पांडुशोथकृमिप्लीहगुल्मानाहोदरापहा ।
ग्रहण्यर्शोविकारघ्नो वनसूरणकंदवत् ॥ १०९ ॥

केंबुकम्[2] ।

केंबुकं कटुकं पाके तिक्तं ग्राहि हिमं लघु ।
दीपनं पाचनं हृद्यं कफपित्तज्वरापहम् ॥ ११० ॥
कुष्ठकासप्रमेहास्रनाशनं वातलं कटु ।

कसेरुकम्[3] ।

कसेरु द्विविधं तत्तु महद्राजकसेरुकम् ॥ १११ ॥
मुस्ताकृति लघुः स्याद्या तच्चिचोडमिति स्मृतम् ।
कसेरुकद्वयं शीतं मधुरं तुवरं गुरु ॥ ११२ ॥
पित्तशोणितदाहघ्नं नयनामयनाशनम् ।
ग्राहिशुक्रानिलश्लेष्मरुचिस्तन्यकरं स्मृतम् ॥ ११३ ॥

शालूकम्[4] ।

पद्मादिकंदः शालूकं करहाटश्च कथ्यते ।
मृणालमूलं भिस्साडं लाजलूकं च कथ्यते ॥ ११४ ॥
शालूकं शीतलं वृष्यं पित्तास्रदाहनुद्गुरु ।

---

१ दे० भा० गेठी । बं० भा० चामुल चुब्रिडआलु । प० भा० कित्थी । २ दे० भा० केबेरे । केउआ । बं० भा० केउंगाछ । फा० कलाम । इं० केवेज । ३ दे० भा० कसेरु । बं० भा० केशुर । केवुका केमुकः केवुः सुपत्रा दलमालिनी । केद्रटः स्वल्पविटपः स्वादुकंदश्च पौलिनी ॥ ४ दे० भा० भसीडा । कमलकी डंडी । बं० भा० पद्मेर डांटा ।

दुर्जरं स्वादुपाकं च स्तन्यानिलकफप्रदम् ॥ ११५ ॥
संग्राहि मधुरं रूक्षं भिस्साण्डमपि तद्गुणम् ।

वर्जनीयम् ।

बालं ह्यनार्त्तवं जीर्णं व्याधितं कृमिभक्षितम् ॥ ११६ ॥
कंदं विवर्जयेत्सर्वं यद्वाग्न्यादिविदूषितम् ।
अतिजीर्णमकालोत्थं रूक्षसिद्धमदेशजम् ॥ ११७ ॥
कर्कशं कोमलं चातिशीतं व्यालादिदूषितम् ।
संशुष्कं सकलं शाकं नाश्नीयान्मूलकं विना ॥ ११८ ॥

संस्वेदजम् ।

उक्तं संस्वेदजं शाकं भूमिच्छत्रं शिलींद्रजम् ।
क्षितिगोमयकाष्ठेषु वृक्षादिषु च तद्भवेत् ॥ १३९ ॥
सर्वे संस्वेदजाः शीता दोषलाः पिच्छिलाश्च ते ।
गुरवश्छर्द्यतीसारज्वरश्लेष्मामयप्रदाः ॥ १२० ॥
श्वेताः श्वभ्रस्थलीकाष्ठवंशगोव्रजसंभवाः ।
नातिदोषकरास्ते स्युः शेषास्तेभ्यो विगर्हिताः ॥ १२१ ॥

संस्वेदजाः छाता इति लोके ।

इति शाकवर्गः ।

वारिवर्गः ।

पानीयं सलिलं नीरं कीलालं जलमंबु च ।
आपो वार्वारिकं तोयं पयः पाथस्तथोदकम् ॥ १ ॥
जीवनं वनमंभोर्णोमृतं घनरसोऽपि च ॥ २ ॥

---

१ दे० भा० खुंब सांपकी छत्री । बं० भा० भूईछाती । इं० मशरूम । Mushroom. २ दे० भा० पानी । बं० भा० जल । फा० आब । इं० वाटर Water.

पानीयं श्रमनाशनं क्लमहरं मूर्च्छापिपासापहं
तंद्राछर्दिविबंधहृद्बलकरं निद्राहरं तर्पणम् ।
हृद्यं गुप्तरसं ह्यजीर्णशमकं नित्यं हितं शीतलं
लघ्वच्छं रसकारणान्निगदितं पीयूषवज्जीवनम् ॥ ३ ॥
भेद--पानीयं मुनिभिःप्रोक्तं दिव्यं भौममिति द्विधा ॥४॥
दिव्यं चतुर्विधं प्रोक्तं धाराजं करकाभवम् ।
तौषारं च तथा हैमं तेषु धारं गुणाधिकम् ॥ ५ ॥

धाराजलम् ।

धाराभिः पतितं तोयं गृहीतं स्फीतवाससा ।
शिलायां वसुधायां वा धौतायां पतितं च तत् ॥ ६ ॥
सौवर्णे राजते ताम्रे स्फाटिके काचनिर्मिते ।
भाजने मृण्मये वापि स्थापितं धारमुच्यते ॥ ७ ॥
धारानीरं त्रिदोषघ्नमनिर्देश्यरसं लघु ।
सौम्यं रसायनं बल्यं तर्पणं ह्लादिजीवनम् ॥ ८ ॥
पाचनं मतिकृन्मूर्च्छातन्द्रादाहश्रमक्लमान् ।
तृष्णां हरति तत्पथ्यं विशेषात्प्रावृषि स्मृतम् ॥ ९ ॥

तद्भेदौ ।

धाराजलं च द्विविधं गंगासामुद्रभेदतः ।
आकाशगंगासंबंधि जलमादाय दिग्गजाः ॥ १० ॥
मेघैरंतरिता वृष्टिं कुर्वंतीति वचः सताम् ।

---

१ तत्र दिव्यमुत्तमं दिव्यस्य कालापेक्षत्वात् । तथाहि दिव्यस्य पात्रकालयो-रेवापेक्षा तद्यथा हि सुपात्रस्थम् । आर्तवं हितमनार्तवमहितम् । भौमस्याष्टव-स्त्वपेक्षा । तद्यथा--जांगले हितमहितमानूपे ॥ १ ॥ तत्रापि शुच्यादौ हितम-हितमशुच्यादौ २ । कूपादौ हितमहितं पल्वलादौ । ३ सुपात्रे हितमहितं दुष्पात्रे ॥ ४ क्वचिद्देहे हितं क्वचिदहितम् ॥ ५ शरद्ग्रीष्मयोर्हितमहितम-न्यदा । ६ दिवा हितमहितं रात्रौ । ७ दिवाद्यंतयोरेवम् ॥ ८ दिव्यं तु सर्वत्र सर्वदा सर्वेषां हितम् ।

गांगमाश्वयुजे मासि प्रायो वर्षति वारिदः ॥ ११ ॥
सर्वथा तज्जलं देयं तथैव चरके वचः ।
स्थापितं हेमजे पात्रे राजते मृण्मयेऽपि वा ॥ १२ ॥
शाल्यन्नं येन संसिक्तं भवेदक्लेदि वर्णवत् ।
तद्गांगं सर्वदोषघ्नं ज्ञेयं सामुद्रमन्यथा ॥ १३ ॥
तत्तु सक्षारलवणं शुक्रदृष्टिबलापहम् ।
विस्रं च दोषलं तीक्ष्णं सर्वकर्मसु गर्हितम् ॥ १४ ॥
सामुद्रं त्वाश्विने मासि गुणैर्गांगवदादिशेत् ।
अगस्त्यस्य तु देवर्षेरुदयात्सकलं जलम् ॥ १५ ॥
निर्मलं निर्विषं स्वादु शुक्रलं स्याददोषलम् ।
अतएवाह-फूत्कारविषवातेन नागानां व्योमचारिणाम् १६
वर्षासु सविषं तोयं दिव्यमथाश्विनं विना ।

अनार्तवम् ।

अनार्तवं प्रमुंचंति वारि वारिधरास्तु यत् ॥ १७ ॥
तत्त्रिदोषाय सर्वेषां देहिनां परिकीर्त्तितम् ।
करकाजलम्–दिव्यवाय्वग्निसंयोगात्संहताःखात्पतंतियाः
पाषाणखंडवच्चापस्ताः कारक्योऽमृतोपमाः ।
करकाजं जलं रूक्षं विशदं गुरु चास्थिरम् ॥ १९ ॥
दारुणं शीतलं सांद्रं पित्तहृत्कफवातकृत् ।

तौषारम् ।

अपि नद्याः समुद्रांते वह्निरापश्च तद्भवाः ॥ २० ॥

---

१ अनार्तवं पौषादिमासचतुष्टयविषयम् । वर्षर्तुभिन्नकाले वृष्टमिति यावत् । ज्योतिःशास्त्रेपि--अनुराधर्क्षमारभ्य षोडशर्क्षेषु भास्करः । यावत् प्रवर्त्तते तावद्-कालः परिकीर्तितः । २ दे०भा०ओले गले । ३ अपि नद्याः समुद्रांते वह्निरिति किं स्यादयम्भावः--नदीमारभ्य समुद्रपर्य्यंतं वह्निरास्ते तद्भवा वह्निभवा । धूमावयवनिर्मुक्ता धूमांशरहिता आपस्तुषाराख्याः, तुप, ओस, तुस । इस इति लोके । पंजाबीमें तरेल कहते हैं ॥

धूमावयवनिर्मुक्तास्तुषाराख्यास्तु ताः स्मृताः ।
अपथ्याः प्राणिनां प्रायो भूरुहाणां तु ता हिताः ॥२१॥
तुषारांबु हिमं रूक्षं स्याद्वातलमापित्तलम् ।
कफोरुस्तंभकंठाग्निमेदोगंडादिरोगकृत् ॥ २२ ॥

हैमं[1]जलम् ।

हिमवच्छिखरादिभ्यो द्रवीभूयाभिवर्षति ।
यत्तदेव हिमं हैमं जलमाहुर्मनीषिणः ॥ २३ ॥
हिमांबु शीतं पित्तघ्नं गुरु वातविवर्द्धनम् ।
हिमं तु शीतलं रूक्षं दारुणं सूक्ष्ममित्यपि ॥ २४ ॥
न तद्दूषयते वातं न च पित्तं न वा कफम् ।

भौमम् ।

भौममंबु निगदितं प्रथमं त्रिविधं बुधैः ॥ २५ ॥
जांगलं च तथानूपं ततः साधारणं क्रमात् ।
अल्पोदकोऽल्पवृक्षश्च पित्तरक्तामयान्वितः ॥ २६ ॥
ज्ञातव्यो जांगलो देशस्तत्रत्यं जांगलं जलम् ।
बह्वंबुर्बहुवृक्षश्च वातश्लेष्मामयान्वितः ॥ २७ ॥
देशोऽनूप इति ख्यात आनूपं तद्भवं जलम् ।
मिश्रचिह्नस्तु यो देशः स हि साधारणः स्मृतः ॥ २८ ॥
तस्मिन्देशे यदुदकं तत्तु साधारणं स्मृतम् ।
जांगलं सलिलं रूक्षं लवणं लघु पित्तनुत् ॥ २९ ॥
वह्निहृत्कफकृत्पथ्यं विकारान् कुरुते बहून् ।
आनूपं वार्यभिष्यंदि स्वादु स्निग्धं घनं गुरु ॥ ३० ॥
वह्निहृत्कफकृन्नित्यं विकारान्कुरुते बहून् ।
साधारणं तु मधुरं दीपनं शीतलं लघु ॥ ३१ ॥
तर्पणं रोचनं तृष्णादाहदोषत्रयप्रणुत् ।

---

१ और्वानलधूमेरितमंबु समुद्रस्य यद्घनीभूतम् । पवनानीतमुदीच्यां तद्धिममिति कथ्यते मुनिभिः ॥ कुहेस बर्फ इति लोके ।

भौमनादेयम्।

नद्या नदस्य वा नीरं नादेयमिति कीर्तितम्॥ ३२॥
नादेयमुदकं रूक्षं वातलं लघु दीपनम्।
अनभिष्यंदि विशदं कटुकं कफपित्तनुत्॥ ३३॥
नद्यः शीघ्रवहा लघ्व्यः सर्वा याश्चामलोदकाः।
गुर्व्यः शैवलसंछन्नाः मंदगाः कलुषाश्च याः॥ ३४॥
हिमवत्प्रभवाः पथ्या नद्योऽश्माहतपाथसः।
गंगाशतद्रुसरयूयमुनाद्या गुणोत्तमाः॥ ३५॥
सह्यशैलभवा नद्यो वेणीगोदावरीमुखाः।
कुर्वंति प्रायशः कुष्ठमीषद्वातकफावहाः॥ ३६॥
नदीसरस्तडागस्थे कूपप्रस्रवणादिजे।
उदके देशभेदेन गुणान्दोषांश्च लक्षयेत्॥ ३७॥

औद्भिदम्।

विदार्य भूमिं निम्नां यन्महत्या धारया स्रवेत्।
तत्तोयमौद्भिदं नाम वदंतीति महर्षयः॥ ३८॥
औद्भिदं वारि पित्तघ्नमविदाह्यतिशीतलम्।
प्रीणनं मधुरं बल्यमीषद्वातकरं लघु॥ ३९॥

नैर्झरम्।

शैलसानुस्रवद्वारिप्रवाहो निर्झरो झरः।
सतु प्रस्रवणश्चापि तत्रत्यं नैर्झरं जलम्॥ ४०॥
नैर्झरं रुचिकृन्नीरं कफघ्नं दीपनं लघु।
मधुरं कटुपाकं च वातलं स्यादपित्तलम्॥ ४१॥

सारसम्।

नद्या शैलादिरुद्धाया यत्र संश्रुत्य तिष्ठति।
तत्सरोजदलच्छन्नं तदंभः सारसं स्मृतम्॥ ४२॥
सारसं सलिलं बल्यं तृष्णाघ्नं मधुरं लघु।
रोचनं तुवरं रूक्षं बद्धमूत्रमलं स्मृतम्॥ ४३॥

तडागम् ।

प्रशस्तभूमिभागस्थो बहुसंवत्सरोषितः ।
जलाशयस्तडागः स्यात्ताडागं तज्जलं स्मृतम् ॥ ४४ ॥
ताडागमुदकं स्वादु कषायं कटुपाकि च ।
वातलं बद्धविण्मूत्रमसृक्पित्तकफापहम् ॥ ४५ ॥

वापी ।

पाषाणैरिष्टकाभिर्वा बद्धः कूपो बृहत्तरः ।
ससोपाना भवेद्वापी तज्जलं वाप्यमुच्यते ॥ ४६ ॥
वाप्यं वारि यदि क्षारं पित्तकृत्कफवातहृत् ।
तदेव मिष्टं कफकृद्वातपित्तहरं भवेत ॥ ४७ ॥

कौपम् ।

भूमौ खातोल्पविस्तारो गंभीरो मंडलाकृतिः ।
बद्धोऽबद्धः स कूपः स्यात्तदंभः कौपमुच्यते ॥ ४८ ॥
कौपं पयो यदि स्वादु त्रिदोषघ्नं हितं लघु ।
तत्क्षारं कफवातघ्नं दीपनं पित्तकृत्परम् ॥ ४९ ॥

चौंड्यम् ।

शिलाकीर्णं स्वयं श्वभ्रं नीलांजनसमोदकम् ।
लतावितानसंछन्नं चौंड्यमित्यभिधीयते ॥ ५० ॥
अश्मादिभिरबद्धं यत्तच्चौंड्यमिति वापरे ।
तत्रत्यमुदकं चौंड्यं मुनिभिस्तदुदाहृतम् ॥ ५१ ॥
चौंड्यं वह्निकरं नीरं रूक्षं कफहरं लघु ।
मधुरं पित्तनुद्रुच्यं पाचनं विशदं स्मृतम् ॥ ५२ ॥

पाल्वलम् ।

अल्पं सरः पल्वलं स्याद्यत्र चंद्रर्क्षगे[1] रवौ ।

---

१ चंद्रर्क्ष—मृगशिरोनक्षत्रम् ।

तत्तिष्ठति जलं किंचित्तत्रत्यं वारि पाल्वलम् ॥ ५३ ॥
पाल्वलं वार्य्यभिष्यंदि गुरु स्वादु त्रिदोषकृत्।

विकरम्।

नद्यादिनिकटे भूमिर्या भवेद्वालुकामयी ॥ ५४ ॥
उद्धाव्यते यत्तोयं तु तज्जलं विकरं विदुः।
विकरं शीतलं स्वच्छं निर्दोषं लघु च स्मृतम् ॥ ५५ ॥
तुवरं स्वादु पित्तघ्नं क्षारं ततिपत्तलं मनाक्।

केदारम्।

केदारं क्षेत्रमुदिष्टं कैदारं तज्जलं स्मृतम् ॥ ५६ ॥
कैदारं वार्य्यभिष्यंदि मधुरं गुरु दोषकृत्।

वृष्टिजलम्।

वार्षिकं तदहर्वृष्टं भूमिस्थमाहितं जलम् ॥ ५७ ॥
त्रिरात्रमुषितं तत्तु प्रसन्नममृतोपमम्।

विहितजलम्।

हेमंते सारसं तोयं ताडागं वा हितं स्मृतम् ॥ ५८ ॥
हेमंते विहितं तोयं शिशिरेऽपि प्रशस्यते।
वसंतग्रीष्मयोः कौपं वाप्यं वा नैर्झरं जलम् ॥ ५९ ॥
नादेयं वारि नादेयं वसंतग्रीष्मयोर्बुधैः।
विषवद्वनवृक्षाणां पत्राद्यैर्दूषितं यतः ॥ ६० ॥
औद्भिदं चांतरिक्षं वा कौपं वा प्रावृषि स्मृतम्।
शस्तं शरदि नादेयं नीरमंशूदकं परम् ॥ ६१ ॥
दिवा रविकरैर्जुष्टं निशि शीतकरांशुभिः।

१ रविकरैर्जुष्टमित्युक्ते दिवापदं समस्तदिवसप्राप्त्यर्थम्। शीतकरांशुभिर्जुष्टमित्युक्ते निशीतिपदमर्द्धरात्रप्राप्त्यर्थम्। तंडुलजलम्। तंडुलानष्टगुणिते कंडितान् क्षालयेज्जले। तत्तुंडुलजलं ग्राह्यं योज्यं निखिलकर्मसु ॥ १ ॥ नारिकेलजलम्। नारिकेलोद्भवं स्निग्धं स्वादु वृष्यं हिमं लघु। तृष्णापित्तानिलहरं दीपनं वस्तिशोधनम् ॥ २ ॥

ज्ञेयमंशूदकं नाम स्निग्धं दोषत्रयापहम् ॥ ६२ ॥
अनभिष्यंदि निर्दोषमांतरिक्षजलोपमम् ।
बल्यं रसायनं मेध्यं शीतं लघु सुधासमम् ॥ ६३ ॥

सुश्रुतः ।

पौषे वारि सरोजातं माघे तत्तु तडागजम् ।
फाल्गुने कूपसंभूतं चैत्रे चौंड्या हिमं मतम् ॥ ६४ ॥
वैशाखे नैर्झरं नीरं ज्येष्ठे शस्तं तथोद्भिदम् ।
आषाढे शस्यते कौपं श्रावणे दिव्यमेव च ॥ ६५ ॥
भाद्रे कौपं पयः शस्तमाश्विने चौंड्यमेव च ।
कार्तिके मार्गशीर्षे च जलमात्रं प्रशस्यते ॥ ६६ ॥

जलग्रहणकालः ।

भौमानामंभसां प्रायो ग्रहणं प्रातरिष्यते ।
शीतत्वं निर्मलत्वं च यतस्तेषां मता गुणाः ॥ ६७ ॥

जलपानम् ।

अत्यंबुपानान्न विपच्यतेऽन्नं निरंबुपानाच्च स एव दोषः ।
तस्मान्नरो वह्निविवर्धनाय मुहुर्मुहुर्वारि पिबेद्भूरि ॥६८॥

शीतलजलम् ।

मूर्च्छादिपित्तदाहेषु विषे रक्ते मदात्यये ।
श्रमे भ्रमे विदग्धेऽन्ने तमके क्षवथौ तथा ॥ ६९ ॥
ऊर्ध्वगे रक्तपित्ते च शीतमंबु प्रशस्यते ।

तन्निषेधः ।

पार्श्वशूले प्रतिश्याये वातरोगे गलग्रहे ॥ ७० ॥
आध्मानोस्तमिते कोष्ठे सद्यः शुद्धौ नवज्वरे ।
अरुचिग्रहणीगुल्मश्वासकासेषु विद्रधौ ॥ ७१ ॥
हिक्कायां स्नेहपाने च शीतांबु परिवर्जयेत् ।

उष्णोदकम् । अर्द्धावशिष्टं यत्तोयं तदुष्णोदकमुच्यते । उष्णोदकं सदा पथ्यं श्वासकासज्वरार्तिजित् ॥ १ ॥ आरोग्यांबु । पादशेषं तु यत्तोयमारोग्यांबु तदुच्यते । आरोग्यांबु सदा पथ्यं श्वासकासकफापहम् ।

अल्पजलम् ।

अरोचके प्रतिश्याये मंदेऽग्नौ श्वयथौ क्षये ॥ ७२ ॥
मुखप्रसेके जठरे कुष्ठे नेत्रामये ज्वरे ।
व्रणे च मधुमेहे च पिबेत्पानीयमल्पकम् ॥ ७३ ॥

आवश्यकता ।

जीवनं जीविनां जीवो जगत्सर्वं तु तन्मयम् ।
अतोऽत्यंतनिषेधेऽपि न क्वचिद्वारि वार्यते ॥ ७४ ॥

हारीतः ।

तृष्णागरीयसी घोरा सद्यः प्राणविनाशिनी ।
तस्माद्देयं तृषार्ताय पानीयं प्राणधारणम् ॥ ७५ ॥
तृषितो मोहमायाति मोहात्प्राणान्विमुंचति ।
अतः सर्वास्ववस्थासु न क्वचिद्वारि वर्जयेत् ॥ ७६ ॥

प्रशस्तजलम् ।

अगंधमव्यक्तरसं सुशीतं तर्षनाशनम् ।
स्वच्छं लघु च हृद्यं च तोयं गुणवदुच्यते ॥ ७७ ॥

निंदितम् ।

पिच्छिलं कृमिलं क्लिन्नं पर्णशैवालकर्दमैः ।
विवर्णं विरसं सांद्रं दुर्गंधं न हितं जलम् ॥ ७८ ॥
कलुषं छन्नमंभोजपर्णनीलीतृणादिभिः ।
दुःस्पर्शनमसंस्पृष्टं सौरचांद्रमरीचिभिः ॥ ७९ ॥
अनार्तवं वार्षिकं तु प्रथमं तच्च भूमिगम् ।
व्यापन्नं परिहर्तव्यं सर्वदोषप्रकोपनम् ॥ ८० ॥
तत्कुर्यात्स्नानपानाभ्यां तृष्णाध्मानचिरज्वरान् ।
कासाग्निमांद्याभिष्यंदकंडुगंडादिकं तथा ॥ ८१ ॥

दिवाशृतं पयो रात्रौ गुरुतामधिगच्छति । रात्रौ शृतं दिवा पीतं गुरुत्वमधिगच्छति । शृतं शीतं पुनस्तप्तं तोयं विषसमं भवेत् ।

शोधनम् ।

निंदितं चापि पानीयं क्वथितं सूर्य्यतापितम् ।
सुवर्णं रजतं लोहं पाषाणं सिकतामपि ॥ ८२ ॥
भृशं संताप्य निर्वाप्य सप्तधा साधितं तथा ।
कर्पूरजातिपुन्नागपाटलादिसुवासितम् ॥ ८३ ॥
शुचि सांद्रपटस्नावि क्षुद्रजंतुविवर्जितम् ।
स्वच्छं कनकमुक्ताद्यैः शुद्धं स्याद्दोषवर्जितम् ॥ ८४ ॥
पर्णमूलबिसग्रंथिमुक्ताकतकशैवलैः ।
गोमेदेन च वज्रेण कुर्य्यादंबुप्रसादनम् ॥ ८५ ॥
पीतं जलं जीर्य्यति यामयुग्मा-
द्यामैकमात्राच्छृतशीतलं च ।
तदर्द्धमात्रेण शृतं कदुष्णं
पयःप्रपाके त्रय एव कालाः ॥ ८६ ॥

इति वारिवर्गः ।

दुग्धवर्गः ।

दुग्धम् ।

दुग्धं क्षीरं पयः स्तन्यं बालजीवनमित्यपि ।
दुग्धं समधुरं स्निग्धं वातपित्तहरं परम् ॥ १ ॥
सद्यः शुक्रकरं पीतं सात्म्यं सर्वशरीरिणाम् ।
जीवनं बृंहणं बल्यं मेध्यं वाजिकरं परम् ॥ २ ॥
वयःस्थापनमायुष्यं संधिकारि रसायनम् ।
विरेकवांतिवस्तीनां तुल्यमोजोविवर्द्धनम् ॥ ३ ॥
जीर्णज्वरे मनोरोगे शोषमूर्च्छाभ्रमेषु च ।

१ दे० भा० दूध । बं० भा० दूध । फा० शीरे । इं० मिल्क milk क्षीर-मष्टविधम्--गव्यं, महिषम्, आजं, कारभं स्त्रैणम् आविकम् । ऐभम् । ऐकशफम्॥

ग्रहण्यां पांडुरोगे च दाहे तृषि हृदामये ॥ ४ ॥
गर्भस्रावे च सततं हितं मुनिवरैः स्मृतम् ।
बालवृद्धक्षतक्षीणक्षुद्व्यवायकृशाश्च ये ॥ ५ ॥
तेभ्यः सदातिशयितं हितमेतदुदाहृतम् ।

गोदुग्धम् ।

गव्यं दुग्धं विशेषेण मधुरं रसपाकयोः ॥ ६ ॥
शीतलं स्तन्यकृत् स्निग्धं वातपित्तास्रनाशनम् ।
दोषधातुमलस्रोतःकिंचित्क्लेदकरं गुरु ॥ ७ ॥
जरासमस्तरोगाणां शांतिकृत्सेविनां सदा ।
कृष्णाया गोर्भवं दुग्धं वातहारि गुणाधिकम् ॥ ८ ॥
पीताया हरते पित्तं तथा वातहरं भवेत् ।
श्लेष्मलं गुरु शुक्लाया रक्ताचित्रातिवातहृत् ॥ ९ ॥
बालवत्सविवत्सानां गवां दुग्धं त्रिदोषकृत् ।
बष्कयिण्यास्त्रिदोषघ्नं तर्पणं बलकृत्पयः ॥ १० ॥

देशविशेषेण श्रैष्ठ्यम् ।

जांगलानूपशैलेषु चरंतीनां यथोत्तरम् ।
पयो गुरुतरं स्नेहं यथाहारं प्रवर्तते ॥ ११ ॥

आहारविशेषम् ।

स्वल्पान्नभक्षणाज्जातं क्षीरं गुरु कफप्रदम् ।
तत्तु बल्यं परं वृष्यं स्वस्थानां गुणदायकम् ॥ १२ ॥
पलालतृणकार्पासबीजजातं गुणैर्हितम् ।

माहिषम् ।

माहिषं मधुरं गव्यात्स्निग्धं शुक्रकरं गुरु ॥ १३ ॥
निद्राकरमभिष्यंदि क्षुधाधिककरं हिमम् ।

छागम् ।

छागं कषायं मधुरं शीतं ग्राहि तथा लघु ॥ १४ ॥

१ दे० भा० देरकी सुई हुई गौ । खांगड । वाखडी ।

रक्तपित्तातिसारघ्नं क्षयकासज्वरापहम् ।
अजानामल्पकायत्वात्कटुतिक्तनिषेवणात् ॥ १५ ॥
स्तोकाम्बुपानाद्व्यायामात्सर्वरोगापहं पयः ।

मृगीदुग्धम् ।

मृगीणां जांगलोत्थानामजाक्षीरगुणं पयः ॥ १६ ॥

मेषीणाम् ।

आविकं लवणं स्वादु स्निग्धोष्णं चाश्मरिप्रणुत् ।
अहृद्यं तर्पणं वृष्यं शुक्रपित्तकफप्रदम् ॥ १७ ॥
गुरु कासेऽनिलोद्भूते केवले चानिले वरम् ।

अश्वीदुग्धम् ।

रूक्षोष्णं वडवाक्षीरं बल्यं शोषानिलापहम् ॥ १८ ॥
अम्लं पटु लघु स्वादु सर्वमैकशफं तथा ।

उष्ट्रीदुग्धम् ।

उष्ट्रीदुग्धं लघु स्वादु लवणं दीपनं तथा ॥ १९ ॥
कृमिकुष्ठकफानाहशोथोदरहरं सरम् ।

हस्तिनीदुग्धम् ।

बृंहणं हस्तिनीदुग्धं मधुरं तुवरं गुरु ॥ २० ॥
वृष्यं बल्यं हिमं स्निग्धं चक्षुष्यं स्थिरताकरम् ।

नारीदुग्धम् ।

नार्य्या लघु पयः शीतं दीपनं वातपित्तजित् ॥ २१ ॥
चक्षुःशूलाभिघातघ्नं नस्याश्चोतनयोर्हितम् ।

धारोष्णम् ।

धारोष्णं गोः पयो बल्यं लघु शीतं सुधासमम् ॥ २२ ॥
दीपनं च त्रिदोषघ्नं तद्धारा शिशिरं त्यजेत् ।
धारोष्णं शस्यते गव्यं धाराशीतं तु माहिषम् ॥ २३ ॥

---

१ बृंहणं जीवनं सात्म्यं स्नेहनं मानुषं पयः । नावनं रक्तपित्तस्य तर्पणं चाक्षिरोगिणाम् ॥ १ ॥ इति चरकः ॥

भृतोष्णमाविकं पथ्यं भृतशीतमजापयः ।
आमं क्षीरमभिष्यंदि गुरु श्लेष्मामवर्द्धनम् ॥ २४ ॥
ज्ञेयं सर्वमपथ्यं तु गव्यमाहिषवर्ज्जितम् ।
नारीक्षीरं त्वाममेव हितं न तु भृतं हितम् ॥ २५ ॥
भृतोष्णं कफवातघ्नं भृतशीतं तु पित्तनुत् ।
अर्द्धोदकं क्षीरशिष्टमामाल्लघुतरं पयः ॥ २६ ॥
जलेन रहितं दुग्धमतिपक्कं यथायथा ।
तथातथा गुरु स्निग्धं वृष्यं बलविवर्द्धनम् ॥ २७ ॥

पीयूषकिलाटक्षीरशाकतक्रपिंडमोरटाः ।

क्षीरं तत्कालसूताया घनं पीयूषमुच्यते ।
नष्टदुग्धस्य पक्कस्य पिंडः प्रोक्तः किलाटकः ॥ २८ ॥
अपक्कमेव यन्नष्टं क्षीरशाकं हि तत् पयः ।
दध्ना तक्रेण वा नष्टं दुग्धं बद्धं सुवाससा ॥ २९ ॥
द्रवभागेन रहितं यत्तक्रपिंडः स उच्यते ।
नष्टदुग्धभवं नीरं मोरटं जय्यटोऽब्रवीत् ॥ ३० ॥
पीयूषश्च किलाटं च क्षीरशाकं तथैव च ।
तक्रपिंड इमे वृष्या बृंहणा बलवर्द्धनाः ॥ ३१ ॥
गुरवः श्लेष्मला हृद्या वातपित्तविनाशनाः ।
दीप्ताग्नीनां विनिद्राणां विद्रधौ चाभिपूजिताः ॥ ३२ ॥
मुखशोषतृषादाहरक्तपित्तज्वरप्रणुत् ।
लघुर्बलकरो रुच्यो मोरटः स्यात्सितायुतः ॥ ३३ ॥
संतानिका गुरुः शीता वृष्या पित्तास्रवातनुत् ।
तर्पणी बृंहणी स्निग्धा बलासबलशुक्रला ॥ ३४ ॥
खंडेन सहितं दुग्धं कफकृत्पवनापहम् ।
सितासितोपलायुक्तं शुक्रलं त्रिमलापहम् ॥ ३५ ॥
रात्रौ चन्द्रगुणाधिक्याद्व्यायामाकरणात्तथा ।
प्राभातिकं तदा प्रायः प्रादोषाद्गुरु शीतलम् ॥ ३६ ॥

---

१ फेनुस इति लोके । वहुली ।

दिवाकरकराघाताद्व्यायामानिलसेवनात् ।
प्राभातिका तु प्रादोषं लघुवातकफापहम् ॥ ३७ ॥
वृष्यं बृंहणमग्निदीपनकरं पूर्वाह्णपीतं पयो
मध्याह्ने बलदायकं कफहरं पित्तापहं दीपनम् ।
बाल्ये वह्निकरं ततो बलकरं वृद्धेषु रेतोवहं
रात्रौ पथ्यमनेकदोषशमनं क्षीरं सदा सेव्यते ॥ ३८ ॥
वदंति पेयं निशि केवलं पयो
भोज्यं न तेनेह सहौदनादिकम् ।
भवेदजीर्णं यदि न स्वपेन्निशि
क्षीरस्य पीतस्य न शेषमुत्सृजेत् ॥ ३९ ॥
विदाहीन्यन्नपानानि दिवा भुंक्ते हि यन्नरः ।
तद्विदाहप्रशांत्यर्थं रात्रौ क्षीरं सदा पिबेत् ॥ ४० ॥
दीप्तानले कृशे पुंसि बाले वृद्धे पयःप्रिये ।
मतं हिततमं दुग्धं सद्यः शुक्रकरं यतः ॥ ४१ ॥
क्षीरं गव्यमथाजं वा कोष्णं दंडाहतं पिबेत् ।
लघु वृष्यं ज्वरहरं वातपित्तकफापहम् ॥ ४२ ॥
गोदुग्धप्रभवं किं वा छागीदुग्धसमुद्भवम् ।
भवेदेतत्त्रिदोषघ्नं रोचनं बलवर्द्धनम् ॥ ४३ ॥
वह्निवृद्धिकरं वृष्यं सद्यस्तृप्तिकरं लघु ।
अतिसारेऽग्निमांद्ये च ज्वरेऽजीर्णे प्रशस्यते ॥ ४४ ॥

निंदितम् ।

विवर्णं विरसं चाम्लं दुर्गंधं ग्रथितं पयः ।
वर्जयेदम्ललवणयुक्तं कुष्ठ्याद्विहेतुतः ॥ ४५ ॥

इति दुग्धवर्गः ।

अम्लेष्वामलकं पथ्यं शर्करा मधुरेषु च । पटोलं तिक्तवर्गेषु त्रिकटुकेषु महौ-षधम् ॥ १ ॥ कषायेष्वभया प्रोक्ता लवणेषु च सैन्धवम् । वैदलानां तथा माषाः शाकेषु सुनिषण्णम् ॥ २ ॥ तांबूलं नैव सेवेत क्षीरं पीत्वा तु मानवः । याव-त्तत्स्वदते क्षीरं मुहूर्तार्द्धा प्रशस्यते ॥ ३ ॥

दधिवर्गः ।

दधि[1] ।

दध्युष्णं दीपनं स्निग्धं कषायानुरसं गुरु ।
पाकेऽम्लं श्वासपित्तास्रशोथमेदःकफप्रदम् ॥ १ ॥
मूत्रकृच्छ्रे प्रतिश्याये शीतगे विषमज्वरे ।
अतिसारेऽरुचौ कार्श्ये शस्यते बलशुक्रकृत् ॥ २ ॥

तद्भेदः ।

आदौ मंदं ततः स्वादु स्वाद्वम्लं च ततः परम् ।
अम्लं चतुर्थमत्यम्लं पंचमं दधि पंचधा ॥ ३ ॥
मंदं दुग्धवदव्यक्तरसं किंचिद्घनं भवेत् ।
मंदं स्यात्सृष्टविण्मूत्रदोषत्रयविदाहकृत् ॥ ४ ॥
यत्सम्यग्घनतां यातं व्यक्तस्वादुरसं भवेत् ।
अव्यक्ताम्लरसं तत्तु स्वादु विज्ञैरुदाहृतम् ॥ ५ ॥
स्वादु स्यादत्यभिष्यंदि वृष्यं मेदःकफावहम् ।
वातघ्नं मधुरं पाके रक्तपित्तप्रसादनम् ॥ ६ ॥
स्वाद्वम्लं सांद्रं मधुरं कषायानुरसं भवेत् ।
स्वाद्वम्लस्य गुणा ज्ञेया सामान्यदधिवज्जनैः ॥ ७ ॥
यत्तिरोहितमाधुर्य्यं व्यक्ताम्लत्वं तदम्लकम् ।
अम्लं तु दीपनं पित्तरक्तश्लेष्माविवर्द्धनम् ॥ ८ ॥
तदत्यम्लं दंतरोमहर्षकंठादिदाहकृत् ।
अत्यम्लं दीपनं रक्तवातापित्तकरं परम् ॥ ९ ॥
गव्यं दधि विशेषेण स्वाद्वम्लं च रुचिप्रदम् ।
पवित्रं दीपनं हृद्यं पुष्टिकृत्पवनापहम् ॥ १० ॥

---

१ दे० भा० दही । बं० भा० दई । फा० दोगा । इं० करड्ल्ड मिल्क । Curdled milk,

उक्तं दध्नामशेषाणां मध्ये गव्यं गुणाधिकम् ।
माहिषं दधि सुस्निग्धं श्लेष्मलं वातपित्तनुत् ॥ ११ ॥
स्वादु पाकमभिष्यंदि वृष्यं गुर्वस्रदूषकम् ।
आजं दध्युष्णकं ग्राहि लघु दोषत्रयापहम् ॥ १२ ॥
शस्यते श्वासकासर्शःक्षयकार्श्येषु दीपनम् ।
पक्कदुग्धभवं रुच्यं दधि स्निग्धगुणोत्तमम् ॥ १३ ॥
पित्तानिलापहं सर्वधात्वग्निबलवर्द्धनम् ।
असारं दधि संग्राहि शीतलं वातलं लघु ॥ १४ ॥
विष्टंभि दीपनं रुच्यं ग्रहणीरोगनाशनम् ।
गालितं दधि सुस्निग्धं वातघ्नं कफकृद्गुरु ॥ १५ ॥
बलपुष्टिकरं रुच्यं मधुरं नातिपित्तकृत् ।
सशर्करं दधि श्रेष्ठं तृष्णापित्तास्रजित् परम् ॥ १६ ॥
सगुडं वातनुद् वृष्यं बृंहणं तर्पणं गुरु ।
न नक्तं दधि भुंजीत नचाप्यघृतशर्करम् ॥ १७ ॥
नामुद्गसूपं नाक्षौद्रं नोष्णैर्नामलकैर्विना ।
शस्यते दधि नो रात्रौ शस्तं चांबुघृतान्विम् ॥ १८ ॥
रक्तपित्तकफोत्थेषु विकारेषु च नैव तत् ।
हेमंते शिशरे चापि वर्षासु दधि शस्यते ॥ १९ ॥
शरद्ग्रीष्मवसन्तेषु प्रायशस्तद्विगर्हितम् ।
ज्वरासृक्पित्तवीसर्पकुष्ठपांड्वामयभ्रमान् ॥ २० ॥
प्राप्नुयात्कामलां चोग्रां विधिं हित्वा दधिप्रियः ।
दध्नस्तूपरि यो भागो घनः स्नेहसमन्वितः ॥ २१ ॥
स लोके सर इत्युक्तो दध्नो मंडस्तु मस्त्विति ।

---

१ रात्रौ दधि न भुंजीत, भुंजीत चेत्तदा अघृतशर्करममुद्गसूपमक्षौद्रमुष्णं विनामलकं च दधि न भुंजीत । तेन घृतशर्करादियुक्तं रात्रावपि दधि भुंजीतेत्यर्थः ॥ २ अंबुघृतान्वितमपि ॥

सरः स्वादुर्गुरुर्वृष्यो वातवह्निप्रणाशनः ॥ २२ ॥
साम्लो वस्तिप्रशमनः पित्तश्लेष्मविवर्द्धनः।
मस्तु क्लमहरं बल्यं लघुभक्ताभिलाषकृत् ॥ २३ ॥
स्रोतोविशोधनं ह्लादि कफतृष्णानिलापहम्।
अवृष्यं प्रीणनं शीघ्रं भिनत्ति मलसंचयम् ॥ २४ ॥

इति दधिवर्गः।

तक्रवर्गः।

घोलं[1] तु मथितं तक्रमुदश्विच्छच्छिकापि च।
ससरं निर्जलं घोलं मथितं त्वसरोदकम् ॥ १ ॥
तक्रं पादजलं प्रोक्तमुदश्वित्त्वर्द्धवारिकम्।
छच्छिका सारहीना स्यात्स्वच्छा प्रचुरवारिका ॥ २ ॥
घोलं तु शर्करायुक्तं गुणैर्ज्ञेयं रसालवत्।
वातपित्तहरं ह्लादि मथितं कफपित्तनुत् ॥ ३ ॥
तक्रं ग्राहिकषायाम्लं स्वादुपाकरसं लघु।
वीर्य्योष्णं दीपनं वृष्यं प्रीणनं वातनाशनम् ॥ ४ ॥
ग्रहण्यादिमतां पथ्यं भवेत्संग्राहि लाघवात्।
किंचित्स्वादुविपाकित्वान्न च पित्तप्रकोपनम् ॥ ५ ॥
कषायोष्णं दीपनं वृष्यं प्रीणनं वातनाशनम्।
कषायोष्णं विकाशित्वाद्रौक्ष्याच्चापि कफापहम् ॥ ६ ॥
न तक्रसेवी व्यथते कदाचिन्न तक्रदग्धाः प्रभवंति रोगाः।
यथा सुराणाममृतं सुखाय तथा नराणां भुवि तक्रमाहुः ७
अम्लेन वातं मधुरेण पित्तं कफं कषायेण निहंति सद्यः।
उदश्वित्कफकृद्बल्यं आमघ्नं परमं मतम् ॥ ८ ॥

---

१ दे० भा० छाह, मठा, लस्सी। बं० भा० घोल। फा० मस्त, मठा।
ई० बटरमिल्क, Butter milk.

छच्छिका शीतला लघ्वी पित्तश्रमतृषाहरी ।
वातनुत्कफकृत्सा तु दीपनी लवणान्विता ॥ ९ ॥

उद्धृतघृतस्तोकोद्धृतघृतानुद्धृतघृतानि ।

समुद्धृतं घृतं तक्रं पथ्यं लघु विशेषतः ।
स्तोकोद्धृतघृतं तस्माद् गुरु वृष्यं कफावहम् ॥ १०
अनुद्धृतघृतं सांद्रं गुरु पुष्टिकफप्रदम् ।
वातेम्लं शस्यते तक्रं शुंठीसैंधवसंयुतम् ॥ ११ ॥
पित्ते स्वादुसितायुक्तं सव्योषमधिकं कफे ।
हिंगु जीरयुतं घोलं सैंधवेन च संयुतम् ॥ १२ ॥
भवेदतीववातघ्नमर्शोतीसारहृत्परम् ।
सुरुच्यं पुष्टिदं बल्यं वस्तिशूलविनाशनम् ॥ १३ ॥
मूत्रकृच्छ्रे तु सगुडं पांडुरोगे सचित्रकम् ।
तक्रमामं कफं कोष्ठे हंति कंठे करोति च ॥ १४ ॥
पीनसश्वासकासादौ पक्वमेव प्रयुज्यते ।
शीतकालेऽग्निमांद्ये च तथा वातामयेषु च ॥ १५ ॥
अरुचौ स्रोतसां रोधे तक्रं स्यादमृतोपमम् ।
तत्तु हंति गरच्छर्दिप्रसेकविषमज्वरान् ॥ १६ ॥
पांडुमेदोग्रहण्यर्शोमूत्रग्रहभगंदरान् ।
मेहं गुल्ममतीसारं शूलप्लीहोदरारुचीः ॥ १७ ॥
श्वित्रकोष्ठगतव्याधीन् कुष्ठशोथतृषाकृमीन् ।
नैव तक्रं क्षते दद्यान्नोष्णकाले न दुर्बले ॥ १८ ॥
न मूर्च्छाभ्रमदाहेषु न रोगे रक्तपित्तजे ।
यान्युक्तानि दधीन्यष्टौ तद्गुणं तक्रमादिशेत् ॥ १९ ॥

इति तक्रवर्गः ।

नवनीतवर्गः ।

म्रक्षणं सर्जं हैयंगवीनं नवनीतकम् ।
नवनीतं हितं गव्यं वृष्यं वर्णबलाग्निकृत् ।
संग्राहि वातपित्तासृक्क्षयार्शोर्दितकासहृत् ॥ १ ॥
तद्धितं बालके वृद्धे विशेषादमृतं शिशोः ।
नवनीतं महिष्यास्तु वातश्लेष्मकरं गुरु ॥ २ ॥
दाहपित्तश्रमहरं मेदःशुक्रविवर्द्धनम् ।
दुग्धोत्थं नवनीतं तु चक्षुष्यं रक्तपित्तनुत् ॥ ३ ॥
वृष्यं बल्यमतिस्निग्धं मधुरं ग्राहि शीतलम् ।
नवनीतं तु सद्यस्कं स्वादु ग्राहि हिमं लघु ॥ ४ ॥
मेध्यं किंचित्कषायाम्लमीषत्तक्रांशसंक्रमात् ।
सक्षारकटुकाम्लत्वाच्छर्द्यर्शःकुष्ठकारकम् ॥ ५ ॥
श्लेष्मलं गुरु मेदस्यं नवनीतं चिरंतनम् ॥ ६ ॥

इति नवनीतवर्गः ।

घृतवर्गः ।

घृतमाज्यं हविः सर्पिः कथ्यंते तद्गुणा अथ ।
घृतं रसायनं स्वादु चक्षुष्यं वह्निदीपनम् ॥ १ ॥
शीतवीर्य्यं विषालक्ष्मीपापपित्तानिलापहम् ।
अल्पाभिष्यंदि कांत्योजस्तेजोलावण्यबुद्धिकृत् ॥ २ ॥

---

१ दे० भा० मक्खन । बं० भा० माखन ननी । फा० मस्का । इं० बटर । Butter, आजं त्रिदोपशमनं नवतीतं तयोर्वरम् ॥ २ दे० भा० घी । घि । बं० भा० घृत । घी । फा० रोगनजरद । इं० लोरीफाईड । बटर । Lorified Butter.

स्वरस्मृतिकरं मेध्यमायुष्यं बलकृद्गुरु ।
उदावर्तज्वरोन्मादशूलानाहव्रणान् हरेत् ॥ ३ ॥
स्निग्धं कफकरं वृष्यं क्षयवीसर्परक्तनुत् ।
गव्यं घृतं विशेषेण चक्षुष्यं वृष्यमग्निकृत् ॥ ४ ॥
स्वादुपाकरसं शीतं वातपित्तकफापहम् ।
मेधालावण्यकांत्योजस्तेजोवृद्धिकरं परम् ॥ ५ ॥
अलक्ष्मीपापरक्षोघ्नं वयसः स्थापनं गुरु ।
बल्यं पवित्रमायुष्यं सुमंगल्यं रसायनम् ॥ ६ ॥
सुगंधं रोचकं चारु सर्वाज्येषु गुणाधिकम् ।
माहिषं तु घृतं स्वादु पित्तरक्तानिलापहम् ॥ ७ ॥
शीतलं श्लेष्मलं वृष्यं गुरु स्वादु विपच्यते ।
आजमाज्यं करोत्यग्निं चक्षुष्यं बलवर्द्धनम् ॥ ८ ॥
कासे श्वासे क्षये चापि हितं पाके भवेत्कटु ।
औष्ट्रं कटु घृतं पाके शोषक्रिमिविषापहम् ॥ ९ ॥
दीपनं कफवातघ्नं कुष्ठगुल्मोदरापहम् ।
पाके लघ्वाविकं सर्पिः सर्वरोगविनाशनम् ॥ १० ॥
वृद्धिं करोति चास्थीनामश्मरीशर्करापहम् ।
चक्षुष्यमग्निसंधुक्ष्यं वातदोषनिवारणम् ॥ ११ ॥
कफेऽनिले योनिदोषे पित्ते रक्ते च तद्धितम् ।
चक्षुष्यमाज्यं स्त्रीणां वा सर्पिः स्यादमृतोपमम् ॥ १२ ॥
वृद्धिं करोति देहाग्नेर्लघु पाके विषापहम् ।
तर्पणं नेत्ररोगघ्नं दाहनुद्वडवाघृतम् ॥ १३ ॥
घृतं दुग्धभवं ग्राहि शीतलं नेत्ररोगहृत् ।
निहंति पित्तदाहास्रमदमूर्छाभ्रमानिलान् ॥ १४ ॥
हविर्ह्यस्तनदुग्धोत्थं तत्स्याद्ध्यैयंगवीनकम् ।
हैयंगवीनं चक्षुष्यं दीपनं रुचिकृत्परम् ॥ १५ ॥

बलकृद्बृंहणं वृष्यं विशेषाज्ज्वरनाशनम् ।
वर्षादूर्द्ध्वं भवेदाज्यं पुराणं तत्त्रिदोषनुत् ॥ १६ ॥
मूर्छाकुष्ठविषोन्मादापस्मारातिमिरापहम् ।
यथायथाखिलं सर्पिः पुराणमधिकं भवेत् ॥ १७ ॥
तथातथा गुणैः स्वैःस्वैरधिकं तदुदाहृतम् ।
योजयेन्नवमेवाज्यं भोजने तर्पणे श्रमे ॥ १८ ॥
बलक्षये पांडुरोगे कामलानेत्ररोगयोः ।
राजयक्ष्माणि बाले च वृद्धे श्लेष्मकृते गदे ॥ १९ ॥
रोगे सामे विषूच्यां च विबंधे च मदात्यये ।
ज्वरे च दहने मंदे न सर्पिर्बहु मन्यते ॥ २० ॥

इति घृतवर्गः ।

मूत्रवर्गः ।

गोमूत्रम् ।

गोमूत्रं कटु तीक्ष्णोष्णं क्षारं तिक्तकषायकम् ।
लघ्वग्निदीपनं मेध्यं पित्तकृत्कफवातहृत् ॥ १ ॥
शूलगुल्मोदरानाहकंडूवाक्षिमुखरोगजित् ।
किलासगदवातामवस्तिरुक्कुष्ठनाशनम् ॥ २ ॥
कासश्वासापहं शोथकामलापांडुरोगहृत् ॥ ३ ॥
कंडूकिलासगुदशूलमुखाक्षिरोगान्
गुल्मातिसारमरुदामयमूत्ररोधान् ।
कासं सकुष्ठजठरक्रिमिपांडुरोगान्
गोमूत्रमेकमपि पीतमपाकरोति ॥ ४ ॥

---

१ दे० भा० मूत्र, पेशाव । बं० भा० मुत, चेना, प्रस्राव । फा० बौल इं० युरीन् । urine.

सर्वेष्वपि च मूत्रेषु गोमूत्रं गुणतोधिकम् ॥ ५ ॥
अतो विशेषात्कथितं मूत्रं गोमूत्रमुच्यते ।
प्लीहोदरश्वासकासशोथवर्चोग्रहापहम् ॥ ६ ॥
शूलगुल्मरुजानाहकामलापांडुरोगहृत् ।
कषायं तिक्ततीक्ष्णं च पूरणात्कर्णशूलनुत ॥ ७ ॥
नरमूत्रं गरं हंति सेवितं तद्रसायनम् ।
रक्तपामाहरं तीक्ष्णं सक्षारं लवणं स्मृतम् ॥ ८ ॥
गोजाविमहिषीणां तु स्त्रीणां मूत्रं प्रशस्यते ।
खरोष्ट्रेभनराश्वानां पुंसां मूत्रं हितं स्मृतम् ॥ ९ ॥

इति मूत्रवर्गः ।

तैलवर्गः ।

तिलादिस्निग्धवस्तूनां स्नेहस्तैलमुदाहृतम् ।
तत्तु वातहरं सर्वं विशेषात्तिलसंभवम् ॥ १ ॥
तिलतैलं गुरु स्थैर्य्यबलवर्णकरं सरम् ।
वृष्यं विकाशि विशदं मधुरं रसपाकयोः ॥ २ ॥
सूक्ष्मं कषायानुरसं तिक्तं वातकफापहम् ।
वीर्य्येणोष्णं हिमं स्पर्शे बृंहणं रक्तपित्तकृत् ॥ ३ ॥
लेखनं बद्धविण्मूत्रं गर्भाशयविशोधनम् ।
दीपनं बुद्धिदं मेध्यं व्यवायि व्रणमेहनुत् ॥ ४ ॥
श्रोत्रयोनिशिरःशूलनाशनं लघुताकरम् ।
त्वच्यं केश्यं च चक्षुष्यमभ्यंगे भोजनेन्यथा ॥ ५ ॥
छिन्नभिन्नच्युतोत्पिष्टमथितक्षतपिच्चिते ।
भग्नस्फुटितविद्धाग्निदग्धविश्लिष्टदारिते ॥ ६ ॥

१ हिं० भा० तेल । बं० भा० तल, तेल । फा० रोगनकुंजद । इं० भाष oil.

तथाभिहतनिर्भुग्नभग्नमृगव्याघ्रादिविक्षते।
वस्तौ पानेऽन्नसंस्कारे नस्ये कर्णाक्षिपूरणे॥ ७॥
सेकाभ्यंगावगाहेषु तिलतैलं प्रशस्यते।
वृतमब्दात्परं पक्कं हीनवीर्य्यं प्रजायते॥ ८
तैलं पक्कमपक्कं वा चिरस्थायि गुणाधिकम्।
दीपनं सार्षपं तैलं कटुपाकरसं लघु॥ ९॥
लेखनं स्पर्शवीर्य्योष्णं तीक्ष्णं पित्तास्रदूषकम्।
कफमेदोनिलार्शोघ्नं शिरःकर्णामयापहम्॥ १०॥
कंडुकुष्ठकृमिश्वित्रकोठदुष्टक्रिमिप्रणुत्।
तद्वद्राजिकयोस्तैलं विशेषान्मूत्रकृच्छ्रकृत्॥ ११॥
तीक्ष्णोष्णं तुवरीतैलं लघु ग्राहि कफास्रजित्।
वह्निकृद्विषहृत्कंडुकुष्ठकोठक्रिमिप्रणुत्॥ १२॥
मेदोदोषापहं चापि व्रणशोथहरं परम्।
अतसीतैलमाग्नेयं स्निग्धोष्णं कफपित्तकृत॥ १३॥
कटुपाकमचक्षुष्यं बल्यं वातहरं गरु।
मलकृद्रसतः स्वादु ग्राहि त्वग्दोषहृद्घनम्॥ १४॥
वस्तौ पाने तथाभ्यंगे नस्ये कर्णास्यपूरणे।
अनुपानविधौ चापि प्रयोज्यं वातशांतये॥ १५॥
कुसुंभतैलमम्लं स्यादुष्णं गुरु विदाहि च।
चक्षुर्भ्यामहितं वृष्यं रक्तपित्तकफप्रदम्॥ १६॥

---

१ दे० भा० राई, कृष्ण राई, रक्तराई। ननु बृंहणलेखनयोः कथं सामानाधिकरण्यमित्याह। रूक्षादिदुष्टपवनः स्रोतः संकोचयेद्यतः। रसोऽसम्यग्वहन् कार्श्यं कुर्याद्रक्ताद्यवर्द्धयन्॥ १॥ तेषु प्रवेष्टुं सरतासौक्ष्म्यस्निग्धत्वमार्दवैः। तैलं क्षमं रसं नेतुं कृशानां तेन बृंहणम्॥ २॥ व्यवायसूक्ष्मतीक्ष्णोष्णसरत्वैर्मेदसः क्षयम्। शनैः प्रकुरुते तैलं तेन लेखनमीरितम्॥ ३॥ द्रुतं पुरीषं बध्नाति स्खलितं तत्प्रवर्तयेत्। ग्राहकं सारकं चापि तेन तैलमुदीरितम्॥ ४॥

तैलं तु खसबीजानां बल्यं वृष्यं गुरु स्मृतम् ।
वातहृत्कफहृच्छीतं स्वादुपाकरसं च तत् ॥ १७ ॥
एरंडतैलं तीक्ष्णोष्णं दीपनं पिच्छिलं गुरु ।
वृष्यं त्वच्यं वयःस्थायि मेदःकांतिबलप्रदम् ॥ १८ ॥
कषायानुरसं सूक्ष्मं योनिशुक्रविशोधनम् ।
विस्रं स्वादु रसे पाके सतिक्तं कटुकं सरम् ॥ १९ ॥
विषमज्वरहृद्रोगपृष्ठगुह्यादिशूलनुत् ।
हंति वातोदरानाहगुल्माष्ठीलाकटिग्रहान् ॥ २० ॥
वातशोणितविड्बंधब्रध्नशोथामविद्रधीन् ।
आमवातगजेंद्रस्य शरीरवनचारिणः ॥ २१ ॥
एक एव निहंतायमेरंडस्नेहकेसरी ।
तैलं सर्जरसोद्भूतं विस्फोटव्रणनाशनम् ॥ २२ ॥
कुष्ठपामाकृमिहरं वातश्लेष्मामयापहम् ।
तैलं स्वयोनिगुणकृद्वाग्भटेनाखिलं स्मृतम् ॥ २३ ॥
अतः शेषस्य तैलस्य गुणा ज्ञेयाः स्वयोनिवत् ।

इति तैलवर्गः ।

मधुवर्गः ।

मधु ।

मधु माक्षिकमाध्वीकक्षौद्रसारघमीरितम् ।
मक्षिकावरटीभृंगवांतं पुष्परसोद्भवम् ॥ १ ॥
मधु शीतं लघु स्वादु रूक्षं ग्राहि विलेखनम् ।
चक्षुष्यं दीपनं स्वर्य्यं व्रणशोधनरोपणम् ॥ २ ॥
सौकुमार्य्यकरं सूक्ष्मं परं स्रोतोविशोधनम् ।
कषायानुरसं ह्लादि प्रसादजनकं परम् ॥ ३ ॥

१ दे० भा० शहत, मधु । बं० भा० मधु, मौ । फा० शहद, अगबीन । इं० हनी ।

वर्ण्यं मेधाकरं वृष्यं विशदं रोचनं हरेत् ।
कुष्ठार्शःकासपित्तास्रकफमेहक्लमक्रिमीन् ॥ ४ ॥
मेदस्तृष्णावमिश्वासहिक्कातीसारविड्ग्रहान् ।
दाहक्षतक्षयांस्तं तु योगवाह्यल्पवातलम् ॥ ५ ॥
माक्षिकं भ्रामरं क्षौद्रं पौत्तिकं छात्रमित्यपि ।
आर्घ्यमौद्दालकंदालमित्यष्टौ मधुजातयः ॥ ६ ॥
मक्षिकाः पिंगवर्णास्तु महत्यो मधुमक्षिकाः ।
ताभिः कृतं तैलवर्णं माक्षिकं परिकीर्तितम् ॥ ७ ॥
माक्षिकं मधुषु श्रेष्ठं नेत्रामयहरं लघु ।
कामलार्शःक्षतश्वासकासक्षयविनाशनम् ॥ ८ ॥
किंचित्सूक्ष्मैः प्रसिद्धेभ्यः षट्पदेभ्योऽलिभिश्चितम् ।
निर्मलं स्फटिकाभं यत्तन्मधु भ्रामरं स्मृतम् ॥ ९ ॥
भ्रामरं रक्तपित्तघ्नं मूत्रजाड्यकरं गुरु ।
स्वादुपाकमभिष्यंदि विशेषात्पिच्छिलं हिमम् ॥ १० ॥
मक्षिकाः कपिलाः सूक्ष्माः क्षुद्राख्यास्तत्कृतं मधु ।
मुनिभिः क्षौद्रमित्युक्तं तद्वर्णात्कपिलं भवेत् ॥ ११ ॥
गुणैर्माक्षिकवत् क्षौद्रं विशेषान्मेहनाशनम् ॥ १२ ॥
कृष्णा या मशकोपमा लघुतराः प्रायो महापिंडका
बध्नानास्तरुकोटरांतरगताः पुष्पासवं कुर्वते ।
तास्तज्ज्ञैरिह पुत्तिका निगदिताः ताभिः कृतं सर्पिषा
तुल्यं यन्मधु तद्वनेचरजनैः संकीर्तितं पौत्तिकम् ॥ १३ ॥
पौत्तिकं मधु रूक्षोष्णं पित्तदाहास्रवातकृत् ॥ १४ ॥
विदाहि मेहकृच्छस्तं ग्रंथ्यादिक्षतशोथिषु ।
वरटाः कपिलाः पीताः प्रायो हिमवतो वने ॥ १५ ॥
कुर्वंति छत्रकाकारं तज्जं छात्रं मधु स्मृतम् ।
छात्रं कपिलपीतं स्यात् पिच्छिलं शीतलं गुरु ॥ १६ ॥
स्वादुपाकं कृमिश्वित्ररक्तपित्तप्रमेहजित् ।

भ्रमतृण्मोहविषहृत्तर्पणं च गुणाधिकम् ॥ १७ ॥
मधूकवृक्षान्निर्यासं जरत्कार्वाश्रमोद्भवाः ।
स्रवंत्यार्घं तदाख्यातं श्वैतकं मालवे पुनः ॥ १८ ॥
तीक्ष्णतुंडास्तु याः पीता मक्षिकाः षट्पदोपमाः ।
अर्घास्तास्तत्कृतं यत्तु तदार्घ्यमितरे जगुः ॥ १९ ॥
आर्घ्यं मध्वतिचक्षुष्यं कफपित्तहरं परम् ।
कषायं कटुकं पाके तिक्तं च बलपुष्टिकृत् ॥ २० ॥
प्रायो वल्मीकमध्यस्थाः कपिलाः स्वल्पकीटकाः ।
कुर्वंति कपिलं स्वल्पं तत्स्यादौद्दालकं मधु ॥ २१ ॥
औद्दालकं रुचिकरं स्वर्य्यं कुष्ठविषापहम् ।
कषायमुष्णमम्लं च कटुपाकं च पित्तकृत् ॥ २२ ॥
संश्रुत्य पतितं पुष्पाद्यत्तु पत्रोपरि स्थितम् ।
मधुराम्लकषायं च तद्दालं मधु कीर्तितम् ॥ २३ ॥
दालं मधु लघु प्रोक्तं दीपनीयं कफापहम् ।
कषायानुरसं रूक्षं रुच्यं प्रच्छर्दिं मेहजित् ॥ २४ ॥
अधिकं मधुरं स्निग्धं बृंहणं गुरु भारिकम्[1] ।
नवं मधु भवेत्पुष्ट्यै नातिश्लेष्महरं सरम् ॥ २५ ॥
पुराणं ग्राहकं रूक्षं मेदोघ्नमतिलेखनम् ।
मधुनः शर्करायाश्च गुडस्यापि विशेषता ॥ २६ ॥
एकसंवत्सरेऽतीते पुराणत्वं स्मृतं बुधैः ।
विषपुष्पादपि रसं सविषा भ्रमरादयः ॥ २७ ॥
गृहीत्वा मधु कुर्वंति तच्छीते गुणवन्मधु ।
विषान्वयात्तदुष्णं तु द्रव्येणोष्णेन वा सह ॥ २८ ॥
उष्णार्तस्योष्णकाले च स्मृतं विषसमं मधु ।
मयनं[2] तु मधूच्छिष्टं मधुशेषं च सिक्थकम् ॥ २९ ॥

१ लघु पाके, गुरु भारिकं तुलितम् । २ दे० भा० मोम । वं० भा० मोम । फा० मोमे जर्द । इं० ऐलोबेक्स ।

मध्वाधारो मदनकं मधूषितमपि स्मृतम्।
मदनं तु मृदु स्निग्धं भूतघ्नं व्रणरोपणम्॥ ३०॥
भग्नसंधानकृद्वातकुष्ठवीसर्परक्तजित्।

इति मधुवर्गः।

इक्षुवर्गः।

इक्षुः।

इक्षुर्दीर्घच्छदः प्रोक्तस्तथा भूमिरसोऽपि च।
गुडमूलोऽसिपत्रश्च तथा मधुतृणः स्मृतः॥ १॥
इक्षवो रक्तपित्तघ्ना बल्या वृष्याः कफप्रदाः।
स्वादुपाकरसाः स्निग्धा गुरवो मूत्रला हिमाः॥ २॥
पौंड्रको भीरुकश्चापि वंशकः शतपोरकः।
कांतारस्तापसेक्षुश्च काष्ठेक्षुः सूचिपत्रकः॥ ३॥
नैपालो दीर्घपत्रश्च नीलपोरोऽप्यकोशकृत्।
इत्येता जातयस्तेषां कथयामि गुणानपि॥ ४॥
वातपित्तप्रशमनो मधुरो रसपाकयोः।
सुशीतो बृंहणो बल्यः पौंड्रको भीरुकस्तथा॥ ५॥
कोशकारो गुरुः शीतो रक्तपित्तक्षयापहः।
कांतारेक्षुर्गुरुर्वृष्यः श्लेष्मलो बृंहणः सरः॥ ६॥
दीर्घपोरः सुकठिनः सक्षारो वंशकः स्मृतः।
शतपोरो भवेत्किंचित्कोशकारगुणान्वितः॥ ७॥
विशेषात्किंचिदुष्णश्च सक्षारः पवनापहः।
तापसेक्षुर्भवेन्मृद्वी मधुरा श्लेष्मकारिणी॥ ८॥

---

१ दे० भा० गन्ना। गंडा। बं० भा० आक। कुशिर। फा० नेशकर इं० श्युगरकेन sugar cane.

काष्ठेक्षुः[1] ।

एवंगुणैस्तु काष्ठेक्षुः स तु वातप्रकोपनः ॥ ९ ॥
सूचीपत्रो[2] नीलपोरो नैपालो दीर्घपत्रकः ।
वातलाः कफपित्तघ्नाः सकषाया विदाहिनः ॥ १० ॥
मनोगुप्ता[3] वातहरी तृष्णामयविनाशिनी ।
सुशीता मधुरातीव रक्तपित्तप्रणाशिनी ॥ ११ ॥
बाल इक्षुः कफं कुर्य्यान्मेदोमेहकरश्च सः ।
युवा तु वातहृत्स्वादुरीषत्तीक्ष्णश्च पित्तनुत् ॥ १२ ॥
रक्तपित्तहरो वृद्धः क्षयहृद्बलवीर्य्यकृत् ।
मूले तु मधुरोऽत्यर्थं मध्येऽपि मधुरः स्मृतः ॥ १३ ॥
अग्रे ग्रंथिषु विज्ञेय इक्षुः पटुरसो जनैः ।
दंतनिष्पीडितस्येक्षो रसः पित्तास्रनाशनः ॥ १४ ॥
शर्करासमवीर्य्यः स्यादविदाही कफप्रदः ।
मूलाग्रजं तु ग्रंथ्यादिपीडनान्मलसंकरात् ॥ १५ ॥
किंचित्कालविधृत्या च विकृतिं याति यांत्रिकः ।
तस्माद्विदाही विष्टंभी गुरुः स्याद्यांत्रिको रसः ॥ १६ ॥
रसः पर्य्युषितो नेष्टो ह्यम्लो वातापहो गुरुः ।
कफपित्तकरः शोषी भेदनश्चातिमूत्रलः ॥ १७ ॥
पक्को रसो गुरुः स्निग्धः सतीक्ष्णः कफवातनुत् ।
गुल्मानाहप्रशमनः किंचित्पित्तकरःस्मृतः ॥ १८ ॥
इक्षोर्विकारास्[4]तृड्दाहमूर्च्छापित्तास्रनाशनाः ।
गुरवो मधुरा बल्याः स्निग्धा वातहराः सराः ॥ १९ ॥
वृष्या मोहहराः शीता बृंहणा विषहारिणः ।

फाणितम्[5] ।

इक्षो रसस्तु यः पक्कः किंचिद्गाढो बहुद्रवः ॥ २० ॥

---

१ दे० भा० काठागन्ना २ दे० भा० कालापोंडा । ३ दे० भा० मुसारी मुद्धारी । ४ इक्षुविकाराः । इक्षो रसस्य समलं त्र्यंशद्वयंत्रिमलामलाः । विकाराः फाणित-गुडमत्स्यंडीखडशर्कराः ॥ ५ दे० भा० राव । ढरका । छोवा ॥

स एवेक्षुविकारेषु ख्यातः फाणितसंज्ञया ।
फाणितं गुर्वभिष्यंदि बृंहणं कफशुक्रकृत् ॥ २१ ॥
वातपित्तश्रमान्हंति मूत्रवस्तिविशोधनम् ।
इक्षो रसो यः संपक्वो घनः किंचिद्द्रवान्वितः ॥ २२ ॥
मंदं यत्स्यंदते तस्मान्मत्स्यंडीति निगद्यते ।
मत्स्यंडी भेदनी बल्या लघ्वी पित्तानिलापहा ॥ २३ ॥
मधुरा बृंहणी वृष्या रक्तदोषापहा स्मृता ।

गुडम् ।

इक्षो रसो यः संपक्वो जायते लोष्ठवद्दृढम् ॥ २४ ॥
स गुडो गौडदेशे तु मत्स्यंडयेव गुडो मतः ।
गुडो वृष्यो गुरुः स्निग्धो वातघ्नो मूत्रशोधनः ॥ २५ ॥
नातिपित्तहरो मेदःकफक्रिमिवलप्रदः ।
गुडो जीर्णो लघुः पथ्योऽनभिष्यंद्यग्निपुष्टिकृत् ॥ २६ ॥
पित्तघ्नो मधुरो वृष्यो वातघ्नोऽसृक्प्रसादनः ।
गुडो नवः कफश्वासकासकृमिकरोऽग्निकृत् ॥ २७ ॥
श्लेष्माणमाशु विनिहंति सदार्द्रकेण
पित्तं निहंति च तदेव हरीतकीभिः ।
शुंठ्या समं हरति वातमशेषमित्थं
दोषत्रयक्षयकराय नमो गुडाय ॥ २८ ॥

खंडम् ।

खंडं तु मधुरं वृष्यं चक्षुष्यं बृंहणं हिमम् ।
वातपित्तहरं स्निग्धं बल्यं वांतिहरं परम् ॥ २९ ॥

---

१ दे० भा० गुड । वं० भा० गुड । फा० कंदेस्याह । इं० ट्रीकलमौलासीस । नामानि—गुडः स्यादिक्षुसारस्तु मधुरो रसपाकजः । शिशुप्रियः सितादिः स्यादरुणो रसजः स्मृतः ॥ १ ॥ २ दे० भा० खांड । वं०भा० खांड । फा० सक्कर । इं० श्युगर । (तुरंजबीन) यवासशर्करा शीता रसे स्वाद्वी कषायका । वृष्या तिक्ता च मधुरा भ्रमं पित्तं तृषां जयेत् ॥ २ ॥

सिता ।

खंडं तु सिकतारूपं सुश्वेता शर्करा सिता ।
सिता सुमधुरा रुच्या वातपित्तास्रदाहनुत् ॥ ३० ॥
मूर्च्छाछर्दिज्वरान् हंति सुशीता शुक्रकारिणी ॥ ३१ ॥

पुष्पसिता ।

शीता पुष्पसिता वृष्या रक्तपित्तहरी लघुः ॥ ३२ ॥

सितोपला ।

सितोपला सरा लघ्वी वातपित्तहरी हिमा ।
मधुजा शर्करा रूक्षा कफपित्तहरी गुरुः ॥ ३३ ॥
छर्द्यतीसारतृट्दाहरक्तहृत्तुवरा हिमा ।
यथायथा स्यान्नैर्मल्यं मधुरत्वं यथायथा ॥ ३४ ॥
स्नेहलाघवशैत्यानि सरत्वं च तथातथा ।

इति इक्षुवर्गः ।

संधानवर्गः ।

संधितं धान्यमंडादि कांजिकं कथ्यते जनैः ।
कांजिकं भेदि तीक्ष्णोष्णं रोचनं पाचनं लघु ॥ १ ॥
दाहज्वरहरं स्पर्शात्पानाद्वातकफापहम् ।
माषादिवटकैर्युक्तं क्रियते तद्गुणाधिकम् ॥ २ ॥
लघुवातहरं तत्तु रोचनं पाचनं परम् ।
शूलाजीर्णविबंधामनाशनं वस्तिशोधनम् ॥ ३ ॥
शोषमूर्च्छाभ्रमार्तानां मदकंडुविशोषिणाम् ।
कुष्ठिनां रक्तपित्तानां कांजिकं न प्रशस्यते ॥ ४ ॥

---

१ दे० भा० बूरा मिश्री बं० भा० चिनी । मिशरी ॥ फा० खरी सकर नबात । इं० स्युगरकेंडी । २ फूल की मिलाई हुई । गुलखंड गुलकन्द । ३ कूंजेकी मिसरी । ४ मधुकी बनाई हुई । शर्करा मीनिडी शुक्ला सिता च वालुकात्मजा । अहिच्छत्रा तु सिकता शुद्धा शुभ्रा सितोपला ॥

पांडुरोगे यक्ष्मरोगे तथा शोषातुरेषु च।
क्षतक्षीणे तथा श्रांते मंदज्वरनिपीडिते ॥ ५ ॥
एतेषां त्वहितं प्रोक्तं कांजिकं दोषकारकम्।
तुषोदकं यवैरामैः सतुषैः शकलीकृतैः ॥ ६ ॥
तुषांबु दीपनं हृद्यं पांडुक्रिमिगदापहम्।
तीक्ष्णोष्णं पाचनं पित्तरक्तकृद्वस्तिशूलनुत् ॥ ७ ॥
सौवीरं तु यवैरामैः पक्वैर्वा निस्तुषैः कृतम्।
गोधूमैरपि सौवीरमाचार्य्याः केचिदूचिरे ॥ ८ ॥
सौवीरं तु ग्रहण्यर्शःकफघ्नं भेदि दीपनम्।
उदावर्तांगमर्दास्थिशूलानाहेषु शस्यते ॥ ९ ॥
आरनालं तु गोधूमैरामैः स्यान्निस्तुषीकृतैः।
पक्वैर्वा संधितैस्तत्तु सौवीरसदृशं गुणैः ॥ १० ॥
धान्याम्लं शालिचूर्णाच्च कोद्रवादिकृतं भवेत्।
धान्याम्लं धान्ययोनित्वात्प्रीणनं लघु दीपनम् ॥ ११ ॥
अरुचौ वातरोगेषु सर्वेष्वास्थापने हितम्।
शंडाकीराजिकायुक्तैः स्यान्मूलकदलद्रवैः ॥ १२ ॥
सर्षपस्वरसैर्वापि शालिपिष्टकसंयुतैः।
शंडाकी रोचनी गुर्वी पित्तश्लेष्मकरी स्मृता ॥ १३ ॥
कंदमूलफलादीनि सस्नेहलवणानि च।
यत्र द्रवेऽभिषूयंते तच्छुक्तमभिधीयते ॥ १४ ॥
शुक्तं कफघ्नं तीक्ष्णोष्णं रोचनं पाचनं लघु।
पांडुक्रिमिहरं रूक्षं भेदनं रक्तपित्तकृत् ॥ १५ ॥
कंदमूलफलाढ्यं यत्तत्तु विज्ञेयमासुतम्।
मद्रुच्यं पाचनं वातहरं लघु विशेषतः ॥ १६ ॥
मद्यं तु सीधुमैरेयमिरा च मदिरा सुरा।
कादंबरी वारुणी च हालापि बलवल्लभा ॥ १७ ॥

---

१ यवैः उदकसंहितैः संधानवर्गोक्तत्वात्।

पेयं यन्मादकं लोके तन्मद्यमभिधीयते ।
यथारिष्टं सुरासीधुरासवाद्यमनेकधा ॥ १८ ॥
मद्यं सर्वं भवेदुष्णं पित्तकृद्वातनाशनम् ।
भेदनं शीघ्रपाकं च रूक्षं कफहरं परम् ॥ १९ ॥
अम्लं च दीपनं रुच्यं पाचनं चाशुकारि च ।
तीक्ष्णं सूक्ष्मं च विशदं व्यवायि च विकाशि च ॥ २० ॥

अरिष्टम्[1] ।

पक्वौषधांबुसिद्धं यन्मद्यं तत्स्यादरिष्टकम् ।
अरिष्टं लघुपाकेन सर्वतश्च गुणाधिकम् ॥ २१ ॥
अरिष्टस्य गुणा ज्ञेया बीजद्रव्यगुणैः समाः ।
शालिषष्टिकपिष्टाद्यैः कृतं मद्यं सुरा स्मृता ॥ २२ ॥
सुरा गुर्वी बलस्तन्यपुष्टिमेदःकफप्रदा ।
ग्राहिणी शोथगुल्मार्शोग्रहणीमूत्रकृच्छ्रनुत् ॥ २३ ॥
पुनर्नवाशालिपिष्टिविहिता वारुणी स्मृता ।
संहितैस्तालखर्जूररसैर्या सापि वारुणी ॥ २४ ॥
सुरावद्वारुणी[2] लघ्वी पीनसाध्मानशूलनुत् ।
इक्षोः पक्वै रसैः सिद्धः सीधुः पक्वरसश्च सः ॥ २५ ॥
आमैस्तैरेव यः सीधुः स च शीतरसः स्मृतः ।
सीधुः पक्वरसः श्रेष्ठः स्वराग्निबलवर्णकृत् ॥ २६ ॥
वातपित्तकरः सद्यः स्नेहनो रोचनो हरेत् ।
विबंधमेदःशोफार्शःशोषोदरकफामयान् ॥ २७ ॥
तस्मादल्पगुणः शीतरसः संलेखनः स्मृतः ।
यदपक्वौषधांबुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः[3] ॥ २८ ॥

---

१ अरिष्टं मद्यमिति लोके । यथा द्राक्षारिष्टं, दशमूलारिष्टं, बबूलारिष्टम् ।
२ सुरातो भेदार्थं लघ्वीति । ३ यथा लोहासवादिः । आसवस्य गुणा ज्ञेया बीजद्रव्यगुणैः समाः ।

मद्यं नवमभिष्यंदि त्रिदोषजनकं सरम् ।
अहृद्यं बृंहणं दाहि दुर्गंधं विशदं गुरु ॥ २९ ॥
जीर्णं तदेव रोचिष्णु कृमिश्लेष्मानिलापहम् ।
हृद्यं सुगंधि गुणवल्लघु स्रोतोविशोधनम् ॥ ३० ॥
सात्त्विके गीतहास्यादि राजसे साहसादिकम् ।
तामसे निंद्यकर्माणि निद्रां च मदिरी चरेत् ॥ ३१ ॥
विधिना मात्रया काले हितैरन्नैर्यथाबलम् ।
प्रहृष्टो यः पिबेन्मद्यं तस्य स्यादमृतोपमम् ॥ ३२ ॥

गंधनाशः ।

मुस्तैलवालगुडजीरकधान्यकैला
यश्चर्वयन् सदसि वाचमभिव्यनक्ति ।
स्वाभाविकं मुखजमुज्झति पूतिगंधं
गंधं च मद्यलशुनादिभवं च नूनम् ॥ ३३ ॥

इति संधानवर्गः ।

द्रव्यपरीक्षा ।

सूक्ष्मास्थिमांसला पथ्या सर्वकर्मणि पूजिता ।
क्षिप्तांभसि निमज्जेद्या भल्लातक्यस्तथोत्तमाः ॥ १ ॥
वाराहमूर्द्धवत्कंदो वाराहीकंदसंज्ञकः ।
सौवर्चलं तु काचाभं सैंधवं स्फटिकप्रभम् ॥ २ ॥
सुवर्णच्छविकं ज्ञेयं स्वर्णमाक्षिकमुत्तमम् ।
इंद्रगोपप्रतीकाशं मनोह्वा चोत्तमा मता ॥ ३ ॥
श्रेष्ठं शिलाजतु ज्ञेयं प्रक्षिप्तं न विशीर्यते ।
तोयपूर्णे कांस्यपात्रे प्रतानेन विवर्द्धते ॥ ४ ॥
कर्पूरस्तुवरः स्निग्धः एला सूक्ष्मफला वरा ।
श्वेतचन्दनमत्यंतं सुगन्धि गुरु पूजितम् ॥ ५ ॥

---

१ गुडतज्जीमोथा । वा गुडत्वक् । दालचीनी ।

रक्तचन्दनमत्यंतं लोहितं प्रवरं मतम् ।
काकतुंडानिभः स्निग्धो गुरुः श्रेष्ठोऽगुरुर्मतः ॥ ६ ॥
सुगंधि लघु रूक्षं च सुरदारु वरं मतम् ।
सरलं स्निग्धमत्यर्थं सुगंधि च गुणावहम् ॥ ७ ॥
आतिपीता प्रशस्ता तु ज्ञेया दारुनिशा बुधैः ।
जातीफलं गुरु स्निग्धं समं शुभ्रांतरं वरम् ॥ ८ ॥
मृद्वीका सोत्तमा ज्ञेया या स्याद्गोस्तनसन्निभा ।
करमर्दफलाकारा मध्यमा सा प्रकीर्तिता ॥ ९ ॥
खंडं तु विमलं श्रेष्ठं चन्द्रकान्तिसमप्रभम् ।
गव्याज्यसदृशं गंधं रुच्यं मधु वरं स्मृतम् ॥ १० ॥

स्वभावतो हितानि ।

शालीनां लोहिता शाली षष्टिकेषु च षष्टिका ।
शूकधान्येष्वपि यवो गोधूमः प्रवरो मतः ॥ ११ ॥
शिंबिधान्ये वरो मुद्गो मसूरश्चाढकी तथा ।
रसेषु मधुरः श्रेष्ठो लवणेषु च सैंधवम् ॥ १२ ॥
दाडिमामलकं द्राक्षा खर्जूरं च परूषकम् ।
राजादनं मातुलुंगं फलवर्गे प्रशस्यते ॥ १३ ॥
पत्रशाकेषु वास्तूकं जीवंती पोत्तिका वरा ।
पटोलं फलशाकेषु कंदशाकेषु सूरणम् ॥ १४ ॥
एणः कुरंगो हरिणो जांगलेषु प्रशस्यते ।
पक्षिणां तित्तिरी लावो वरो मत्स्येषु रोहितः ॥ १५ ॥
जलेषु दिव्यं दुग्धेषु गव्यमाज्येषु गोभवम् ।
तैलेषु तिलजं तैलमैक्षवेषु सिता हिता ॥ १६ ॥

---

१ दे० भा० मुनक्का । २ दे० भा० करौंदी दाख किसमिस । ३ दे० भा० फालसा खिरणी । ४ दे० भा० बिजौरा । ५ हरिणस्ताम्रवर्णः स्यात् एणः कृष्णतया मतः । कुरंगस्ताम्र उद्दिष्टो हरिणाकृतिको महान् ।

स्वभावादहितानि।

शिंबीषु माषान् ग्रीष्मर्तौ लवणेष्वौषरं त्यजेत्।
फलेषु लकुचं शाके सार्षपं न हितं मतम्॥ १७॥
गोमांसं ग्राम्यमांसेषु न हिता महिषीव सा।
मेषीपयः कुसुंभस्य तैलं त्याज्यं च फाणितम्[1]॥ १८॥

संयोगविरुद्धानि।

मत्स्यमानूपमांसं च दुग्धयुक्तं विवर्जयेत्॥।
कपोतं सर्षपस्नेहभर्जितं परिवर्जयेत्॥ १९॥
मत्स्यानीक्षुविकारेण तथा क्षौद्रेण वर्जयेत्।
सक्तून्मांसपयोयुक्तानुष्णैर्दधि विवर्जयेत्॥ २०॥
उष्णैर्नभोंबुना क्षौद्रं पायसं कृशरान्वितम्॥ २१॥
दशाहमुषितं सर्पिः कांस्ये मधुघृतं समम्।
कृतान्नं च कषायं च पुनरुष्णीकृतं त्यजेत्॥ २२॥
एकत्र बहुमांसानि विरुध्यंते परस्परम्।
मधु सर्पिर्वसा तैलं पानीयं वा पयस्तथा॥ २३॥

भेषजसंकेतः।

लवणं सैंधवं प्रोक्तं चन्दनं रक्तचन्दनम्।
चूर्णलेहासवस्नेहाः साध्या धवलचन्दने॥ २४॥
कषायलेपयोः प्रायो युज्यते रक्तचन्दनम्।
अंतःसम्मार्जने ज्ञेया ह्यजमोदा यवानिका॥ २५॥
बहिःसंमार्जने सैव विज्ञातव्याऽजमोदिका।
पयःसर्पिःप्रयोगेषु गव्यमेव हि गृह्यते॥ २६॥
शकृद्रसो गोमयकं मूत्रं गोमूत्रमुच्यते।

प्रतिनिधिः।

चित्रकाभावतो दंती क्षारः शिखरिजो[2]ऽथवा॥ २७॥

---

१ फाणितं, छोया, राब। २ शिखरि, अपामार्गः।

अभावे धन्वयासस्य प्रक्षेप्या तु दुरालभा ।
तगरस्याप्यभावे तु कुष्ठं दद्याद् भिषग्वरः ॥ २८ ॥
मूर्वाभावे त्वचो ग्राह्या जिंगनीप्रभवा बुधैः ।
अहिंस्राया अभावे तु मानकन्दः प्रकीर्तितः ॥ २९ ॥
लक्ष्मणाया अभावे तु नीलकंठशिखा मता ।
बकुलाभावतो देयं कह्लारोत्पलपंकजम् ॥ ३० ॥
नीलोत्पलस्याभावे तु कुमुदं देयमिष्यते ।
जातीपुष्पं न यत्रास्ति लवंगं तत्र दीयते ॥ ३१ ॥
अर्कपर्णादि पयसो ह्यभावे तद्रसो मतः ।
पौष्कराभावतः कुष्ठं तथा लांगल्यभावतः ॥ ३२ ॥
स्थौणेयकस्याभावे तु भिषग्भिर्दीयते गदः ।
चविकागजपिप्पल्यौ पिप्पलीमूलवत् स्मृतौ ॥ ३३ ॥
अभावे सो[1]मराज्यास्तु प्र[2]पुन्नाटफलं मतम् ।
यदि न स्याद्दारु[3]निशा तदा देया नि[4]शा बुधैः ॥ ३४ ॥
रसांजनस्याभावे तु सम्यग् दार्वी प्रयुज्यते ।
सौ[5]राष्ट्र्यभावतो देया स्फुटिका तद्गुणा जनैः ॥ ३५ ॥
तालीसपत्रकाभावे स्वर्णताली प्रशस्यते ।
भार्ग्यभावे तु तालीसं कंटकारी जटाथवा ॥ ३६ ॥
रु[6]चिकाभावतो दद्यात् लवणं पांसुपूर्वकम् ।
अभावे मधुयष्ट्यास्तु धातकीं च प्रयोजयेत् ॥ ३७ ॥
अम्लवेतसकाभावे चुक्रं दातव्यमिष्यते ।
द्राक्षा यदि न लभ्येत प्रदेयं काश्मरीफलम् ॥ ३८ ॥
तयोरभावे कुसुमं बन्धूकस्य मतं बुधैः ।
लवंगकुसुमं देयं नखस्याभावतः पुनः ॥ ३९ ॥

---

१ सोमराजी, बाकुची । २ चक्रमर्दफलम् । ३ दारुहल्दी । ४ हरिद्रा । ५ सोरठ मटी, स्फुटिका, फटकरी । ६ रुचकं, चौहार ।

कस्तूर्य्यभावे कक्कोलं क्षेपणीयं विदुर्बुधाः ।
कक्कोलस्याप्यभावे तु जातीपुष्पं प्रदीयते ॥ ४० ॥
सुगन्धिमुस्तकं देयं कर्पूराभावतो बुधैः ।
कर्पूराभावतो देयं ग्रन्थिपर्णं विशेषतः ॥ ४१ ॥
कुंकुमाभावतो दद्यात्कुसुंभकुसुमं नवम् ।
श्रीखंडचन्दनाभावे कर्पूरं देयमिष्यते ॥ ४२ ॥
अभावे त्वेतयोर्वैद्यः प्रक्षिपेद्रक्तचंदनम् ।
रक्तचन्दनकाभावे नवोशीरं विदुर्बुधाः ॥ ४३ ॥
मुस्ता चातिविषाभावे शिवाभावे शिवा मता ।
अभावे नागपुष्पस्य पद्मकेसरमिष्यते ॥ ४४ ॥
मेदाजीवककाकोली ऋद्धिद्वंद्वेऽपि चासति ।
वरीविदार्य्यश्वगंधावाराहीश्च क्रमात् क्षिपेत् ॥ ४५ ॥
वाराह्याश्च तथाभावे चर्मकारालुको मतः ।
वाराहीकंदसंज्ञस्तु पश्चिमे गृष्टिसंज्ञकः ॥ ४६ ॥
वाराहीकंद एवान्यश्चर्मकारालुको मतः ।
अनूपे स भवेद्देशे वाराह इव लोमवान् ॥ ४७ ॥
भल्लातकासहत्वे तु रक्तचंदनमिष्यते ।
भल्लाताभावतश्चित्रं नलश्चेक्षोरभावतः ॥ ४८ ॥
सुवर्णाभावतः स्वर्णमाक्षिकं प्रक्षिपेद्बुधः ।
श्वेतं तु माक्षिकं ज्ञेयं बुधैराजतवद्ध्रुवम् ॥ ४९ ॥
माक्षिकस्याप्यभावे तु प्रदद्यात् स्वर्णगैरिकम् ।
सुवर्णमथवा रौप्यं मृतं यत्र न लभ्यते ॥ ५० ॥
तत्र कांतेन कर्माणि भिषक्कुर्याद्विचक्षणः ।
कांताभावे तीक्ष्णलोहं योजयेद्वैद्यसत्तमः ॥ ५१ ॥
अभावे मौक्तिकस्यापि मुक्ताशुक्तिं प्रयोजयेत् ।
मधु यत्र न लभ्येत तत्र जीर्णगुडो मतः ॥ ५२ ॥

---

१ दे० भा० शितावरी ।

मत्स्यंडयभावतो दद्युर्भिषजः सितशर्कराम् ।
असंभवे सितायास्तु बुधः खंडं प्रयोजयेत् ॥ ५३ ॥
क्षीराभावे रसो मौद्गो मासूरो वा प्रदीयते ।
अत्र प्रोक्तानि वस्तूनि यानि तेषु च तेषु च ॥ ५४ ॥
योज्यमेकतराभावे परं वैद्येन जानता ।
रसवीर्य्यविपाकाद्यैः समं द्रव्यं विचिंत्य च ॥ ५५ ॥
युंज्याद्द्विविधमन्यद्वा द्रव्याणां तु रसादिवित् ।
योगे यदप्रधानं स्यात्तस्य प्रतिनिधिर्मतः ॥ ५६ ॥
यत्तु प्रधानं तस्यापि सदृशं नैव गृह्यते ॥

इति द्रव्यपरीक्षादिवर्गः ।

अनेकार्थवर्गः ।

अश्मंतकः । अम्लांणिका । कोविदारश्च ॥ कुलकः[1] पटोलः । कुपीलुः । कोशातकी । महाकोशातकी । राजकोशातकी च ॥ चुक्रिका । अम्लिका । चांगेरी च ॥ तिंतिडीकम् । वृक्षाम्लाम्लिका च ॥ दीप्यका । यवान्यजमोदा च ॥ मरुवकः । फणिज्जकः । पिंडीतकश्च ॥ रुचकम् । सौवर्चलम् । बीजपूरकं च ॥ लोणिका । लोणीशाकं- चांगेरीशाकं च ॥ बाल्हीकम् । कुंकुमम् । हिंगु च ॥ स्वादुकंटकः । गोक्षुरोविकंकितश्च ॥ अग्निमुखी । भल्लातकी लांगली च ॥ अग्निशिखम् । कुंकुमम् । कुसुंभश्च ॥ अजशृंगी । मेषशृंगी । कर्कटशृंगी च ॥ प्रियंगुः । फलिनी । कंगुश्च ॥ भृंगः । भृंगराजस्त्वक् च ॥ समंगा । मंजिष्ठा । लज्जालुश्च ॥ अमोघा । विडंगम् । पाटला च ॥ मोचा । कदली । शाल्मलिश्च ॥ कुटन्नटः । स्योनाकः । कैवर्ती । मुस्तं च ॥ कनटी ।

---

१ कुचला । २ महुआ । ३ मैनफल ।

धनिका । मनःशिला च ॥ घोंटा । पूगः । बदरी च ॥ त्रिपुटा । त्रिवृत् । बृहदेला च ॥ शटी । कर्चूरः । गंधपलाशी च ॥ दंतशठः । जंबीरः । कपित्थश्च ॥ दंतशठा । आम्लिका । चांगेरी च ॥ अरुणा । मंजिष्ठा । अतिविषा च ॥ कणा पिप्पली । जीरकं च ॥ तालपर्णी । मुसली । मुरा च ॥ पीलुपर्णी । मूर्वा । बिंबी च । ब्राह्मी । भार्गी । स्पृक्का च ॥ अपराजिता । विष्णुक्रांता । शालपर्णी च ॥ आस्फोता । अपराजिता । शारिवा च ॥ पारावतपदी । ज्योतिष्मती । काकजंघा च ॥ शारदी । शारिवा । जलपिप्पली च । उग्रगंधा । वचा । यवानी च ॥ परिव्याधः । कर्णिकारः । जलवेतसश्च ॥ अंजनम् । स्रोतोंजनम् । सौवीरं च ॥ अग्निः । चित्रकः । भल्लातकश्च ॥ क्रिमिघ्नः । विडंगः । हारिद्रा च ॥ तेजनः शरः । वेणुश्च । तेजनी । तेजोवती । मूर्वा च ॥ रोचना । गोरोचना । रक्तोत्पलं च ॥ राजादनम् । क्षीरिका । प्रियालश्च ॥ शकुलादनी । कटुका । जलपिप्पली च ॥ गोलोमी श्वेतदूर्वा । वचा । पद्मा । पद्मचारिणी । भार्गी च ॥ श्यामा । सारिवा । प्रियंगुश्च ॥ उत्तमा । त्रिफला । सर्वतोभद्रा च ॥ धान्यं धान्याकं शाल्यादि च ॥ सहस्रवीर्य्या । नीलदूर्वा । महाशतावरी च ॥ सेव्यम् । उशीरम् । लामज्जकं च ॥ उदुंबरः । जंतुफलः । ताम्रं च ॥ ऐंद्री । इंद्रवारुणी । इंद्राणी च ॥ कटंभरा । कटुका । स्योनाकं च । क्षारः । यवक्षारः । स्वर्णिका च ॥ गांधारी । दुरालभा । गंधपलाशी च ॥ चित्रा । इंद्रवारुणी बृहद्दंती च ॥ तुंडकेशी । कर्पासी । बिंबा च ॥ धारा । गुडूची । क्षीरकाकोली च ॥ बालपत्रः । खदिरः । यवासश्च ॥ वारि । बालकम् । उदकं च ॥ अंगारवल्ली । भार्गी । गुंजा च ॥ अमृणालम् । उशीरम् । लामज्जकं च ॥ कुंडली । गुडूची । कोविदारश्च ॥ गंधफली ।

प्रियंगुः। चंपककलिका च ॥ दीर्घमूलः । यवासः।शालपर्णी च॥ पुष्पफलः । कपित्थः। कूष्मांडश्च ॥ पोटगलः। नलः। कासश्च ॥ यवफलः । कुटजो । वंशश्च ॥ विश्वा । शुंठ्यातिविषा च ॥ शीताशिवम् । सैंधवम् । मिश्रेया च ॥ कर्कशः । कंपिल्लः । कासमर्दश्च ॥ चर्मकषा । शातला।मांसरोहिणी च॥ नंदिवृक्षः । अश्वत्थभेदः। तुणिश्च । पयः। क्षीरमुदकं च॥स्पृहा । दूर्वा।मांसरोहिणी च॥सिंही। बृहती वासा च ॥ कतकम् । विडलवणम् निर्मलीफलं च ॥ कंटकाढ्यः । कुब्जकः। शाल्मली च ॥ यक्षधूपः । सरलानिर्यासः रालश्च॥द्राविडी । शटी । सूक्ष्मैला च ॥ हट्टविलासिनी । हरिद्रा । नखी च॥ तिलपर्णं । रक्तचंदनम् । ग्रंथिपर्णं च ॥ मधुरः । जीवकः । जीवनीयगणश्च ॥ लोहद्रावणी । गंडदूर्वा । अम्लवेतसश्च ॥ नागिनी । तांबूली । नागपुष्पी च ॥ मृदुरेचनी । त्रिवृत् । मार्कंडिका च ॥ नटः । श्योनाकः । अशोकश्च ॥ वनस्पतिः । वटः । नंदिवृक्षश्च ॥ मंदारः। श्वेतार्कः।महानिंबश्च ॥ अंबुजः। कमलम् । इज्जलश्च ॥ कवरी । वर्वरी । हिंगुपत्री च ॥ कुमारी । घृतकुमारिका । शतपत्री च ॥ वरतिक्तकः । पाठा। पर्पटश्च ॥ चित्रकः। पाठा । अनलनामा च ॥ यज्ञियः । खादिरः । पलाशश्च ॥ रक्तबीजः । अरिष्टकः । कंदूरी च ॥ क्षारश्रेष्ठः। पलाशः । मोक्षकश्च॥श्वेतपुष्पः । श्वेतार्कः। इंद्रवारुणी च ॥ तुवरी । सौराष्ट्री । आढकी च ॥ कुंभिका । पूगफला । वारिपर्णी च॥ राजपुत्रिका। रेणुका। जाती च॥ रक्तपुष्पः । रक्तार्कः । कंदूरी च ॥ सतला शातला । वासंती च ॥ विषमुष्टिकः । महानिंबः । विषतिंदुकश्च ॥ रक्तफला । स्वर्णवल्ली। वचश्च॥चंद्रहासा । गुडूची । लक्ष्मणा च ॥

---

१ अधोमुख पत्रशाखः । वेलिया पीपर ॥

त्र्यर्थकम्।

क्रमुकः। पूगः। तूदः। पट्टिकालोध्रश्च॥ क्षुरकः। कोकि-लाक्षः। गोक्षुरः। तिलकपुष्पं च॥प्रियकः। प्रियंगुः। कदंबोऽ-सनश्च॥पृथ्वीका। कालाजाजी।बृहदेला। हिंगुपत्री च॥ भती-कम्। भूनिंबः। कत्तृणम्। भूस्तृणाश्च॥ सोमवल्कः। कट्फलः। खदिरः।घृतपूर्णकरंजश्च॥सौगंधिकम्।कह्लारम्। कत्तृणम्। गंधकं च॥ भृंगः। भृंगराजः।त्वक्भ्रमरश्च॥अरिष्टः। निंबः। रसोनम्। मद्यं च॥ मर्कटी। कपिकच्छूः। अपामार्गः।करंजी च॥कृष्णा। पिप्पली।कालाजाजी।नीली च॥क्षीरिणी।दुग्धिका काकोली। श्वेतसारिवा च॥ मधुपर्णी। गुडूची। गंभारी नीली च॥ मंडूकपर्णः। स्योनाकः। मंजिष्ठा। ब्रह्ममंडूकी च॥ श्रीपर्णी। गंभारी। गणकारिका। कट्फलश्च॥ अमृता।गुडूची। हरीत-की। धात्री च॥अनंता।दुरालभा।नीलदूर्वा।लांगली च॥रिष्य-प्रोक्ता।अतिबला महाशतावरी। कपिकच्छूश्च॥ कृष्णवृंता। पाटला। गंभारी। माषपर्णी च॥ जीवंती।गुडूची।शाकभेदः। वंदा च॥लता।सारिवा।प्रियगुः।ज्योतिष्मती च॥ समुद्रान्ता। दुरालभा।कर्पासी।स्पृक्का च॥हैमवती।हरीतकी।श्वेतवचा।पीत दुग्धसेहुंडः॥अव्यथा।हरीतकी। महाश्रावणी।पद्मचारिणी च॥ षट्ग्रंथा।वचा।गंधपला। शीकरंजी च॥ ताम्रपुष्पी। धातकी। पाटला।वरदा च॥वरदा। अश्वगंधा। सुवर्चला। वाराही च। इक्षुगंधा। काशः।कोकिलाक्षः।क्षीरविदारी च॥कालस्कंदः।

---

१ हुरहुल। २ गेठी।

तमालः।तिंदुकः। कालखदिरश्च॥महौषधम् ॥ शुंठी।रसोनो। विषं च॥मधु क्षौद्रम्।पुष्परसः।मद्यं च॥कपीतनः। आम्रातकः। शिरीषः। गर्दभांडश्च॥मदनः।पिंडीतकः।धत्तूरः। सिक्थकं च॥ शतपर्वा। वंशः। दूर्वा। वचा च॥ सहस्रवेधी। अम्लवेतसः॥ मृगमदः। हिंगु च॥ ताम्रपुष्पी। धातकी। पाटला। श्यामा। त्रिवृच्च॥ सदापुष्पः। श्वेतार्कः। रक्तार्कः। कुंदश्च॥ सुरभिः। शल्लकी। मुरैलवालुकं च॥ लक्ष्मीः। ऋद्धिर्वृद्धिः। शमी च॥ कालानुसार्य्यम्।कालीयकम्।तगरम्।शैलेयं च॥चांपेयः।चंपकः॥ नागकेसरः। पद्मकेसरश्च॥नादेयी। गणकारिका। जलजंबूः। जलवेतसश्च॥पाक्यम्। विडम्। सौवर्चलम्। यवक्षारश्च॥विशल्या। लांगली। गुडूची।लघुदंती च॥ इंद्रद्रुः। ककुभः। देवदारुः। कुटजश्च॥ काश्मीरम्। कुंकुमम्। पुष्करमूलम् (स्त्री) गंभारी च॥ गुंद्रः। पटेरकः। मुंजः।शरश्च॥ गुंद्रा।प्रियंगुः।फलिनी भद्रमुस्तकश्च॥ चुक्रम्। शुक्तकम्।अम्लवेतसम्। वृक्षाम्लः॥ पारिभद्रः। निंबः। पारिजातः देवदारु च॥ पीतदारु। हरिद्रा देवदारु। सरलश्च॥ वीरः। ककुभः। वीरणम् काकोली च॥ वीरतरुः। ककुभावीरणम्। शरश्च॥ मयूरः। अपामार्गः। अजमोदा। तुत्थं च॥रक्तसारः। रक्तचंदनम्। पतंगः।खदिरः। बदरा। सुवर्चला। अश्वगंधा। वाराही च॥ वशिरः। रक्तापामार्गः। गजापिप्पली। समुद्रलवणं च॥ सौवीरम्। अंजनभेदः। बदरम् संधानभेदश्च॥ वंजुलः। अशोकः। वेतसः। तिनिशश्च॥ शिला। मनःशिला। शिलाजतु।

---

१ निडोंडी पीलणवृक्षे। अयं पत्रकांडफलादिभिरश्वत्थाकारः।

गैरिकं च ॥ सोमवल्ली । वाकुची । गुडूची । ब्राह्मी च ॥ अक्षीवः । सौभांजनः । महानिंबः । समुद्रलवणं च ॥ धामार्गवः । रक्तापामार्गः । राजकोशातकी । महाकोशातकी च ॥ दुःस्पर्शः । यवासः । कंटकारी । कपिकच्छुश्च ॥ पलाशः । किंशुकः । गंधपलाशीपत्रं च ॥ कालमेषी । मंजिष्ठा । वाकुची । श्यामा । त्रिवृच्च ॥ पलंकषः । गुग्गुलुर्गोक्षुरः । लाक्षा च ॥ मधुरसा । द्राक्षा । मूर्वा । गंभारी च ॥ रसा । रासना । शल्लकी । पाठा च ॥ श्रेयसी । हरीतकी । रास्ना । गजपिप्पली च ॥ लोहम् । अश्वः । कांस्यमगुरु च ॥ सहा । मुद्गपर्णी । बलाभेदः । शतपत्री ॥ सुवहा । रास्ना । नाकुली । सिंदुवारः ॥ कठिल्लकः । कारवेल्लम् । रक्तपुनर्नवा । कृष्णवर्वरी च ॥ मधूलिका । मूर्वा । यष्टी मधूकश्च ॥ वितुन्नकम्। धान्यकम् । तुत्थकम् । गोनर्दश्च ॥ देवीस्पृक्का । मूर्वा कर्कोटी च ॥ वसुकः । शिवमल्ली । श्वेतार्कः रोमकं च ॥ गंडीरः । शाकविशेषः । मंजिष्ठा । गंडदूर्वा च ॥ लांगली कालिहारी । जलपिप्पली । नारिकेलश्च ॥ पिच्छिला । शिंशिपा । शाल्मलिः । भूतवृक्षश्च ॥ महासहा । माषपर्णी । अम्लातकः । कुब्जकश्च ॥ चंद्रिका । मेथी । चंद्रशूरः । श्वेतकंटकारी च ॥

चतुरर्थकम् ।

श्वेतपुष्पा । इंद्रवारुणी । सिंदुवारः। श्वेतार्कः । सैरेयकश्च॥ कारवी । पृथ्वीका । शतपुष्पा। कालाजाजी। अजमोदा च॥ अंबष्ठपाठा । चांगेरी । माचिका । यूथिका च ॥

---

१ ककही, कंगी ॥ २ सेवतीगुलाब ॥ ३ गडिनी ।

वह्वर्थम् ।

अक्षशब्दः स्मृतोऽष्टासु सौवर्चलविभीतके । कर्षपद्माक्षरुद्राक्षशकटेंद्रियपाशके॥१॥काकाख्यः काकमाची च काकोली काकणंतिका । काकजंघा काकनासा काकोदुंबरिकापि च॥ २ ॥सप्तस्वर्थेषु कथितः काकशब्दो विचक्षणैः। सर्पद्विरदमेषेषु सीसके नागकेसरे । नागवल्यां नागदंत्यां नागशब्दश्च युज्यते॥३॥ मांसे द्रवे चेक्षुरसे पारदे मधुरादिषु। बोले रागे विषे नीरे रसो नवसु वर्तते ॥ ४ ॥

वैद्यानामुपकाराय निघंटोरुपरि कृता ।
टिप्पणी वैद्यराजेन गंगापूर्वकविष्णुना ।

संव्वत् १९६० माघ शुक्ल ५

इतिभावप्रकाशनिघंटुः समाप्तः ।

परिशिष्टनामानि ।

संस्कृत	भाषा	संस्कृत	भाषा
अल्लुकं ।	आलू बुखारा	उरगः ।	सीसा
अण्फलं ।	बीहफल	उत्कटः ।	ऊटकटारा
अवरोहकः ।	असगंध	उष्णपत्रिका ।	चाह
अंगभेदनं ।	कुलत्थी	ऋषिका ।	कसई
अर्द्धचंद्रिका ।	कालीनसोथ	ऐशमूलं ।	ईसरमूल
अग्निकः ।	कलहारी अजमोद	कर्णपूरः ।	सिरस अशोक नीलोत्पल
अहिपुष्पं ।	नागकेसर	कपोतवंका ।	बुलबुल
अमृतफलं ।	नासपाती	कंदपालिका ।	आकंद सूरण
अवाक्पुष्पी ।	मीठी सौंफ	कटंभरा ।	भद्राणिका
अश्वकर्णः ।	ईसबगोल	कंचुकी ।	क्षीरिवृक्ष
अजगंधा ।	छोटीजवैन	ककुंदरमेचकं ।	गोरक्षचाकुल्या
आर्जं ।	थूहरदूध	कांतपाषाणः ।	चुंबक
आरुकं ।	आडू	काछी ।	सौराष्ट्रिका
आल्ला ।	धनिआ	कालपर्णी ।	कालीनिसोत
आखुपाषाणं ।	संखिया	काकांडीला ।	(सेम) कोलशिंबिः
इत्कटा ।	सूक्ष्म पत्रिका दीर्घ लोहित यष्टिका धान्यविशेष वा ओकण्ड ॥	कालमारिषः ।	कालीसील
		कालावकरकः ।	कालावाडा
ईश्वरं ।	पित्तल	कीलालः ।	सत्तू की रस
ईषद्गोलं ।	ईसबगोल	कुलिंजरं ।	चिरपोटी
उपोदिका ।	पुदीना	कुची ।	कुचाई बीज

संस्कृत	भाषा	संस्कृत	भाषा
कुलिशं ।	काउज । वं	गोधावती ।	गोहालिया शोणाल
कुरंगनी ।	मुद्गपर्णी		
कुंभी ।	यवासवाका फल	चतुरंगुलं ।	अमलतास की जड
कुंदरुः ।	खोटी मस्तकी	चर्मचटा ।	अजिनपत्रा
कुंदरुः ।	तीक्ष्णगंधः	चक्राकः ।	शलगम
कूटरवाहिनी ।	सफेदनिवी	चंडालिनी ।	लसुन, उल
कृष्णवीजं ।	कालादाना	चंडी ।	महिषी, भैंस
कृमिघ्नी ।	तमाकू	चंडाली ।	उमा औषधिभेद
कोटिवल्कलं ।	गुडत्वक्	चंद्रलेखा ।	वाकुची
खगः ।	सोना माक्खी	चावटी ।	कुंभाडु वा ब्रह्मी
खंडितकर्ण ।	खारकोल कनफोडा	चांवषा ।	चौंपकला मूल
गेरुत्वान ।	सोनामाखी	चेलकं ।	गुवाकत्वक्
गजचिर्भटं ।	कचरीचिन्भड	जतुका ।	चामचिरिया
गंधपर्णी ।	भडंगी	जलजा ।	मधुयष्टी
गंगापुत्रः ।	गंगाराईल वं०	जामातृ ।	सूर्य्यावर्त
गंडीरः ।	शमटशाक	जीवंती ।	दौडीतिगुर्जरदेशे
गंगावती ।	वटगंधारी	जुंगा ।	वृद्धदारुक
गारुडी ।	गरुड चूडामणि	जूर्णः ।	ज्वारधान्य
गांगेयी ।	मुस्ता, मुथरां	ज्वालामरीचं ।	लालमिर्च
गिलोड्यं ।	गल्होट	जोंगकं ।	अगुर
ग्रीष्म सुंदरं ।	गीमाशाक	टंगः ।	राजआम्र
गुंठः ।	वृंततृण	ढिंढिणिका ।	डिढैन
गुप्तस्नेहः ।	अंकोल	तरुगं ।	एरंड
		तरंगः ।	मैनफल
		ताम्रवल्ली	चित्रकूट

१ गरुडो माक्षिका पक्षी वृहद्वर्ण स्मृताः इति नाम मंजरीकारः ।

संस्कृत	भाषा	संस्कृत	भाषा
ताम्रकूटं ।	तमाकू	नक्तम् ।	करंजबीज
तिक्तं ।	चिरायता	नागविन्ना ।	नागदंती
तिक्ता ।	कौड	नागार्जुनी ।	दूधी
तिक्तका ।	हिंगोट	नांगा ।	वल्मीकमृत्तिका
दंडोत्पलं ।	श्वेतवला	निकुंभः ।	क्षुद्रदंती
दारमूषा ।	दारूमूसी वा अतीस	निर्विघ्नी ।	ब्रह्मचारिणी
		पयस्या ।	क्षीरकाकोली
द्विवृंतः ।	मेंहदी	प्रत्यक्पुष्पी ।	अपामार्ग अपुठकंडा
दीर्घमूला ।	श्यामलता		
दीर्घपिटपी ।	लांगली	पंचतृण ।	कुश, काश, शालि, शर, इक्षु,
दूरमूलं ।	जुवाह		
देवदत्तः ।	निंब	प्रग्रहः ।	शोणालुफल
देवपुष्पी ।	देवहुली	पाषाणजित् ।	कुलत्थी
देवदानी ।	घीयातोरी	पातालनृपतिः ।	सीसा
धन्वजं ।	जांगल मांसरस	पार्वती ।	वेंगामृत्तिका
धवला ।	श्वेतापराजिता	पाशी ।	वरणा
धन्वंतरीवीजं ।	ढांगढहेला	पिंढारकम् ।	पेढरी
धावनी ।	चाकुल्या	पुलहः ।	मुरदासंग
ध्यामकम् ।	गंधतृण	पुंष्पकम् ।	रसौंत
धुनकः ।	लोबान	पुरुषः ।	गुग्गुल
धूम्रपत्रिका ।	तमाकू	पेरुकम् ।	अमरूद
नदीजम् ।	सेंधानमक		
नखरंजकः ।	मेंहदी		
नवनीतम् ।	लाडयागंधक वं०		

(१)सौराष्ट्री पार्वती मृत्स्ना तथा कांबोजपर्पटीति शब्दाप्रकाशा ।

(२) शोभांजनं च सौवीरं तांतिकं पुष्पकं तथा ।

संस्कृत	भाषा	संस्कृत	भाषा
प्रोष्टिका ।	मच्छी	मायाफलम् ।	माजू
फणी ।	सुफेद चंदन	मारिषा ।	माठा
फणिज्जकः ।	पन्हास	मालुकापत्रम् ।	अश्मंतक
बटपत्री ।	पाषाणभेद	माद्री ।	अतीस
बहुपुत्रा ।	(जवांह) यवासा	मूलबीरम् ।	पोहकरमूल
बालपत्रम् ।	पठानीलोध	मोरटः ।	अंकोट
बालांघ्रिः ।	झाणा	यज्ञनेता ।	सोमलता
बृहत्पत्रम् ।	हस्तिकंद	यमचिंचा ।	कच्चीइंवली
बृश्चीवम् ।	सुफेद इटसिट	रक्तबीजा ।	मूंगफली
बृश्चकाली ।	विछुआबूटी	रात्रिहासकः ।	हारशिंगार
बोटा ।	अलंबुषा	राजावर्त्त ।	गोविंदमणि
बोलम् ।	फुलसत्व	राजा ।	राजपलांडु
भद्रः ।	देवदारु	राक्षसी ।	राई, सुरा
भव्यम् ।	जीवंती कर्मरंग	रुद्रजटा ।	लट्टूपरि
भद्रोत्कटा ।	भादांवतक	[१]रुधिरम् ।	गेरी, तांवा
भारवाहिनी ।	(वसमा) नीलिनी	रेणुका ।	नेगवीज
भूचणका ।	मूँगफली	रोहिणी ।	वडीअरणी
भूनागः ।	गंडोआ	लक्ष्मी ।	लोहा
भूषणम् ।	हडताल	[२]वसुः ।	गंधक
भूलता ।	चुंचत्वक्	वराहक्रांता ।	लज्जालु
मयूरजंघा ।	अरलु	वल्लूरम् ।	सूखामांस
महावृक्षम् ।	थोहर	वण्डांगतानः ।	शांता
महाराष्ट्री ।	मरहटी		
महापुरुषदेवता ।	शतावर		

(१) रक्तं रविस्तु म्लेच्छाख्यमिति विश्वः ।

(२) दोलाथ गंधपाषाणः पामारिर्गंधको वसुरिति ॥

संस्कृत	भाषा	संस्कृत	भाषा
वसिरः ।	श्वेतबला	शूकरी ।	वृद्धदारक
वराहः ।	मुथरां	षडंगः	भखडा
वसुकः ।	सांभरनमक	सप्तला ।	सातला
वज्रवल्ली ।	हाडजोड	सर्जकः ।	लोबान
वज्रकर्ण } शकरकंदी		समनृपति ।	सुहांजना
वज्रिकंदः }		सीताफलम् ।	सरीफा
वाष्पिका ।	हिंगुपत्री चौलाई	सुदर्शना ।	तानीवेल
वेत्राग्रम् ।	वंशसदशाग्रं	सुरंगी ।	लालसुहांजना
शकारिः ।	कचनार	सुरभिः ।	कुंदरु
शनकंदः ।	चर्मकषाकंद	स्पृक् ।	पृक्का
शतसुता ।	शतावरी	स्नेहवृक्षम् ।	देवारु
शाकं ।	पटोल	स्थविरः ।	शैलेयं
शालिच ।	शमठशाक	स्वरसः ।	पन्हासः
शार्ङ्गेष्टा ।	करंजी	सौगंधिकम् ।	अनन्तमूल
श्यामा ।	नीलिनी	हरिः[1] ।	गुग्गुलु
शावरकंदः ।	लसुन	हंसपादी ।	थानकुनी
श्यामलम् ।	रोहिष	हस्वांगः ।	जीवक
शिखंडिनी ।	जूही रतियां	हिंसा ।	गुडकाङायि हींस
शीतपाकी ।	अतिबला	हिंगुपत्रा ।	काकादनी
श्याह्वः ।	सरलस्राव	हिंगुपुत्री ।	हिंगुवती वाबांफली
शुक्तिः	झिनाजि	त्र्यष्टिका ।	राई
श्रीवासः ।	देवदारु	त्रायमाणा ।	वालोयालता वा देवबला
शुकमाता ।	भडंगी	त्रिकत्रयं ।	त्रिकटु, त्रिफला त्रिमद
शुंठकम् ।	सूखीमूली	त्रिपादी ।	कीटमारिका
शूराह्वा ।	क्षीरकाकोली	त्रुटिः ।	छोटी इलाची
शृगालविन्ना ।	क्रोष्टुविन्ना		

१ हरिर्गुग्गुलुर्हरिरिंदः

परिशिष्टभाषानामानि ।

भाषा	संस्कृत	भाषा	संस्कृत
अम्लबेद ।	अम्लवेतसम्	आंधीझाड ।	अपामार्गः
अग्निझाड ।	दीर्घजीरकम्	इंद्राणी ।	इंद्रवारुणी
अरहड ।	आढकी	उदपर्णी ।	मापपर्णी
असाल्यूं ।	चंद्रशूरम्	उमजिनी ।	ज्योतिष्मती
अतारकीदवा ।	अंजरूद	ऊंदर ।	मूषिकम्
	गोश्तखोरा	कलूंजी ।	उपकुंची
अरंडोली ।	एरंडबीजम्	कठवर ।	कपित्थम्
अंधाहुली ।	अवाक्पुष्पी	कणगूगली ।	गुग्गलकणा
अंगेथु ।	गणकारिका	कटूंवर कठोडी ।	कपित्थमज्जा
अंरप ।	भिषग्माता	कवीटफल ।	कपित्थफलम्
अंकोट ।	दीर्घकालः	कपूर चीनिया ।	पक्वकर्पूरम्
अंजरूत ।	निर्य्यासविशेषः	कटैली ।	कंटकारी
अंतर ।	पुष्पसत्त्वम्	कचूर ।	कर्चूरम्
आरणे ।	वन्यकरीषम्	कछकप ।	कपिकच्छुः
आमी हल्दी ।	आम्रगंधी हरिद्रा	कधैया ।	काकमाची
आर्दो ।	आर्द्रिका	कनगच ।	करंजम्
आकफनपान ।	अर्कपत्रम्	कल्हारी ।	लांगली
	मूलम्	कडाका ।	लंघनम्
आसी ।	आसवम्	करेले ।	कारवल्लीलता
आमळीकाचिया ।	अम्लिका बीज	कपास्या ।	कर्पासीबीजम्
		कवारपाठा ।	कुमारी

१ गलगल । २ अतर ।

भाषा	संस्कृत
कचलून ।	काचलवणम्
कहुवावकल ।	धववल्कलम्
कस्स ।	वीरणमूलम्
कसोंदी ।	कासमर्दम्
कोलो ।	रक्तमृत्तिका
कागण ।	ज्योतिष्मती
कालाअभ्रक ।	कृष्णाभ्रम्
कांचली ।	सर्पत्वक्
किरमाल ।	आरग्वधः
किसोह्या ।	पक्षिविशेषः
किरायता ।	कैरातः
कीस ।	पीयूषम्
कुमेरपाठ ।	पाटली
कुलंजन ।	तांबूलीजटा
कुचिला ।	विषतिंदुकः
कुंदरुः ।	मुकुंदः
कूठ ।	कुष्टम्
कूट ।	शाल्मली
कूचकी फली ।	कपिकच्छुः
केली माहिली ।	कदलीसार
केसूलोंका चून ।	पलाशपुष्पम्
कोअल ।	विष्णुक्रांता
कंडीर ।	करवीरः
खस ।	उशीरम्

भाषा	संस्कृत
खपरिया ।	खर्परम्
खींप ।	प्रसारिणी
गवार ।	कुमारी
गजपिप्पली ।	बृहत्पिप्पली
गडूंबा ।	इंद्रवारुणी
गिलवे ।	निंबोऽमृता च
गुडहुल (गुलतुर्रा) ।	जपाकुसुमम्
गोलकाकडी ।	कुलकम्
गंगेरणा ।	नागबला
गुलशकरी ।	नागबला
चव ।	चव्यम्
चकवड ।	चक्रमर्दः
चंदलेई ।	तंडुलीयः
चारोली ।	उपकुंची
चिचरीविहना ।	अपामार्गः
चिरपोटन ।	काकमाची
चिरमटी ।	गुंजा
चीलवो ।	वास्तुकम्
चूक ।	चांगेरी
छड ।	शिलापुष्पम्
छीला ।	चित्रकं, पलाशम्
जलकुंभी ।	वारिपर्णी
जाल ।	पीलुः
जीयोपोता ।	पुत्रजीवः

भाषा	संस्कृत	भाषा	संस्कृत
झाऊ।	झावुकः	नागकेसर।	नागपुष्पम्
टेरा।	अंकोलम्	नागदौण।	नागदमनी
डासरया (डांसरा)।	तिंतिडीकम्	नाद्‌वाण।	कर्पासी
डाभ।	दर्भम्	नागरवेल।	तांबूलवल्ली
ढोडां।	खसफलम्	निसोत।	त्रिवृत्
तस्तुंबा।	इंद्रवारुणी	निर्मली।	कतकम्
ताल।	हरितालम्	नीलटांच।	गरुडः
तिलकंटी।	विष्णुक्रांता	नेगड।	निर्गुंडी
तिलवाणी।	सूर्य्यभक्ता	पद्माक।	पद्मकाष्ठम्
तिंदुकी।	तिंदुवृक्षः	पत्रज।	तमालपत्रम्
तृण।	तुणि	पतंग।	कुचन्दनम्
तेवरुली।	त्रिवृत	पंचांगुल।	एरंडः
तोरु।	कोशातकी	पठानीलोध्र।	श्वेतलोध्रम्
त्रायमाणा सोमलता वहुला	देववला	पत्थरफोडी।	पाषाणभेदः
		पाडल।	पाटल
		फटकडी।	स्फुटिक
दडगल।	द्रोणपुष्पी	फूलफिरंग।	प्रियंगु
दात्यूणी।	लघुदंती	फरहिंद।	पारिभद्र
धमासा।	धन्वयासकः	वाधापरो।	वृद्धदारुक
धव।	धवः	वंदा।	त्र
धनवहेर।	राजवृक्षः	वढहल।	लिकुच
धोली गूंद।	धातकीनिर्यासः	वमनेटी	भार्गी
नरसल।	पोटगलः	वावची।	अवल्गुज
नरकचूर।	वैद्यमुख्यः	वांझककोटी।	वंध्याककोट
नरव्या।	नखी	विजयसार।	वीजक

भाषा	संस्कृत	भाषा	संस्कृत
विसखपरा ।	रक्तपुनर्नवा	मोचरस ।	शाल्मलीनिर्यासः
विजौरा (तुरंज) ।	अम्लवेतसम्	मोरसिखा ।	मयूरशिखा
वेद ।	वेतसम्	रास्ना ।	एलापर्णी
बोल ।	गंधरसम्	राल ।	शालनिर्यासः
बौली ।	बंभूलः	रांग ।	त्रपु
बौलसिरी ।	बकुलः	रुदंती ।	रुद्रवंती
भरहंडा ।	कंटकारी	रेवदचीनी ।	पीतकाष्ठम्
मसूर ।	मसूरिका	रोहीस ।	गंधतृणम्
महलोठी ।	मधुयष्टी	लटजीरा ।	अपामार्गः
मटर ।	कलायः	लाजेरी ।	लज्जालुः
महदी ।	नखरंजकम्	लख ।	तित्तिरिः
मगरेला ।	उपकुंची	वरी ।	शतावरी
मंडुआ ।	निर्गुंडी	सर्पाक्षी ।	नाकुली
मंडूर ।	लोहकिट्टम्	सहदेई ।	महाबला
मालकंगुनी ।	ज्योतिष्मती	सतोन्यूं ।	सप्तपर्णी
मुनक्का ।	द्राक्षा	सरकडा ।	मुंजः
माजू ।	मायाफलम्	सरपुंखा ।	प्लीहशत्रुः
मुर्वा ।	मधूलिका	सरिव ।	शालपर्णी
मुर्दासंग ।	कंकुष्ठम्	सरवन	माषपर्णी
मुचकुंद ।	क्षत्रवृक्षः	संखाहुली ।	शंखपुष्पी
मेवड ।	निर्गुंडी	सामर ।	शाकंभरीयम्
मेंडल ।	मदनफलम्	सामरा ।	न्यंकुःमृगः
मोरचूत ।	तुत्थकम्	सांठा ।	इक्षुः
मोठ ।	मकुष्ठकम्	साखोट ।	शाखोटम्

भाषा	संस्कृत	भाषा	संस्कृत
सिरस	शिरीषम्	सोमल ।	आखुपाषाणः
सिखरणी ।	दधिशर्करा	संभालू ।	निर्गुंडी
सिंघाडा ।	जलफलम्	सांटी ।	पुनर्नवा
सरीफा ।	सीताफलम्	सोंचरलून ।	सौवर्चलम्
सिण ।	षणः	हरफारेवडी ।	लवली
सिंगी मोहरा ।	शृंगकम्	हारशृंगार ।	रात्रिहासकः
सींधा ।	सैंधवम्	हुलहुल ।	सुवर्चला सूर्य्यभक्तः
सस्या ।	शशः	हिंगोरा ।	इंगुदी
सुफेददोब । .	श्वेतदूर्वा	हिंगुल ।	हिंगुलः
श्वेतसर्ज ।	धुनकः	हिंगोटा ।	इंगुदी
सुफेदबावची ।	श्वेतवर्वरी	निउजे ।	निकोचकम्
सुपेदकंडी ।	श्वेतकरवीरः	सरदा ।	सदाफलम्
सुफेद खैरसार ।	शुद्धखादिरसारः	गंगेरुआ ।	गांगेरुकीफलम्

इति परिशिष्टभाषानामानि समाप्तानि ।

पुस्तक मिलनेका पता–

भानुदत्त गुरुदत्त,
श्रीकृष्ण पुस्तकालय सैद मीठाबाजार.
लाहोर.

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस,
बंबई.

विक्रय्य वैद्यक-ग्रन्थाः ।

नाम.	की. रु. आ.
अष्टाङ्गहृदय--(वाग्भट) मूल मोटा अक्षर वाग्भट विरचित.	२--८
अष्टाङ्गहृदय--(वाग्भट) वाग्भटविरचित तथा पं० रविदत्तकृत भाषाटीकासहित ।	०--८
अमृतसागर--हिन्दीभाषामें--बिना गुरु छोटे नगरमें दवाखाना करसक्ते हैं । इसमें सर्व रोगोंका वर्णन और यत्नलिखेगयेहैं । ग्लेज कागज.....	२--४
" तथा रफ कागज.	२--०
अर्कप्रकाश--(रावणकृत) भाषाटीकासमेत । इसमें--नानाप्रकारके यन्त्रोंसे औषधियोंका अर्क खींचना और गुणवर्णन भलीप्रकार कियागयाहै. ग्लेज. कागज.	१--०
" तथा रफ कागज	०१४
आयुर्वेदचिन्तामणि--भाषाटीकासहित । पं० बलदेवप्रसादमिश्र संगृहीत.	१--१२
आरोग्यशिक्षा--पं०. मुरलीधरशर्मा राजवैद्यसंकलित (भाषामें)	०--६
इलाजुलगुरबा--नूतन मथुराका छपाहै	१--४
करिकल्पलता--छन्दोबद्ध--हिन्दीभाषामें । केशवसिंहजी तअल्लुकेदार रचित । इसमें--हाथियोंके शुभाशुभ लक्षण व उनके रोगनाशार्थ अनेक औषधिविधान चित्रोंसमेत वर्णितहै.	१--०
कामरत्न--योगेश्वर नित्यनाथप्रणीत और विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्रकृत भाषाटीकासमेत ।	१--१२
चर्याचन्द्रोदय--भाषाटीकासमेत । इसमें--व्यंजन बनानेकी क्रिया लिखीहै.	१--८
चक्रदत्त--भाषाटीकासहित । इसमें और चिकित्साओंके अलावा तैल साधनादि प्रकार बहुत अच्छा लिखाहै	३--०